भाग्यवती
पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी

भाग्यवती

(उपन्यास)

भाग्यवती

लेखक

श्रद्धाराम फिल्लौरी

संपादक

डॉ. राजेन्द्र टोकी

भारत पुस्तक भण्डार
उत्कृष्ट साहित्य में आग्रणी

प्रथम संस्करण 2016

BHAGYAWATI

by Pandit Shrdharam Phillori

Publisher: **Bharat Pustak Bhandar**

Head Office: E-1/265A, 4th Slope, Sonia Vihar, North East Delhi, New Delhi-110090
Branch Office: Una-Amb Road, Pakkoparoh,Tehsil- Amb, Dist.- Una, (H. P.), Pin- 177211
email: bharatpustak.bhandar@gmail.com
I.S.B.N.: 978-93-84754-17-4 (Hardcover)
Price: Rs.500.00

संस्करण: चौथा संस्करण, 2023
शब्द संयोजक: जे. के. लेजर टाइप सेटिंग, दिल्ली
आवरण: आराध्या ऑर्ट वर्क, दिल्ली
मुद्रक: दीपक ऑफसेट, दिल्ली

भाग्यवती

(उपन्यास)

भूमिका

बहुत दिनों से इच्छा थी कि कोई ऐसी पोथी हिंदी भाषा में लिखूँ कि जिसके पढ़ने से भारतखंड की स्त्रियों को गृहस्थ धर्म की शिक्षा प्रापत हो क्योंकि यद्यपि कई स्त्रियाँ कुछ पढ़ी-लिखी तो होती हैं परन्तु सदा अपने ही घर में बैठे रहने के कारण उनको देश-विदेश की बोलचाल और अन्य लोगों से वरत व्यवहार की पूरी बुद्धि नहीं होती। और कई बार ऐसा भी देखने में आया कि जब कभी उनको विदेश में जाना पड़ा तो अपना गहना-कपड़ा, बरतन आदि पदार्थ खो बैठीं और घर में बैठी भी किसी छली स्त्री-पुरुष के बहकाने से अपने हाथ से अपने घर का नाश कर लिया। फिर यह भी देखा जाता है कि बहुत स्त्रियाँ अपनी देवरानी-जेठानियों से आठों पहर लड़ाई रखती और सासु-सुसरे और अपने भर्ता का निरादर करने लग जाती हैं। कई स्त्रियों को अपने घर के हानि-लाभ की ओर कुछ ध्यान न होने के कारण घर का सारा ठाठ बिगाड़ लेतीं और कइयों के घरों की नौकर-चाकर लूट-लूट खाते और उनको संयम और यत्न से कुछ काम नहीं होता। कई स्त्रियाँ विपत काल में उदास हो के अपनी लाज-काज को बिगाड़ लेतीं और अयोग्य और अनुचित कामों से अपना पेट पालने लग जाती हैं। और कई विद्या से हीन होने के कारण सारी आयु चक्की और चरखा घुमाने में समाप्त कर लेती हैं। इस कारण मैंने यह ग्रंथ सुगम हिंदी भाषा में लिख के नाम इसका भाग्यवती रखा। इस ग्रंथ में मैने एक कल्पित कहानी ऐसी सरस रीति से लिखी है कि जिसके पढ़ने से पढ़नेहारे का मन समाप्ति पर पहुँचाए बिना तृप्त न होवे। और जो-जो व्यहवार

ऊपर गिने उन सबमें शिक्षा प्राप्त होती रहे। इस सारे ग्रंथ में नाम तो चाहे कई स्त्री पुरुषों के आते हैं परन्तु मुख्य प्रसंग एक भाग्यवती नाम स्त्री का है जो काशी-नगर में पंडित उमादत्त के घर में उत्पन्न हुई लिखी है। चाहे प्रसंग तो इसमें काशी-वासी लोगों का है परन्तु वहाँ की बोली पूरबी और कुछ रूखी-सी होने के कारण इस ग्रंथ में वह हिंदी भाषा लिखी है कि जो दिल्ली और आगरा, सहारनपुर, अम्बाला के इर्दगिर्द के हिंदू लोगों में बोली जाती है और पंजाब के स्त्री-पुरुषों को भी समझनी कठिन नहीं है। इस ग्रंथ में जिस देश और जिस भाँति के स्त्री पुरुषों की बातचीत हुई है वह उनकी बोली और ढब से लिखी है अर्थात् पूर्वी पंजाबी पढ़ा-अनपढ़ा स्त्री और पुरुष गौण और मुख्य जहाँ पर जो कोई जैसे बोला उसी की बोली भरी हुई है। मैं निश्चय करता हूँ कि इस ग्रंथ के पढ़ने से लोक-परलोक विहित-अविहित योग्य-अयोग्य सर्व प्रकार के व्यवहारों का ज्ञान हो जाएगा। और चाहे यह अनहुई और कल्पित कहानी और अनुत्पन्न पुरुषों के उपदेश हैं परन्तु पढ़नेहार को सब ऐसे प्रतीत होंगे कि जैसे प्रत्यक्ष खड़े होते और सामने बैठे शिक्षा करते हैं।

—पंडित श्रद्धाराम

भाग्यवती

काशी नगर में पंडित उमादत्त जी के घर में एक पुत्र उत्पन्न हुआ कि जिसका नाम 'लालमणि' और एक पुत्री हुई कि जिसका नाम ''भाग्यवती' रखा। यह लालमणि चाहे छोटी-सी अवस्था में ही कुछ व्याकरण शास्त्र पढ़ चुका और संस्कृत बोलने की परीक्षा देकर एक पाठशाला में पंद्रह रुपए मासिक पाता था परन्तु सोलह वर्ष की आयु पर्यन्त इसका विवाह नहीं हुआ था। चाहे काशी के भीतर और बाहर से कई एक पंडितों ने लालमणि का गुण यौवन और प्रतिष्ठा सुन के अपनी कन्याओं का संबंध करना चाहा परन्तु उसके पिता की यही अच्छा थी कि मैं लालमणि का विवाह अठारह वर्ष के पीछे करूँगा।

एक दिन लालमणि की माता ने अपने स्वामी से कहा महाराज लड़का अब सोलह वर्ष का हुआ और अपने हाथों से खाने-कमाने लग गया आप इसके विवाह का यत्न क्यों नहीं करते? देखो हमारे वंश के और सब बालक कोई नौ वर्ष का और कोई दस वर्ष का ब्याहा गया इनको देख के हमारे लालमणि के मन में अपने कुँआरापन की क्या लज्जा नहीं होगी?

कल मैं गंगा स्नान को गई, एक स्त्री मुझे आपकी दासी समझ के पूछने लगी, 'पंडितानी जी! तुम्हारे पंडित जी तो बड़े प्रतिष्ठित और सब राजा बाबू उनकी मानता करते और काशी राज की पाठशाला में सौ रुपए महीना पाते सुने जाते हैं। इसका क्या कारण कि उनका बेटा सोलह वर्ष का हुआ आज लो अभी मंगनी भी नहीं उठी। भाग्यवती से पूछिए, मैंने

उस समय कैसी लज्जा उठाई। पहले तो मैंने कुछ उत्तर न दिया, पर फिर जब सुना कि यह सेठ लेखराज जी की लुगाई है कुछ उत्तर न दूँगी तो अपने मन में कुछ और संशय खड़ा कर लेगी तो कहा सेठानी जी! तुम सदा से जानती हो कि काशी में हमारा कुल बड़ा ऊँचा है, तुम यजमानों के नाम से जन्म पीछे लेते और सगाइयां पहले ही आई धरी रहती हैं, पर क्या करूँ हमारे पंडित जी को यह हठ हो रहा है कि हम अठारह वर्ष से पहले बेटा नहीं ब्याहेंगे। थोड़े ही दिन हुए कि प्रयाग से पंडित गोपाल जी की कन्या का संबंध आया था और परसों तुम्हारी गली में से राधा कांत मिश्र के यहाँ का संदेश पहुँचा था। फिर एक दिन लोकनाथ शास्त्री ने भी सम्बन्ध की बात चलाई थी कि (जो सरकारी पाठशाला में प्रधान पंडित हैं) पर मैं इस बात का क्या यत्न करूँ कि हमारे पंडित जी अभी लड़के का ब्याह करना चाहते नहीं। वह सेठानी तो चुप हो गई पर मुझ से नित्य लुगाइयाँ इस बात की पूछ-ताछ रखती हैं, इस कारण अब आप लालमणि के विवाह का उद्यम शीघ्र कीजिये।

पंडित उमादत्त बोले तुम स्त्रियों को इस बात की बुद्धि नहीं कि छोटी अवस्था में पुत्र का विवाह करना श्रेष्ठ नहीं होता। सुनो, विवाह उस समय करना चाहिए कि जब बालक आप ही स्त्री का भूखा हो! जिसका छोटी अवस्था में विवाह हो जाये उसका स्त्री में अत्यन्त प्रेम कभी नहीं हो सकता। तुम देखती हो कि मिश्र मोतीराम ने नौ वर्ष का पुत्र ब्याहा और लाला बलवन्त सिंह का बेटा तुम्हारे सामने ग्याहर वर्ष का ब्याहा गया थ सो कहो तो अब वे दोनों कैसे सुखी हैं? उनकी स्त्रियां तो अलग रोतीं और उनके माता-पिता अलग झींकते रहते हैं क्योंकि वे दोनों लड़के अब महीना-महीना भर अपने घर नहीं घुसते। इसका यही कारण है कि छोटी अवस्था में विवाह हो जाने के कारण अपनी स्त्रियों में उनका पहले ही से प्रेम नहीं हुआ।

पंडितानी बोली, अच्छा महाराज तुम जानो, पर भाग्यवती की मंगनी तो कहीं शीघ्र भेज दीजिये। क्योंकि यह अब नौ वर्ष की हुई और इसकी सहेलियाँ सब ब्याही-बरी हुई दिखाई देती हैं। स्वामी! इसकी साथ वाली

लड़कियाँ, कोई सात वर्ष की और कोई नौ वर्ष की ब्याही गई थीं, इसका आपने कहीं आज तक नाम नहीं रखा। क्या आप यह नहीं जानते कि अच्छे घरों के बालक पाँच-छः वर्ष के रोके जाया करते हैं सो बतलाइए कि आप इस भाग्यवती को और बड़ी करोगे तो किस कुएँ में गिराओगे?

पंडित जी ने कहा हम तो इसको भी ग्यारह वर्ष से नीचे कभी नहीं ब्याहेंगे।

पंडितानी बोली, राम-राम!!! आप यह क्या आश्चर्य करते हैं। सोचिये तो सही कभी कोई लड़कियों को भी ग्यारह वर्ष लों पहुँचने दिया करता है? गीता में लिखा है कि जैसे श्रेष्ठ लोग चलते हैं वैसे ही इतर लोग चला करते हैं और जिस बात को भले मनुष्य प्रमाण कर लेते हैं वह जगत को भी प्रमाण रूप होता है और सब लोग उनके पीछे चलते हैं। सो आप श्रेष्ठ होकर यदि इस प्रकार मुख से निकालेंगे तो सब लोग वैसे ही करने लग जाएँगे। आपको तो यह योग्य है कि कोई शुभ दिन और शुभ महूरत देख के कन्या का संबंध जहाँ आपका मन माने शीघ्र भेज दीजिये। आप एक दिन कहते थे कि प्रयाग में एक अच्छे वंश का बालक पंडित हो चला है और फिर आप यहाँ काशी में भी किसी पंडित का बेटा सुबोध बतलाते थे। एक बालक मैंने भी सुन रखा है पर एक बात है कि वह देखने को तो बहुत सुन्दर और कुल भी बड़ा पवित्र है परन्तु सुना जाता है कि उसकी विद्या पढ़ने में कुछ ऐसी बड़ी लगन नहीं। बात क्या आप जहाँ से चाहें जन्मपत्र मँगा के देख लें, यदि कोई कुंडली मिल जाए और मंगलीक* भी न हो अब भाग्यवती का संबंध शीघ्र कर दें विलम्ब का समय नहीं रहा।

पंडित जी बोले हम लड़की का विवाह ग्यारह वर्ष से पहले होना कभी श्रेष्ठ नहीं कहेंगे। जब हमने बालक का विवाह अठारह वर्ष पर ठहराया तो लड़की ग्यारह वर्ष से छोटी कब ब्याही जा सकती है? क्या तुमने मनुष्य और स्त्री की रुचि और स्वभाव में कुछ भेद समझ रखा है? भला यह तो सोचो कि जब मनुष्य को अठारह वर्ष से पीछे स्त्री की पूरी

---

1. जन्म कुंडली में चौथे सातवें घर में मंगल हो तो उसे 'मांगलिक' कहते हैं।

रुचि होती है तो स्त्री को ग्यारह से पहले कैसे होनी चाहिए? देखो सेठ रामरत्न ने सात वर्ष की कन्या का विवाह करके जब दो वर्ष पीछे उसका पति मर गया तो कितना दुःख उठाया। हम सुनते हैं कि अब वह कन्या माता-पिता और ससुराल वालों की प्रतिष्ठा धूल में मिला के किसी कहार के साथ चली गई। उदयराम शुक्ल ने हमारे रोकते-रोकते अपनी नौ वर्ष की भतीजी का विवाह एक बत्तीस वर्ष के ब्राह्मण के साथ कर दिया था। अब वह ब्राह्मण तो नेपाल के राजा के यहाँ नौकर है और वह घर में बैठी उस की बाट देख रही है। यह भी सुना जाता है कि उस गली में ही दो-चार खोटी स्त्रियाँ उसके पास बैठी रहती हैं। सो जब ऐसी स्त्री को कि जिसका यौवन अवस्था में पति घर न हो थोड़ा-सा कुसंग मिल जाए तो वह कौन-सा अनर्थ नहीं कर सकती? क्या तुमने नहीं सुना कि मोहनलाल की गली में एक वैश्य की विधवा लड़की गर्भ गिराने के दोष में तीन वर्ष को कैद में गई? सो हम सत्य कहते हैं कि ये सब उपद्रव इसी कारण हुए कि उनके माँ-बाप ने छोटी अवस्था में विवाह कर दिए थे, कि जब स्त्री को पुरुष और पुरुष को स्त्री की रुचि नहीं होती। यदि यह लोग अठारह वर्ष के होने पर विवाह करते तो दोनों में अत्यन्त प्रेम और रुचि होने के कारण शीघ्र ही कोई सन्तान हो जाती कि जो पति का वियोग हो जाने पर भी स्त्री के सन्तोष का हेतु गिनी जाती है। लालमणि की माँ! हमने अपने वृद्धों से यह बात भी सुन रक्खी है कि पहले तो हमारे देश में लड़के-लड़की का विवाह बड़ी अवसथा में ही करने की रीति थी पर जब से यहाँ मुसलमानों का राज्य हुआ तब से छुटपन का विवाह अच्छा समझने लग गये। कारण इसका यही है कि ये लोग जब पहले ही देश में आये तो जिसकी बेटी को रूपवती देखते या सुनते उसके मां-बाप को धमका के छीन लिया करते थे। इस कारण प्रजा के लोग यौवन अवस्था से पूर्व ही नौ-दस वर्ष की अवस्था में लड़कियों का विवाह करने लग गये क्योंकि मुसलमानों के यहाँ स्त्री का छीनना वर्जित है कि जो किसी के हक में आ चुकी है, अर्थात् जो किसी के साथ ब्याही जा चुकी हो। सो अब तो ईश्वर ने हमको उस महाराज अंग्रेज की प्रजा बनाया है कि जो कभी अन्याय

नहीं करना चाहता फिर अब छोटी अवस्था में लड़की-लड़कों के विवाह करने में क्या प्रयोजन है?

यह भी तुमने ठीक कहा कि श्रेष्ठ लोग जो काम करते हैं, उनको देख के इतर लोग भी वैसा ही करते हैं, सो यदि मैं श्रेष्ठ हूँ तो मुझे वैसा काम अवश्य करना चाहिए जो सारे संसार को सुखदायक हो क्योंकि मुझे देख के और लोग भी वैसा करने में उद्यम करेंगे।

पंडितानी बोलीं, हाय-हाय! तो क्या आप भाग्यवती को ठीक ग्यारह वर्ष की अवस्था में विवाहेंगे?

पंडित जी ने कहा, हाँ हम तो वैसा ही करेंगे कि जो सब लोगों के सुख का हेतु हो।

पंडितानी ने उत्तर दिया, महाराज यदि आपकी यही इच्छा है तो इस काम का आरम्भ किसी और के घर से करा देना क्योंकि यदि अपने घर से इस बात को चलाओगे तो लोगों में आपकी बहुत अपकीर्ति होवेगी। बुद्धिमान तो वही है कि जो ऐसे कामों को किसी दूसरे के घर से आरम्भ करे कि जिसमें आप अलग का अलग रहे और काम पूरा हो जाये।

पंडित जी बोले, अच्छे काम में आगे होने में यदि थोड़े दिन अपकीर्ति भी हो तो डरना न चाहिए। और तुम यह भी सोचो कि जैसे हम अपने घर से पहले इस काम को आरम्भ करना नहीं चाहते वैसे और कौन है कि जो अपने को इस अपकीर्ति से बचाना न चाहेगा? सो योग्य यही है कि इस शुभ कार्य का आरम्भ मैं ही अपने घर से करूँगा फिर देखा-देखी बहुत लोग मेरे पीछे हो लेंगे। लालमणि की माँ! हम तो यह भी सोचते हैं कि और भी जो व्यवहारजगत में शास्त्र और बुद्धि से विरुद्ध केवल मूर्खों ने चला छोड़े हैं, वे सब दूर हो जाएँगे, परन्तु यह काम शीघ्रता का नहीं, यत्न करते रहेंगे तो धीरे-धीरे आप ही सब दूर हो जावेंगे।

भला कहो तो विवाहों में जो लोग सहस्रों रुपए वृथा लुटा देते हैं यह बात किस शास्त्र में लिखी है? क्या अच्छा बात हो कि जो द्रव्य डोम भाट और नाचने वाली वेश्याओं को दिया जाता और अग्नि क्रीड़ा अर्थात् आतशबाजी में लुटाया जाता है वह बेटी को दिया जाया करे। देखो हमारी

गली में छजमल ने अपने सामर्थ्य से बढ़ के पाँच सहस्त्र रुपया कन्या विवाह पर दिया था सो अब देनदार होकर देश-विदेश मारा-मारा फिरता है और छोटेलाल ने उससे अधिक रुपए लगाये थे कि जिसके पीछे शीघ्र ही बाप-दादा के बनाये हुए सुन्दर मन्दिर बेचने पड़े। पंडित ईश्वरी प्रसाद ने सारी अवस्था की कमाई एक पुत्र के विवाह में लगा दी थी कि जिसके यहाँ अब अन्न-वस्त्र में भी संकोच हो रहा है। फिर क्या तुम ऐसे व्यर्थ उत्साह को अच्छा समझती हो? मुन्नालाल सेठ ने 15 सहस्त्र रुपया कन्या के विवाह में केवल खाने-खिलाने और गोटा-किनारी और नाच में लगाया था। जब वह कन्या विधवा हो गई तो बड़े बाप की बेटी होने के कारण भीख तो माँग नहीं सकती थी परन्तु जिस विपत से उसने दिन काटे ईश्वर ही जानता है।

पंडितानी बोली, महाराज विधवा का होना और न होना तो न वे लोग ही रोक सकते हैं कि जो विवाह में थोड़ा धन लगायें और न वे हटा सकते हैं कि जो बहुत धन लुटायें परन्तु विवाह के समय अपना नाम बढ़ कर लेना तो उनके आधीन था कि जो उन्होंने कर लिया। मैं देखती हूँ कि जिसको धन कहते हैं वह न तो खाने की वस्तु है और न ओढ़ने की, इसके होने का यही फल है मनुष्य बेटा बेटी के विवाह पर मन खाल कर लगा ले।

पंडित जी ने कहा, आं हां! मैं यह तो नहीं कहता उसका विधवा होना कोई रोक सकता था, परन्तु मेरा तात्पर्य यह है कि यदि वह द्रव्य बेटी को दिया जाता तो उसको विधवा होने का दुःख न प्रतीत होता। और जो तुमने कहा कि धन ओढ़ने खाने की वस्तु नहीं, तो मैं यह भी नहीं देखता कि किसी को ओढ़ना खाना धन से बिना भी हाथ लग सकता हो। कैसे आश्चर्य की बात है कि देश-विदेश फिर के और पराधीन होके सैंकड़ों क्लेशों के साथ एक-एक पैसा इकट्ठा करना और फिर विवाह के समय अंधे होकर कल्लर में बखेर देना। लालमणि की माँ तो इस भांति की व्यर्थ बातें अपने घर से सब दूर कर देंगे।

पंडितानी बोली, हाय-हाय! यदि आप लालमणि और भाग्यवती का विवाह जो बड़ी धूम-धाम से होना चाहिये चुपके से कर लोगे तो मैं कुनबे के लोगों में क्या मुँह लेकर बैठूँगी? और गली-कूंचे की लुगाइयाँ मुझे क्या कहेंगी?

पंडित जी ने कहा, अच्छा जब वह दिन आएगा तो देखा जाएगा, परन्तु हम कुनबे के उलाहने और गली कूचे की बातें सहार लेने को इससे अच्छा समझते हैं कि कुनबे के लोगों के सामने कंगाल बन जाएँ और एक विवाह करके गली कूचे में भीख माँगते फिरें।

पंडितानी ने कहा, हे राम जी कैसा पतला समय आ गया है कि जो लोग बहुत विद्या पढ़ जाते हैं उनकी बुद्धि कुछ सारे जगत से निराले ढब की हो जाती है। और उनको यह विचार भी नहीं रहता कि लोग हम पर हँसी करेंगे। पंडित जी महाराज! क्यों न हो मैंने सुना है कि एक बार तुम्हारे गुरु पंडित विश्वेश्वरनाथ जी भी कि जो इस काशी भर के सब पंडितों में शिरोमणि थे एक ऐसी बुरी बात मुँह से निकाल बैठे थे कि जिसको सुनके धरती काँपती थी। चाहे उस समय उनके सामने कोई कुछ उत्तर न दे सका पर आप ही कहो तो उन्होंने यह क्या बात मुँह से निकाल दी थी कि जो लड़की विधवा हो जाये उसका दूसरा विवाह फिर हो जाना चाहिए। ईश्वर ने बड़ी दया की कि वह पंडित जी परलोक को पधार गए नहीं तो इस खोटी बात को काशी में अवश्य चला जाते। सो अब वैसा ही आप भी लोक विरुद्ध बातों का हठ बाँध बैठते हो स्वामी! आपको शिक्षा करने का तो मेरा मुँह नहीं पर बात आपको वहीं मुख से निकालनी चाहिए कि जिसको सुनके सब लोग आनन्द मानें।

पंडित जी ने कहा कि लालमणि की माँ! हम उस परम उपकारी के शीघ्र परलोक हो जाने का बहुत शोक करते हैं।

इस समय हम इस विषय पर विवाद उठाना नहीं चाहते कि उन्होंने जो बात चलानी चाही थी कैसी थी। हमारा अभिप्राय केवल यह कहने से है और तुम भी इस बात को भलीभाँति जानती हो कि बहुत कम पुरुष

ऐसे देखे जाते हैं जो अकेले रहने में अपने मन को बिगड़ने न दें, फिर स्त्रियों की तो क्या गति है? यही बात सोच यदि उनको विधवाओं की दशा पर दया आई हो तो क्या बुरी बात है?[1]

पंडितानी ने कहा, सत्य है स्वामी! मन बड़ा चंचल है इसको थोड़ा-सा भी अवसर मिलने से अनेक प्रकार के खोटे संकल्प रचने लग जाता है। इस कारण चाहिए कि प्राणी मन को कभी अवसर न पाने दे और यदि कोई और काम न हो तो विद्या पढ़ना आरम्भ करावे और मन को ग्रंथों के देखने में जोड़ रखे। मेरी समझ में वे लोग बड़े मूर्ख हैं कि जो अपने लड़के-लड़की को विद्या से हीन रखते हैं। विद्या एक ऐसा अभ्यास है कि उससे मन को कभी अवसर नहीं मिलता कि और किसी विकार में प्रवृत्त हो सके। विद्यावान को यदि कोई आपदा भी आ जाती है तो शीघ्र व्याकुल नहीं होता और न कभी उसकी निवृत्ति के साधन में आलस्य करता है। इसी कारण अब मैं अपनी भाग्यवती को सारा दिन पढ़ने में जोड़ रखती हूँ और मैंने आप भी आपकी दया से 'आत्मचिकित्सा'[2] नाम पोथी सारी पूरी कर ली और सदा उसकी दृष्टि के सामने रखती हूँ।

पंडित जी बोले, भली सुध आई! हमको अब भाग्यवती का लिखा-पढ़ा देखे बहुत काल हुआ, बताओ तो सही तुमने दो वर्ष में उसको क्या-क्या पढ़ाया-सिखाया है?

1. इसके आगे ग्रंथकार ने विधवा विवाह को प्रबल युक्ति प्रमाणों से सिद्ध किया था। और विधवा विवाह न होने के दुःख आर्त हृदय से यह वर्णन किए थे कि पढ़ने हार के आँसूधारा चलती थीं। विधवा विवाह करने की उत्तम रीति भी बताई थी। परन्तु पाठशालाओं में विधवा विवाह की शिक्षा देना सरकार ने अनुचित मान के उस प्रसंग को निकाल दिया था। वह प्रसंग कलमी कॉपी के बीच रचयिता पंडित जी के मन्दिर फिल्लौर में रक्षापूर्वक धरा है।

2. यह अत्युत्तम पुस्तक श्री पंडित श्रद्धाराम जी ने बनाई थी जो फिर उन्हीं ने सत्यामृतप्रवाह नाम ग्रंथ के पूर्व भाग में लगा दी थी। मूल्य 5 रुपए को लाहौर फिल्लौर पंडित जी ने हरिज्ञान मन्दिर में मिलती है।

पंडितानी ने कहा, सहस्रनाम गीता तो आप उससे सुन ही चुके हैं पर उसके पीछे मैंने उसको भाषा व्याकरण, ऋजुपाठ, हितोपदेश और शिक्षामंजरी पढ़ाई। और अब वह भूगोल-खगोल नाम ग्रंथ पढ़ रही है ओर फिर मेरी इच्छा है कि थोड़ी-सी गणित विद्या पढ़ा के पीछे से आत्मचिकित्सा का आरम्भ करा दूँगी क्योंकि उसके पढ़ने से प्राणी के लोक-परलोक दोनों भाँति के व्यवहार प्रतीत हो जाते हैं और गृहस्थ धर्म और मनुष्य धर्म को सर्व प्रकार से जान लेता है।

पंडित जी ने पूछा, भाग्यवती को तुमने कुछ सीना-पिरोना और भोजन बनाना आदिक व्यवहार भी सिखाये हैं या नहीं?

पंडितानी बोली, हाँ! ये व्यवहार तों मैं उसे साथ-ही-साथ सिखाती रही हूँ। सच पूछो तो हमारी भाग्यवती के समान सीने-पिरोने में इस गली में की कोई लड़की भी चतुर नहीं। क्या करूँ क्वँारी होने के कारण आप उसके हाथ से बना भोजन[1] खाओगे नहीं, नहीं तो मैं यह भी दिखा देती कि वह मीठे सलोने भोजन क्या-क्या अच्छे बना सकती है।

पंडित जी ने कहा क्या भाग्यवती को तुमने पाक साधनी पोथी भी पढ़ा दी है कि जिसमें सर्व प्रकार के व्यंजन बनाने की रीतियाँ लिखी हैं।

पंडितानी बोली, उसका पाठ तो उसने आप ही कर लिया था परन्तु उसमें के सब व्यंजन और पाक मैं भाग्यवती के हाथ से भी कढ़वाती रही हूँ। अब उसको भली-भाँति विदित है कि इस पदार्थ में मीठा कितना और घृत कितना डालना चाहिए और इस शाक वा भाजी में लोन किस समय और कितना देना योग्य है और अमुक पाक कितनी आंच को सहारता और अमुक पदार्थ की भाप कब लौ बंद रखनी चाहिए।

पंडित जी ने कहा, अहा! तब तो भाग्यवती को तुमने बड़ी चतुर बना दिया। उसके ससुराल वाले तुम्हारी बड़ी उपमा करेंगे। भला यह तो बताओ कि उसमें बालकों की न्याई चंचलता-चपलता और थोड़ी-सी बात में रूठ जाने और शीघ्र ही संतुष्ट हो जाने का स्वभाव तो नहीं और बालकों की न्याई कभी किसी बात में हठ नहीं बाँध बैठा करती? हाँ एक बात

1. यद्यपि सब लोगों में तो नहीं परन्तु इस देश के साधारण लोगों में प्रायः यही सवाल है कि वह अपनी क्वारी कन्या के हाथ का बना भोजन नहीं खाते।

तो हम जानते हैं कि गली में से कभी कोई लड़का-लड़की भाग्यवती पर उलाहना लेकर नहीं आया और न कभी लालमणि और भाग्यवती में ही विरोध देखा। हमारे बड़े भाग्य हैं कि ऐसी उत्तम संतान प्राप्त हुई नहीं तो आजकल के लड़के-लड़कियाँ तो देखे ही जाते हैं कि माता-पिता को क्या-क्या दुःख देते हैं।

पंडितानी ने कहा, अब लों तो भगवान की दया से हमारी भाग्यवती में कोई अपलक्षण नहीं, सबको सीख देकर चलती है। आगे ईश्वर जाने क्या होगा पर मैं इतना जानती हूँ कि जब यह आत्मचिकित्सा की पोथी सारी पढ़ लेगी तो आगे को भी कोई अवगुण इसमें आने नहीं पायेगा।

पंडित जी यह बात घर में कर ही रहे थे, इतने में काशी राज का भेजा हुआ एक दूत आके कहने लगा कि आपको राजा जी सभा में बुलाते हैं। पंडित जी ने कहा चलो आता हूँ।

जब पंडित जी स्नान ध्यान के पीछे वस्त्र पहिन के सभा में गए तो यथायोग्य सत्कार नमस्कार करके राजा जी ने पूछा कि पंडित जी ने क्या सुना है कि कल इस नगर में एक बड़ा भारी उपद्रव हुआ?

पंडित जी ने कहा, नहीं पृथ्वीनाथ! मैंने कुछ नहीं सुना, क्योंकि मेरा स्वभाव है कि जबसे आपके पास से जाता हूँ फिर कभी घर से बाहर नहीं आया करता। यदि किसी आवश्यक काम के लिए भी निकलूं भी तो प्रयोजन से बिना और किसी से कुछ प्रयोजन नहीं रखता, सो आप बताइए कि क्य उपद्रव हुआ?

राजा ने कहा, सुना जाता है कि कोई पंजाबी अपने कुटुम्ब समेत तीर्थ यात्रा करता हुआ थोड़े दिनों से यहाँ काशी में आ रहा था, और यह भी सुना है कि वह बड़ा धनवान और महाराज़ा रणजीतसिंह के दिवानों के वंश में से कोई प्रधान पुरुष है। लाहौर अथवा अमृतसर के निकटवर्ती किसी नगर में उसका घर सुना जाता है, और उसका स्वभाव लोग बहुत सीधा और सरल बतलाते हैं। और बड़े आश्चर्य की बात है कि कल उसको किसी ने अपने घर बुलाने कई सहस्र रुपए का पदार्थ लूट लिया। अब वह विदेश में बैठा सिर पटक रहा है कि कोई सहायक नहीं होता।

चाहे पुलिस के लोग ढूँढ़ भी बहुत कर रहे हैं पर लूटनेहारों का कुछ पता नहीं मिला कि वे कौन थे और किधर चले गये।

पंडित जी ने कहा, महाराज! मैं सुनता हूँ कि ये पुलिसवाले तो आप ठगों और उचक्कों और चोरों बटमारों के संग मिले रहते हैं। मुझे निश्चय है कि उन्होंने लूटनेहारों को ढूंढ़ना तो क्या था वरन् इस भांति की बातें मिला के उस विदेशी को ही उल्टा धमका रहे होंगे कि तूने आप ही यह नटखटी की है, अथवा किसी तेरे पुत्र वा मित्र ने वा भाईभृत्य ने यइ चालाकी दिखाई होगी। अथवा यह भी आश्चर्य नहीं कि तूने यह झूठी बात ही फैला दी हो कि मैं काशी में आके लुट गया हूँ। बता तूने इतना पदार्थ कहाँ से लिया था, और तुझे यहाँ कौन जानता है? और चल थाने में चलके असबाब की फेहरिस्त लिखा और तुझे यह भी लिखना पड़ेगा कि फलाना कपड़ा तूने कितने गज का और किस बजाज से खरीदा था और फलाना जेवर किस सुनार का बनाया हुआ है और किस तारीख को किस वक्त और किसके सामने सुनार को दिया था और जब उससे लिया तो कौन गवाह है? उस गवाह का मुख उस वक्त पूर्व की तरफ था या पश्चिम की? सिर पर पगड़ी थी या टोपी? और तुझे यह भी कहना पड़ेगा कि गवाह की पगड़ी सुरख थी या सफेद? पृथ्वीनाथ! इस भाँति की बातों से उसका मन व्याकुल और बुद्धि भ्रष्ट करके उल्लू बना देंगे। और यदि उत्तर के समय उसी जीभ थोड़ी-सी भी थरथराई अथवा उत्तर में कुछ विलम्ब होगा तो तुरन्त हाथों में हथकड़ी डाल के पाँच सात कानिष्टबाल आगे-पीछे होकर कोई कहेगा, अरे क्यों नाहक कैद में पड़ता है कह दे कि मेरा कुछ नहीं गया। कोई कहेगा, हमारा नशापानी करा दे अभी छुड़ा देते हैं। कोई क़हेगा, लाला अब तो फँस गए कुछ पास है तो दे दिला कर छूट जाओ। थानेदार साहिब मिज़ाज के सख्त हैं न मालूम तुम्हारा कहीं आगे चालान कर दें तो तुम्हारे बाल-बच्चे मुसाफरी में हैरान हों। रुपया-पैसा इसी काम आता है; कुछ खर्चो तो अभी छुड़ा देते हैं आगे तुम्हारी मरजी।

राजा जी ने कहा, पंडित जी! क्या अंग्रेजी राज्य में भी ऐसा अनर्थ

हो सकता है कि जैसा आपने पुलिसवालों का सुनाया?

पंडित जी बोले, अंग्रेजों तक ऐसी छोटी बातों को कौन पहुँचने देता। यह तो सारे हमारे देशी भाइयों का ही प्रताप है कि जो पुलिस में नौकर हो रहे हैं।

राजा जी ने कहा, उस पंजाबी को तो किसी ने अपने घर में बुला के लूटा है फिर उस पर यह भ्रम कब हो सकता है कि उसने आप ही नटखटी की होगी।

पंडित जी ने पूछा आप यह तो बताइए कि आपने उसका सारा वृतान्त कैसा सुना है।

राजा जी ने कहा, एक दिन वह पंजाबी पालकी में बैठके गंगा स्नान को जाता था कि आगे से एक और सेठ पालकी में बैठा हुआ इधर को आता मिला। जब पंजाबी की पालकी थोड़ी आगे निकल गई तो उस सेठ ने अपना छड़ीदार भेज के पंजाबी से यह पूछ भेजा कि आप कौन और किस देश से आए हैं? उस पंजाबी ने कहा, "खतरी हां अते पंजाब दे देसों आया हाया हां, ते लाहौर दे इलाके कुंजाह नामे नगर विच्च असाडा घर हई।"

जब छड़ीदार ने हट के अपने सेठ को यह सारी बात सुनाई तो उसने फिर छड़ीदार के हाथ पूछ भेजा कि क्या आप दिवान बद्रीदास जी के पोते और दिवान उत्तमचन्द जी के बेटे नहीं कि जो हमारे बड़े याथ थे? अब तो आप बहुत बड़े हो गए मुझे याद पड़ता है कि आपका नाम शायद लाला जवाहरमल हो। वह पंजाबी यह सुनते ही पुकारा कि "हाँ जी मैं जवाहरमल ही हाँ, जरा उरे आके तां दस्सौ तुसां साडे बाबे जी अते लाला जी होरां नूं किक्कुर जानदेहौ?"[1]

वह सठ झट पालकी से निकल उसके पास गया और छाती से लगा के रोने लग गया। फिर मुंह पोंछ के कहने लगा कि आप बहुत छोटे थे कि जब मैं आपके लाला जी के पास लाहौर में रहा करता था। महाराजा रणजीतसिंह के लिए हमारे लाला जी यहाँ से कुछ जवाहररात लेकर जाया

1. यह पंजाबी बोली है कि—हां जी, मैं जवाहरमल ही हूँ; जरा इधर आकर तो बताइए कि आपने हमारे दादे और पिता का नाम क्यों कर जाना।

करते थे और मैं भी उनके साथ हुआ करता था दो दो वर्ष लाहौर में रहना, आपस में ऐसा प्रेम था कि एक घड़ी भी अलग न होना खाना-पीना सोना-बैठना सब आप ही के मकान में हुआ करता था कि जो टकसाली दरवाजे नया बनाया था। यह तो मैंने सुन लिया था कि आपके लाला जी बहुत दिन हुए काल कर गए पर आप यह बताइए कि आपकी माँ जी राजी हैं कि जो मुझको सदा आपके साथ एक ही थाली में रसोई खिलाया करती थी? बीबी नन्द कुअर आपकी बड़ी बहिन आनन्द से है कि जिसकी शादी हमारे सामने बड़ी धूमधाम से बटाले शहर में हुई थी? तुम्हारा गंगाविष्णु रसोइया और बुद्धू कहार बड़े नटखट थे। उनसे हमारी कभी नहीं बनती थी, क्या आपकी गली में जो एक पुराना पीपल था कि जिसमें भूत जानके आप डरा करते थे वह अबलौ खड़ा ही है? तुम्हारी ताई रामदेवी भी हमसे बहुत प्यार किया करती थीं, भला यह तो बताइए कि उनका बेटा मूलचन्द राजी है? अच्छा साहिब तुम तो उस समय बहुत छोटे थे शायद हमारा नाम भी याद न हो, पर हमको आपसे मुद्दत बाद भगवान् ने मिलाया है। तो फिर चलिए अब स्नान को पीछे जाना पहले अपनी हवेली में डेरा कीजिए। पहले तो आप अनजान थे अब किसी दूसरे के मकान पर टिकने का क्या नाम? अब मैं आपको अलग नहीं रहने दूंगा मेरे आदमी जाके आपका सब असबाब लिवाए लाते हैं।

पंजाबी साहिब अपने कुनबे के नाम और पुराने नौकर चाकरों की बातें और गली कूचे के पते से जान गए कि यह ठीक कोई हमारा जानकार है। फिर पूछने लगा सेठ जी तुहाड़ा नाम की हई? जब उसने अपना नाम गुवर्द्धनदास और बाप का नाम श्यामजीलाल बताया तो जवाहरमल पंजाबी ने कहा, "अच्छा जी हुण तां असां असनान करन जाणा हई भलके फेर मिलांगे।"[1]

गुवर्द्धनदास ने डेरा तो पूछ ही लिया था, दूसरे दिन तड़के ही चार पाँच थाल मिठाई के साथ ले जवाहरमल के पास पहुँचा और कहा कि मुझे

---

1. पंजाबी में इसका अर्थ यह है कि—अच्छा जी! अब तो हम स्नान करने जाते हैं, कल फिर मिलेंगे।

तो आप से अलग रहने में रात काटनी भारी हो गई। जब लों दूर थे तब लों तो कुछ याद भी नहीं था परन्तु अब हम तुम्हारा अलग रहना नहीं सहार सकते। रात मैंने आपका आना तुम्हारी भावज के पास कहा तो वह बोली मैं अभी चलके उनको बाल-बच्चों समेत अपने पास लिवाय लाती हूँ पर मैंने उसको यह कह के रोका कि पहले दिवान साहिब से पूछ लेने दो। सो अब कहिए क्या मरजी है? इसकी प्यार भरी बातों ने उसका मन ऐसा मोम कर लिया कि अपने परिवार समेत इसके घर में डेरा आ किया। सब गहना-कपड़ा आदिक ठाठ एक एक चौबारे में रखके आप सामने के एक दालान में अलग रहने लगे। गुवर्द्धनदास और उसकी स्त्री एक क्षण भी उनसे अलग नहीं होते थे तन-मन-धन से टहल करने लगे। और कभी-कभी यह भी कह दिया करते थे कि आप विदेश में हैं यदि दो-चार हजार रुपयों की जरूरत हो तो आपका घर है फिर कभी मैं लाहौर से मंगा लूंगा। जवाहरमल कह देता नहीं भराऊ जी! तुहाड़ी किरपा ते बहुत कुझ है।[1]

अब कल की सुनिये गुवर्द्धनदास ने कहा कि दिवान साहिब! आज सलौनों का त्योहार है और यहाँ गंगा जी पर बड़ा भारी मेला हुआ करता है। सो चलिये स्नान करा लाऊँ। जवाहरमल यह सुनते ही झट उसके साथ अपनी लुगाई और नौकर-चाकरों समेत चल पड़े।

गंगा पर पहुँचते ही जवाहरमल तो स्नान ध्यान और संध्या तर्पण में लगा, गुवर्द्धनदास पालकी बीं छोड़ मेले में होकर झट अपनी स्त्री के पास पहुँचा और बोला काम बना लाया हूँ ताले तो उनके अपने ही थे तोड़ ताड़ के फेंक दिए और सब माल असबाब लेकर कहीं को चल दिए। जब जवाहरमल ने पूजा-पाठ से अवसर पाया तो उन पालकी वाले पूर्वी कहारों से पूछा कि "किऊँ जी, तुहाडे लाला कित्थे गये हैं, अजे उन्हां अपणा अस्नान ध्यान कर लीता हई कि नहीं।"[2]

---

1. नहीं भाई साहब आपकी दया से बहुत कुछ है।

2. क्यों जी आपके लाला कहाँ गये हैं, अभी उन्होंने अपना स्नान-ध्यान कर लिया है कि नहीं?

यह सुन के वे पूर्वी कहार बोले, "कौन लाला का जानी कहाँ गए, हमका ही अन लौं भाड़ा पर लिवाये लाए रहे। सो हम आपन भाड़ा लै लीन्ह अब का हम उनका जानन हैं की रहे और कहाँ की चला गये, जाओ मेला में ढूँढ़त फिरो।"

पंजाबी साहिब उन कहारों की रूखी-सूखी पूर्वी बोली कुछ समझे कुछ न समझे परन्तु मन में कहने लगे हे परमेश्वर! किते उह कोई बनारसी ठग ही न होवे। तुरन्त अपनी पालकी में बैठ सब नौकर-चाकरों समेत जब घर में आके देखें तो, न गुवर्द्धनदास न उसकी लुगाई और न कोई उसका नौकर-चाकर ही दिखाई दिया। सारा घर भीतर बाहर से बुहारा धरा, फाटक खुले और ताले टूटे और माल असबाब में तवा तक भी नहीं कि रोटी कर खाएँ। तब तो गली-कूचे के लोगों से पूछा कि "सेठ गुवर्द्धनदास जी होरी आपणा घर सुन्ना छोड के कित्थे टुर गये हैन" ।[1] लोगों ने कहा यहाँ तो कोई गुवर्द्धनदास नहीं रहता अलबत्ता पंद्रह-बीस दिन से एक कंगाल-सी लुगाई और एक बूढ़ा यहाँ किराये पर आ रहे थे सो आज मेले का दिन है कहीं माँगने-खाने टरक गये होंगे। यह सुनते ही दिवान साहिब का मुख पीला हो गया और ओठों पर कालख छा गई। जब मुहल्ले वालों से पूछा कि "किउँ जी, उस गुवर्द्धनदास दे आगे-पिच्छे ताँ पंज सत्त प्यादे दौड़ दे हुँदे सान, अते रथ गाड़ी पालकी अर होर घोड़े टट्टू बी उसके पास हुंदे हैंगे सन फेर ओह ऐडे झव दे किद्धर छपन हो गया हई।"[2] तो उनकी बात सुन के लोगों ने समझा कि यह कोई विदेशी लूट गया है और बोले लाला तुम तो धोखे में आ गए दीखते हो! क्या तुमने नहीं सुना कि दिल्ली और बनारस में कपड़ा-गहना रथगाड़ी, पालकी-घोड़े, हाथी सब कुछ किराये पर मिल सकते हैं, वह कोई ठग था जाओ चुप करके बैठो नाहक कोई कानिस्टबिल सुन लेगा तो कुछ और झमेला खड़ा कर लोगे।

1. पंजाबी बोली : सेठ गोवर्धनदास जी साहिब अपना घर सूना छोड़ कर कहां गए हैं?

2. पंजाबी बोली : क्यों जी उस गोवर्धनदास के आगे-पीछे तो पाँच-सात प्यादे दौड़ा करते थे और रथ, पालकी और घोड़े-टट्टू भी उसके पास होते थे, फिर यह ऐसी जल्दी किधर छिप गया है?

यह सारा वृत्तान्त सुनके पंडित जी ने कहा महाराज यह जो आपने सुनाया काशी में यह कोई बात नहीं, सदा ऐसी बातें होती रहती हैं, जैसा कि देखिये एक बात आपको मैं सुनाता हूँ कि जो इससे भी कुछ बढ़के है।

दो-तीन वर्ष हुए कि एक साधु जो बड़े भारी महंत और किसी राजा के गुरु जाने जाते थे सौ पचास साधु की भीड़-भाड़ साथ लिये यहाँ काशी से बाहर एक बाग में आ ठहरे थे, उनके पास एक हाथी दस-बीस घोड़े और कड़े कंठे शस्त्र-वस्त्र बहुत अच्छे सुने जाते थे, एक दिन कोई सेठ पालकी में बैठके उनके पास इस रीति से पहुँचे कि मानों कहीं को जाता हुआ अचानक साधुओं के दर्शन को आ गया है। जाते ही एक मोहर जेब से निकाल भेंट की और प्रेम भाव से पूछा कि महापुरुषों का आना किस देश से हुआ? महंत जी बोले हमारा स्थान तो कुरुक्षेत्र देश में है और न्योनू हांढदे हुए थारी नगरी में आ रहे हैं।[1]

सेठ ने उनकी बांगरी बोली समझ के जी में कहा, बड़े मोटे देश के हैं, इन बांगर के डांगरों को मैं अभी बांध लेता हूँ। फिर कहा, स्वामी जी! अब तो मैं अचानक किसी और काम को जाता हुआ आ निकला हूँ फिर कभी दर्शन करूँगा परन्तु आप यह बताइए कि आपके संग कितने एक साधु हैं?

महंत जी ने कहा, "भक्त जी! माणस तो घणे थे पर अब उरेसी सौ एक माणस की भीड़-भाड़ है।"[2]

सेठ जी प्रमाण करके उठ आए और दो-तीन दिन के पीछे फिर जाके एक मोहर भेंट चढ़ाई और पूछा महाराज यदि कोई ब्राह्मण बनिया अपने घर में भोजन बनवा के आप को अपने घर ले जाना चाहे तो आप उसको पवित्र कर सकते हो वा नहीं?

महंत जी बोले, "भक्त जी! साधु लोग भाव के भूखे हैं भोजन के नहीं, सो जो कोई हमने भाव से बुलावे तो हमारे कोई सा माण नहीं।"

1. बांगरी बोली : हमारा स्थान तो कुरुक्षेत्र देश में है और यों ही घूमते हुए तुम्हारी नगरी में आ ठहरे हैं।

2. बांगरी बोली। भक्त जी आदमी तो बहुत थे पर अब यहाँ सौ एक आदमी की भीड़-भाड़ है।

सेठ नमस्कार करके चला आया और पाँच-छः दिन पीछे एक ब्राह्मण के साथ कहला भेजा कि कल को मेरा घर पवित्र करना होगा सब साधुओं को नौता है, रूखी मिस्सी रसोई बनवा छोड़ूँगा और यह भी कहा कि मैं चाहता हूँ कि सारी धूम-धाम आपके साथ हो और मैं आप आकर सत्कार मान सहित ले चलूँ। सब साधु आपके पास ही रहें पूरे दस बजे कोई कहीं चला न जाए। महंत जी ने दूसरे दिन हाथी पर कमखाब का झूल कसवा और सुनहरी हौदे से सजा के एक ओर खड़ा किया। और रुपहरी सुनहरी काठियाँ घोड़ों पर कसवा कर अलग खड़े किए। दस-बीस साधु चाँदी-सोने के आसे लिए खड़े हैं और बाबा जी मखमल की गद्दी पर मोतियों की झालर वाले तकिए लगाए रेशमी चाँदनी के नीचे अलग विराजमान हो रहे थे कि इतने में दस-बीस टहल वालों के साथ परम श्रद्धा युक्त नंगे पाँव से आता सेठ भी दिखाई दिया। जब उसने पास आते ही प्रणाम किया और पधारिए महाराज! कहा तो दस साधुओं के डेरे की रखवाली छोड़ के महंत जी तो हाथी पर और कई एक मुख्य चेले घोड़ों पर चढ़े। सारा डेरा शंख भेरी नृसिंगे घड़ियालें बजाता हुआ सेठ के पीछे हो लिया। सेठ ने आगे बढ़ के विनती की कि, स्वामी हम काम-काज के आदमी फिर कैसे जिमा सकेंगे आप इन दस साधुओं को भी संग ले चलें, डेरे की रखवाली में मैं आदमी छोड़ चलता हूँ कि जो चौकसी से बैठे रहेंगे।

महंत जी तो उसके प्रेम भाव में पहले ही अंधे हो चुके थे अब कब हो सकता था कि उसकी बात पर कुछ भ्रम खड़ा करते। सेठ के मनुष्यों को बैठाय उन साधुओं को भी साथ ही ले चले। जब नगर के भीतर पहुँचे तो सेठ ने एक गली में बड़े ऊँचे मन्दिर के आगे उन सब को बिठा दिया कि जहां सुन्दर दरियाँ बिछ रही थीं और महंत जी से कहा कि स्वामी गली बहुत तंग व भीड़ी है, लोगों का आना-जाना रुक गया; यदि आप की आज्ञा हो तो हाथी-घोड़ों को मेरे आदमी असबाब समेत कसे कसाए आपके डेरे में ले जाएं। जब आप जीम चुकेंगे तो एक दम में मँगा दूँगा। महंत जी इस पर भी प्रसन्न हो गए तो उस मन्दिर के डेउडी में चौकी बिछवा महंत जी को बैठा दिया। और आप यह कह के भीतर जा घुसा

कि देखूँ रसोई में क्या विलम्ब है। महंत जी तो भूखे बैठे जंभाइयाँ ले ही रहे थे वह तुरन्त दूसरे द्वार से निकल महंत जी के डेरे पहुँचा। वहाँ तो साब कुछ लपेट-सपेट के इसी की बाट देख रहे थे। ज्यों-ही यह उनके पास पहुँचा सब मिल के कहीं को चल दिए। आश्चर्य यह है कि घोड़ा न हाथी न उनका धरती पर कुछ चिन्ह ही प्रतीत होता था कि हाथी की चोरी करके वे कहाँ छिप गए।

जब महंत जी ने चार घड़ी बाट देखी कि भीतर से कोई न आया तो एक साधु को कहा टुक भीतर जाके तो देखो क्या हो रहा है?

वह मंदिर तो पुराना खंडहर था, बाहर से ही अच्छा दिखाई देता था जब भीतर जाके देखा तो न कोई सेठ न कहीं रसोई, ईंटों के ढेर और मट्टी के डले धरे थे। महंत जी का मुख देखते ही श्याम हो गया। जब लोगों से पूछा कि यह स्थान किसका और जो सेठ हमको यहाँ लाया था कहाँ चला गया तो लोगों ने कहा कि यह किसी का स्थान नहीं, पुराना खंडहर पड़ा है, और सेठ को हम नहीं जानते कौन था और कहाँ को चला गया। यह सुनके महंत जी का मन घबराया और कहा साधो! पाछे की सुध भी लेनी चाहिए, हम तो बनारसी ठग के पल्ले पड़ गए दीखते हैं। जब डेरे पहुँचे तो लीद के ढेरों के बिना कुछ भी देखने को न मिला। और पूछा गया तो वह लीद भी घोसी और पंजाये वालों के पास बेच गये प्रतीत हुए।[1]

यह सुनके राजा जी ने कहा पंडित जी महाराज! आप यह तो सुनाइए कि उस पहले सेठ ने पंजाबी के घरवालों के नाम और गली कूचे के पते ठीक-ठीक कैसे बता दिये? और इस दूसरे सेठ ने कपड़े बर्तन हौदा और काठियां आदिक पदार्थ तो छिपाए परन्तु हाथी घोड़ों को कैसे छिपाया होगा कि जिनके पाँवों के चिन्ह धरती से शीघ्र नहीं छिप सकते।

पंडित जी ने कहा, पृथ्वीनाथ! चोर बड़े चतुर होते हैं। उनकी ऐसी बातों का कुछ कठिन नहीं होता। और जिन करके इस काशी में तो ऐसे-ऐसे ठग रहते हैं कि जो आँखों का अंजन निकाल लें ओर किसी को प्रतीत न हो।

1. पंजाये को ''पैयावा' व 'आवा' भी बोलते हैं कि जहां ईंटें बनती पकती हैं।

राजा जी ने कहा, पंडित जी! आज जो हमने आपको दूत भेज के बुलाया है प्रयोजन हमारा यही था कि आप कोई ऐसा ग्रंथ रचें कि जिसमें जगत के सब छलबल और उनकी युक्तियाँ लिखी हुई हों। जब वह ग्रंथ आप हमको लिख देंगे तो छपवा के सर्व देशों में भेजा जाएगा। इससे निश्चय है कि कोई किसी के धोखे में नहीं आया करेगा। जिन प्रकारों से लोग मूर्खों को धोखा देते और लूट लेते हैं वे सब प्रकार उसमें लिख देना चाहिए।

पंडित जी बोले, सत्य वचन महाराज! परन्तु ऐसा ग्रंथ मुझ से शीघ्र नहीं बन सकेगा। आप शीघ्र-से-शीघ्र कहें तो मैं एक वर्ष में ऐसा ग्रंथ लिख सकूँगा।

राजा जी ने कहा, बहुत अच्छा! परन्तु जितना हो सके उसको शीघ्र लिखना चाहिए।

पंडित जी ने एक वर्ष में जब वह ग्रंथ लिखके राजा को दिया तो राजा जी ने बहुत प्रसन्न होके सहस्र मुद्रापंडित जी को अर्पित की। उस ग्रंथ में जिसका नाम उन्होंने 'कौतुक संग्रह' रक्खा था रसायन सिद्धि मंत्र-तंत्र और कई प्रकार का धोखा देना लिखा हुआ था कि जिसको पढ़कर कोई कभी भी धोखे में नहीं आ सकता।

जब पंडित जी वह रुपये लेकर आए तो घर के द्वार पर यह सन्देश मिला कि जो जन्मपत्री लालमणि पंडित वासुदेव शास्त्री ने मँगाई थी वह उनकी कन्या से मिल गई हैं और वह यह भी कहता है कि शास्त्री जी महाराज माघ सुदी अष्टमी का विवाह देते हैं और आपने प्रमाण करना होगा।

पंडित जी ने सुनते ही बहुत आनन्द माना और पूछा कि वासुदेव शास्त्री कौन से? क्या वे हैं कि जो मिशन स्कूल में पढ़ाते और पन्द्रह रुपए मासिक पाते हैं, भाई वे तो काशी से बाहर किसी ग्राम के वासी सुने जाते हैं,सो हम तो काशी से बाहर अपने बेटी-बेटे का विवाह करना नहीं चाहते।

सन्देश लाने वाला बोला, महाराज! आपका ध्यान कहाँ चला गया? ये तो वे वासुदेव जी हैं कि जो जयपुर के राजा के गुरु और बड़े प्रतापी हैं। रहते तो वे सदा जयपुर में ही पर अब कन्या का विवाह यहाँ काशी

कि देखूँ रसोई में क्या विलम्ब है। महंत जी तो भूखे बैठे जंभाइयाँ ले ही रहे थे वह तुरन्त दूसरे द्वार से निकल महंत जी के डेरे पहुँचा। वहाँ तो साब कुछ लपेट-सपेट के इसी की बाट देख रहे थे। ज्यों-ही यह उनके पास पहुँचा सब मिल के कहीं को चल दिए। आश्चर्य यह है कि घोड़ा न हाथी न उनका धरती पर कुछ चिन्ह ही प्रतीत होता था कि हाथी की चोरी करके वे कहाँ छिप गए।

जब महंत जी ने चार घड़ी बाट देखी कि भीतर से कोई न आया तो एक साधु को कहा टुक भीतर जाके तो देखो क्या हो रहा है?

वह मंदिर तो पुराना खंडहर था, बाहर से ही अच्छा दिखाई देता था जब भीतर जाके देखा तो न कोई सेठ न कहीं रसोई, ईंटों के ढेर और मट्टी के डले धरे थे। महंत जी का मुख देखते ही श्याम हो गया। जब लोगों से पूछा कि यह स्थान किसका और जो सेठ हमको यहाँ लाया था कहाँ चला गया तो लोगों ने कहा कि यह किसी का स्थान नहीं, पुराना खंडहर पड़ा है, और सेठ को हम नहीं जानते कौन था और कहाँ को चला गया। यह सुनके महंत जी का मन घबराया और कहा साधो! पाछे की सुध भी लेनी चाहिए, हम तो बनारसी ठग के पल्ले पड़ गए दीखते हैं। जब डेरे पहुँचे तो लीद के ढेरों के बिना कुछ भी देखने को न मिला। और पूछा गया तो वह लीद भी घोसी और पंजाये वालों के पास बेच गये प्रतीत हुए।[1]

यह सुनके राजा जी ने कहा पंडित जी महाराज! आप यह तो सुनाइए कि उस पहले सेठ ने पंजाबी के घरवालों के नाम और गली कूचे के पते ठीक-ठीक कैसे बता दिये? और इस दूसरे सेठ ने कपड़े बर्तन हौदा और काठियां आदिक पदार्थ तो छिपाए परन्तु हाथी घोड़ों को कैसे छिपाया होगा कि जिनके पाँवों के चिन्ह धरती से शीघ्र नहीं छिप सकते।

पंडित जी ने कहा, पृथ्वीनाथ! चोर बड़े चतुर होते हैं। उनकी ऐसी बातों का कुछ कठिन नहीं होता। और जिन करके इस काशी में तो ऐसे-ऐसे ठग रहते हैं कि जो आँखों का अंजन निकाल लें और किसी को प्रतीत न हो।

1. पंजाये को "पैयावा' व 'आवा' भी बोलते हैं कि जहां ईंटें बनती पकती हैं।

राजा जी ने कहा, पंडित जी! आज जो हमने आपको दूत भेज के बुलाया है प्रयोजन हमारा यही था कि आप कोई ऐसा ग्रंथ रचें कि जिसमें जगत के सब छलबल और उनकी युक्तियाँ लिखी हुई हों। जब वह ग्रंथ आप हमको लिख देंगे तो छपवा के सर्व देशों में भेजा जाएगा। इससे निश्चय है कि कोई किसी के धोखे में नहीं आया करेगा। जिन प्रकारों से लोग मूर्खों को धोखा देते और लूट लेते हैं वे सब प्रकार उसमें लिख देना चाहिए।

पंडित जी बोले, सत्य वचन महाराज! परन्तु ऐसा ग्रंथ मुझ से शीघ्र नहीं बन सकेगा। आप शीघ्र-से-शीघ्र कहें तो मैं एक वर्ष में ऐसा ग्रंथ लिख सकूँगा।

राजा जी ने कहा, बहुत अच्छा! परन्तु जितना हो सके उसको शीघ्र लिखना चाहिए।

पंडित जी ने एक वर्ष में जब वह ग्रंथ लिखके राजा को दिया तो राजा जी ने बहुत प्रसन्न होके सहस्र मुद्रापंडित जी को अर्पित की। उस ग्रंथ में जिसका नाम उन्होंने 'कौतुक संग्रह' रक्खा था रसायन सिद्धि मंत्र-तंत्र और कई प्रकार का धोखा देना लिखा हुआ था कि जिसको पढ़कर कोई कभी भी धोखे में नहीं आ सकता।

जब पंडित जी वह रुपये लेकर आए तो घर के द्वार पर यह सन्देश मिला कि जो जन्मपत्री लालमणि पंडित वासुदेव शास्त्री ने मँगाई थी वह उनकी कन्या से मिल गई हैं और वह यह भी कहता है कि शास्त्री जी महाराज माघ सुदी अष्टमी का विवाह देते हैं और आपने प्रमाण करना होगा।

पंडित जी ने सुनते ही बहुत आनन्द माना और पूछा कि वासुदेव शास्त्री कौन से? क्या वे हैं कि जो मिशन स्कूल में पढ़ाते और पन्द्रह रुपए मासिक पाते हैं, भाई वे तो काशी से बाहर किसी ग्राम के वासी सुने जाते हैं,सो हम तो काशी से बाहर अपने बेटी-बेटे का विवाह करना नहीं चाहते।

सन्देश लाने वाला बोला, महाराज! आपका ध्यान कहाँ चला गया? ये तो वे वासुदेव जी हैं कि जो जयपुर के राजा के गुरु और बड़े प्रतापी हैं। रहते तो वे सदा जयपुर में ही पर अब कन्या का विवाह यहाँ काशी

में अपने भाई-बंधों के बीच बैठ के करने आए हैं।

पंडित जी ने कहा हाँ ठीक, वे तो बड़े प्रतापी और तेजस्वी हैं और उनके पिता पितामह भी काशी में गिनती के थे। और उनका कुल बहुत उत्तम और घर सब ब्राह्मणों में प्रतिष्ठित है।

जब पंडित जी भीतर गये तो वह सहस्र मुद्रा अपनी स्त्री को देके कहा कि बड़े आनन्द की बात है कि आज ही लालमणि के विवाह का सन्देश एक ऐसे कुल से आ गया है कि जो सारी काशी में विख्यात है।

पंडित जी ने अपने भाई-बंधु और पंचों को बुला के तुरन्त लालमणि के माथे पर तिलक कराया और सबके सामने शास्त्री वासुदेव जी के कुल की उपमा की।

जब विवाह का समय निकट आया तो पहले शास्त्री जी को एक पत्र लिखा जिसमें यह वृतान्त था—

स्वस्ति श्री श्रीमन्निखिल विद्याविशारद पंडित वासुदेव शास्त्री जी के प्रति नमस्कार प्रमाण के अनन्तर प्रार्थना है कि आपने अत्यन्त अनुग्रह से हमारे लालमणि के सिर पर हाथ रखना चाहा है इसमें मैं अपनी सुभाग्यता और उत्कृष्टता समझता हूँ और लाममणि भी बड़ा ही भाग्यशाली है जिस पर आपकी सुदृष्टि हुई है। श्रीमान्, आपने हमारी कुल को पवित्र करना चाहा है तो हम क्यों न स्वीकार करेंगे, परन्तु मेरी एक प्रार्थना है कि मेरे चित्त में विवाह के विषय में कई संकल्प भरे हुए हैं सो मैं आपको सुना देना चांहता हूँ। निश्चय है कि आप भी उनको सुन के स्वीकार्य समझेंगे, यद्यपि मैं जानता हूं कि ऐसी बातें मेरे मुँह से निकलने में कोई मुझको अहंकारी समझेगा और कोई कहेगा कि यह धन के लगाने में संकोच करना चाहता है, कोई कहेगा क़ि यह जगत से न्यारी मर्यादा बांधना चाहता है, कोई कहेगा कि यह अपने कुल धर्म से उलटा चलता है, किसी को यह भ्रम होगा कि यह लोक विरुद्ध व्यवहार करता है। परन्तु मुझ को निश्चय है कि आप जो शास्त्रज्ञ और सब मर्यादाओं को जानने हारे हो मेरी बात से आप कभी बुरा नहीं मानेंगे। और आपको यह भी विदित है कि यह व्यवहार शास्त्रीय और यह केवल मूर्खों और स्त्रियों ने शास्त्र से विरुद्ध

ठहरा रखा हैं और आप इस बात को भी भलीभाँति जानते होंगे कि अमुक व्यवहार के करने में सुख और अमुक में दुःख होता है अब मैं अपने मन की बातें प्रकट करता हूँ सुनिये–

1. विवाहों में स्त्रियों का पुरुषों के सामने गाना बंद कर दिया जाय।

2. जो कोई किसी समय गावे भी तो सिठनी या कोई निर्लज्ज वाक्य मुख से न निकाले और यदि विवाह वाले घर के भीतर भीतर कुछ मंगल शब्द स्त्रियां गा भी लें तो डर की बात नहीं, पर बाज़ारों में स्त्रियों का गाती जाना अवश्य बंद कर देना चाहिये।

3. बराती लोग पैसा रुपया कुछ न बखेरा करें।

4. चूहड़े चमार आदिक कंगाल एकट्ठे होकर बरातियों के घर पर हल्ला न मचाया करें।

5. बरातियों से जो कुछ खर्च कराना हो सो बेटी वाले की पंचायत एक बार लेकर अधिकारी लोगों को अपने हाथों से बांट दिया करे परन्तु बरातियों को बहुत बार न सताना चाहिये।

6. बरात में बहुत-सी रथों और गाड़ियों और घोड़ों का बुलाना वा ले जाना बंद किया जाय।

7. जो शकुन वा टेहले शास्त्र से बाहर हों उनको अवश्य दूर कर देना चाहिए।

8. जिन व्यवहारों से बेटी बेटे वाले के बीच में बैर और विरोध खड़ा हो सके उनका कभी आरंभ न होने पावे।

9. बेटी-बेटे के माँ-बाप और बड़े भाई का मिलना-जुलना जो विवाह के पीछे रुक जाता है यह बात अच्छी नहीं। वरन आपस में अत्यन्त मिलाप होना चाहिये।

10. जो द्रव्य अग्नि क्रीड़ा और नाच में व्यर्थ लुटाया जाता है वह बेटी-बेटे को देना चाहिये।

11. बेटे-बेटी वाले की ओर से जो बेटी के लिये कपड़े बनाए जाते हैं वे ऐसे होने चाहिये कि जो पहनने के काम आया करें। जो अत्यन्त गोटे किनारी तिल्ला और कलावतू आदि से लदे हुए सदा गठड़ी और पिटारी

में धरे ही दो कौड़ी के रह जाते हैं उनके बदले बेटी को कुछ गहना बना देना चाहिये।

12. खाना खिलाना एक ऐसी पवित्र और उचित रीति से चाहिये कि जिसमें न किसी प्रकार की अशुद्धि होने पाये और न खाने वाले को उसकी आशा में सारा दिन जभाइयां लेनी पड़ें।

13. बाप को चाहिये कि जो गहना कपड़ा बरतन आदि पदार्थ बेटी को दे वह ऐसा हो कि उसके काम आवे, वैसा न हो कि जब उसमें से कुछ बेचना चाहें तो जिस पर रुपया लगा था। उसका चार आना पल्ले पड़े। इस प्रकार की और भी बहुत बातें हैं, जिनसे सारा भारतखंड दुखी है। परन्तु कोई पलटने का उद्यम नहीं कर सकता।

श्री शास्त्री जी महाराज, जब आप इन बातों को अपने घर से और इधर मैं अपने घर से बंद कर दूंगा तो निश्चय है कि देखा देखी सारी काशी में से दूर हो जाएँगी। और जब काशी से इन बातों को निकाल दिया, कि जो भारतखंड का एक प्रसिद्ध नगर है तो पूर्व-पश्चिम उत्तर-दक्षिण के सब नगरों में इसी के अनुसार विवाह करने लग जाएँगे और आपका यश होगा।

पत्र के पहुँचते ही शास्त्री वासुदेव जी ने बड़े आनन्द से उत्तर लिखा कि जिसका वृत्तान्त यह था–

सिद्धश्री सर्वगुणोत्कृष्ट विद्वज्जनमंडली वरिष्ठ, श्रीमत्पंडित उमादत्त जी के प्रति कोटांशोन्नति पुंज के पश्चात् प्रकट हो कि, कृपा पत्र आपका मनोहर संकल्प वृंद युक्त पहुँच के आनन्द जानक हुआ, भगवन्! मैं तो प्रथम ही इस बात को चाहता था कि किसी ऐसे घर में कन्या समर्पण हो कि जहाँ पुरानी भाँति के मनुष्य न हों। विद्वन! अब तो समस्त बुध जनों को यही उचित है कि समय के अनुसार कार्य का व्यवहार किया करें। जो बातें आपने लिखीं मैं इनमें ऐसी कोई नहीं देखता कि जो ग्रहण करने के योग्य न हो। मुझको पहले ही से इन शास्त्र विरुद्ध विचारों का दूर करना श्रेष्ठ दिखाई देता था। परन्तु अब बड़ा आनन्द हुआ कि आप भी मेरी नाईं इन दुराचारों से घबराए हुए हो। हाय जगत में कैसी अंध

परंपरा चली आती है कि एक दूसरे के पीछे चला जाता है। कोई आँख मूंद के यह नहीं सोचता कि यह व्यवहार मैं क्यों और कैसे करता हूँ। बुद्धिमान वही है कि जो सम्पूर्ण व्यवहारों के पूर्व विचार को मुख्य रखे। और जो कि देखा-देखी कुएं में गिर जाए, हम उसको पंडित नहीं कहेंगे सो आप दृढ़ निश्चय रखें कि हमारे घर में आपकी इच्छा से विरुद्ध कोई व्यवहार नहीं होने पावेगा। हम सपरिवार आपके अनुकूल हैं। नमोनमः।

पंडित उमादत्त जी इस पत्र को पढ़कर फूले न समाते थे, और अपनी स्त्री से कहने लगे कि लालमणि की माँ! हमको ईश्वर ने समधी भी वैसे ही मिला दिए कि जैसे हम चाहते थे। नहीं तो कई बातों में विमन और उदास होना पड़ता। अब हमको यह भी निश्चय है कि उस घर की बेटी भी बड़ी चतुर होगी कि जिसका बाप ऐसा बुद्धिमान है। पंडित उमादत्त जी ने विवाह के योग्य भूषण वस्त्र आदि ठाठ तो पहले ही बना रखा था जब चलने का दिन आया तो 10-12 मनुष्य अपने भाई-बंधुओं में से बुला कें साथ लिए और दो रथों और दो-तीन गाड़ियाँ और पाँच टहल वाले कहार बरात के साथ लेकर शास्त्री वासुदेव जी के स्थान को चल पड़े। चाहे गली-कूचे के कई लोग चलने के समय कह चुके कि पंडित जी महाराज! आपको भगवान ने सब कुछ दे रखा और सैंकड़ों रथ गाड़ियाँ और हाथी-घोड़े-बग्घी, पालकी आदि पदार्थ नैकसी जीभ हिलाने में आपके पास काशीराज के यहाँ से आ सकते थे। फिर आप लालमणि का विवाह चुपके से क्यों करते हैं, फिर बहुत-सी लुगाइयाँ यह कहती भी पास से निकली कि ऐ हैं री! इस पंडित की एक ही पूत और घर में सब तरह से भगवान की दया है। और समधी भी भगवान् ने अच्छे खाते-पीते इनके बराबर के ही मिलाये थे पर यह निगोड़ा इस समय पैसे का पूत बना जाता है। क्या यह इतना पदार्थ छाती पर ले जाएगा? कई भिक्षुक और कंगाल कहते कि मिस्र जी! देखना ब्राह्मण हो न हो निकलना यह मन खोलने का बेला है। कोई-कोई भाई बंधु पंडित जी को सुनाके कहता था कि भाई! पैसा हाथ से छोड़ना बड़ा कठिन है। पत प्रतीत तो फिर भी हाथ आ जाएगी, पर गया हुआ धन फिर हाथ नहीं आता।

पंडित जी महाराज सबकी सुनते हुए चुपचाप चले जाते किसी को कुछ उत्तर नहीं देते थे। जब शास्त्री जी की गली में आके डेरा किया तो शास्त्री जी ने कहला भेजा कि मुझको मेरे संबंधी और पड़ोसी इस बात में बहुत दुखी कर रहे हैं कि तुमने इतने बड़े होके चुपके से बेटी का विवाह कर लेना चाहा है। यदि हमारे कुल के समान धूम-धाम से विवाह न करोगे, तो हम लोगों में से तुम्हारे घर कोई नहीं आवेगा। सो अब बताइए कि जब कोई भाई बंधु विवाह में न आया तो काम कैसे चलेगा। क्योंकि एक तो नगर में अपकीर्ति होगी दूसरा मैं अकेला आपकी टहल-सेवा कैसे कर सकूँगा। उनको मनाने जाता हूँ तो वे नाच-मुजरा और अग्नि क्रीड़ा और कई प्रकार की धूमधाम देखना चाहते हैं कि जो आपकी इच्छा से बाहर है। सो कहिए कि अब मुझे क्या करना उचित है?

पंडित उमादत्त जी ने उसके उत्तर में कहला भेजा कि मेरे भाई-बंधुओं ने भी चलती समय मुझसे कुछ थोड़ी नहीं की थी। पर मैंने उनकी एक नहीं मानी। आप जानते हैं कि जब-जब कोई पुरुष किसी नई बात का आरम्भ करना चाहता है तो अथवा अपनी पुरानी रीतियों को सुधारने की इच्छा करता रहा है उसके भाई-बंधु और सांसारिक लोग कभी उससे प्रसन्न नहीं रहे। सो जो अपने भाई-बंधु और जगत की अपकीर्ति से डरता रहे वह संकल्पों को कभी पूर्ण नहीं कर सकता। बात तो तब ही बनती है कि यदि उन्मत्त हस्ती की नाईं अपने मार्ग में सीधा चला जाए और लोगों के बकने पर कान न धरे। जगत का बकना उस दशा में सुन सकना चाहिए कि जब कोई बुरा काम करते हो, जिस दशा में आप सारे जगत का सुखदायक और परम श्रेष्ठ काम करते हो, तो फिर मूर्खों के बकने का क्या भय करना चाहिए। आप जानते हैं कि जब कोई माता-पिता अपने सोये पड़े बालक को जगाने लगत हैं तो बालक दुखी होके क्या बकता है परन्तु माता-पिता का धर्म नहीं कि उसको सोया ही छोड़ दें। सो वैसे ही यह संसारी लोग भी अज्ञान-निद्रा में सोये पड़े हैं। यदि कोई इनको जगाना चाहता है तो अत्यन्त दुखी होते हैं। सो शूरवीर वही है, कि जो वाक्य-कुवाक्य सहार के इनके जगाने में लगा रहे। शास्त्री जी महाराज

आप यह भी विचारिए कि लोगों का क्या जाएगा। यह तो विलास देख के अलग हो जाएँगे और घर हमारा तुम्हारा लुटेगा। आप इन लोगों के बुलाने और मनाने की कुछ इच्छा न करें। और न मैं इनकी टहल-सेवा का भूखा हूँ। इनकी चाल यह भी होती है कि जितना आप इनको बुलाएँगे, यह दूर भागेंगे। और यदि आप इनसे दूर रहना चाहेंगे तो अपने आप आपके पीछे फिरेंगे।

पंडित उमादत्त जी की इन बातों को सुनके शास्त्री जी का मन दृढ़ हुआ और शास्त्रीय रीति के अनुसार विवाह कर्म में प्रवृत्त हुए। विवाह का लग्न जो रात का था, इस कारण सारी रात लालमणि को जागना पड़ा और उनींदे रहने के कारण प्रातः ही लड़के को थोड़ा-सा ज्वर हो गया। जब गली कूचे में यह बात प्रकट हुई कि आज दूल्हे को तप चढ़ आई है, तो भाई-बंधु और स्त्रियों में यह बात फैली कि भाई क्यों न हो क्या हमारे पुरुखा लोग मूर्ख थे? कि जिन्होंने विवाह से पहले चील्ह का पूजन ठहराया हुआ है। क्या वृद्ध लोग भूल के दूल्हे से गधे का पूजन कराया करते थे। भाई, इन्होंने तो सबकी मानता छोड़ दी। हमने सुनते हैं कि पुत्र वाला घर से चलने लगा तो उस कीकर के रूख को तो मनाया ही नहीं, जिसको सब लोग मनाया करते थे। सुना जाता है कि इसने चलने के समय लड़के को दही तो खिलाया ही नहीं, कोई बोला कि बहुत विद्या पढ़ने के कारण यह लड़का भी हाथों से निकला जाता है।

रात इसने लगन समय किसी का यह कहना भी नहीं माना कि बकरे का कान चीर के बेदी पर बैठता। कोई कहता, अरे तुम क्या कहते हो लड़का तो कल घर ही में आ घुसा उसने हमारे कुल की रीति के अनुसार पुराने जूते को भी सिर न झुकाया, और न इसने हमारी यह रीति मानी कि सूप के ऊपर पाँव घर के भीतर जाता, फिर भला इनको तप क्यों न चढ़ आती। भाई मनमतिये होना अच्छा नहीं, किसी की बात भी मान लेना चाहिए।

अब लुगाइयों की सुनिये! जब सुना कि आज दूल्हे का मन भारी है तो शास्त्री जी की लुगाई से आके कहने लगीं कि, पंडितानी जी! लड़के

का चित्त अनबन सुना है, क्या तुमने किसी शगुन वा टेहुले को तो नहीं तोड़ा? हम सुनती हैं कि तुम्हारे समधी तो किसी को भी नहीं मानते। गली की लुगाइयाँ कहती हैं कि कल बहुत लोग कह चुके पर बाप ने अपने पूत का कल्लू पीर के आगे सिर न झुकाने दिया, और यह भी सुना गया है कि जब लड़के को घोड़ी पर चढ़ाया तो लुगाइयों को लड़के के माथे पर बेसन का टीका भी न लगाने दिया, कोई कहती ऐ है री! लड़का आप ही बड़ा निडर है उसने हमारे सामने यह बात कही थी कि मैं लुगाइयों वाले सगन सूत कोई नहीं मानूँगा। एक लड़की पास से बोली अम्मा उसने सब लड़कियों को गाने से बंद कर दिया था; एक और लड़की बोली कि जब हम सब उसकी आँखों में अंजन डालने गईं तो उसने कहा मैं ये स्त्रियों वाले छनन-मनन कभी नहीं मानूँगा। एक ने कहा हम सब बहुतेरा ही समझा रही पर दूल्हे ने न तो नगर की रीति अनुसार आप ही मदारी शाह की भीत को सलाम किया और न दुल्हन को ही करने दिया। ये बातें हो ही रही थीं कि शास्त्री जी घर में आ निकले। लुगाइयों की भीड़ देख के पूछा क्या हो रहा है? एक बुढ़िया बोली क्या हो रहा है बतायें? दूल्हे की चिंता में बैठी हैं।

शास्त्री जी ने कहा, दादी जी! रात भर जो वेदी पर बैठ के जागना पड़ा इस कारण उसका सिर कुछ भारी सा हो गया था अब तुम्हारी दया से अच्छा है, चिंता मत कीजिये।

बुढ़िया बोली, हाँ! रात के जागने से भी किसी को तप आ जाती होगी? तुम्हारा तो कोई निराला ही मत है, तुम तो सबके दादा जनमे हो कि जो कुनबे में से किसी की नहीं मानते? चलो, लड़के को घर में भेज दो, जिस पीर फकीर देवी देवता की भूल हुई होगी आप ही क्षमा करा लेंगी।

शास्त्री जी ने उसका मन उदास करना अच्छा न समझ के यही कहना योग्य समझा कि, बहुत अच्छा दादी जी! उनके डेरे में नाई को भेजता हूँ, यदि बालक उनके साथ आ गया तो आप जो चाहें सो कर लें।

तीन दिन बरात वहाँ रही। चौथे दिन शास्त्री जी ने चाँदी की खाट

बिछाई। दान-दहेज का क्या ठिकाना था। बड़े-बड़े इकावन बरतन और एक सौ ग्यारह सूती और रेशमी वस्त्र, इक्कीस गऊ, ग्यारह घोड़े और सोने-चाँदी के दुहरे गहने और सीतापुर नाम एक गाँव जो जयपुर के राजा ने शास्त्री जी को दिया था। यह सब पदार्थ तो लड़की के लिये निकाला और सोने के कड़े मोतियों की माला, पाँचों वस्त्र लड़के के लिए धरे। एक दुशाला और इकावन मोहरें श्री पंडित उमादत्त जी के लिए रख के शास्त्री जी ने साथ जोड़े और कहा कि यह पुष्प पत्र आपकी भेंट है। मैंने जो कन्या आपको दी है यह भोली-भाली आपकी दासी कुछ सेवा-टहल नहीं जानती। हमारे कुल की लाज-काज आपके आधीन और मेरी पत आपके हाथ है। सो सदा कृपा दया रखते रहना, आपके दास हैं।

उमादत्त जी ने यह बात सुनके नेत्र जल से भर लिये और कहा, शास्त्री जी महाराज! आप यह क्या कहते हैं, आपने जो हमारे सब दरिद्र दूर कर दिये? क्यों न हो, आपके वंश का यह इन्हीं बड़ाइयों से विख्यात हुआ है, सब लोग जानते हैं कि आपके वृद्ध भी सदा ऐसी ही उदारता दिखाते रहे हैं, हमारा लालमणि अत्यन्त बड़भागी है कि जिसके सिर पर आपका हाथ रक्खा गया है। यह कहके पंडित उमादत्त जी ने जल का लोटा और अर्धा लालमणि के साथ में देकर ग्यारह मोहर का संकल्प कुल पुरोहित को और पाँच उपाध्याय को दिलवाया। दो मोहर नाई और दो ही झीवर को देकर पाँच सौ रुपया वर वधू के सिर पर न्योंछावर करके नगर के कंगालों के लिये निकाल दिया। फिर सारा पदार्थ छकड़े पर लदवा बड़े आनन्द मंगल से घर में आए। घर में आते ही अपनी गली में की सब विधवाओं और कंगालों को पाँच-पाँच रुपये लालमणि के हाथ से दिलवाये। और दो सौ रुपये विवाह के उत्सव के पश्चात् शास्त्रीय पाठशाला में भिजवाये कि जहाँ विदेशी विद्यार्थी पढ़ते थे।

अब लालमणि की माँ फूली न समाती थी और भाग्यवती भी अपनी भावज को देखकर बहुत प्रसन्न हुई। लालमणि की माँ गली की लुगाइयों से कहती कि, हमारी बहू शास्त्री जी की बेटी है पढ़ने-लिखने में बड़ी चतुर होगी। भगवान् ने बड़ी दया की कि जैसा हमारा लालमणि गुणवान् और

विद्या की खान है वैसी ही उसको बहू भी मिली। जो लुगाइयाँ बहू को देखने आतीं, इसके रूप यौवन शील स्वभाव की बड़ाई करके हँसी में यह अवश्य कह जातीं कि, पंडितानी जी बहू तो भाग लगे, बहुत अच्छी मिली, पर शास्त्री जी की बेटी है, जैसा उन्होंने कुनबे में से विवाह के समय किसी का कहना नहीं माना वैसे यह भी हम सबसे निराले ढब की ही न निकल आवे।

बहू कुछ दिन तो मारे लाज और संकोच के किसी की बात का उत्तर नहीं देती थी पर जब थोड़े दिन में अपने पराये सब लोगों को पहचान जान लिया और सब लुगाइयाँ भी एक-एक दो-दो बार देख भाल लीं तो यथायोग्य सब का आदर भाव और मान सत्कार करने लगी। तब तो सब स्त्रियां और लड़कियाँ जहाँ बैठतीं इसी के शील स्वभाव की उपमा किया करती थीं। लालमणि की माँ भी इससे बहुत प्रसन्न रहने लगी, क्योंकि, थोड़े ही दिनों में घर का सब काम-काज जो उस को करना पड़ता था बहू ने सम्हाल लिया। ईश्वर ने बुद्धि ऐसी दी थी कि सासु को कोई बात मुख से नहीं निकालनी पड़ती, जिधर ध्यान करती सब काम हुए हवायँ ही देखती।

अब जो घर का हिसाब लिखना और सीना-परोना आदि भाग्यवती के काम भी बहू ने ही सम्हाल लिये तो भाग्यवती के लिखने पढ़ने के लिए कुछ और भी अवसर प्राप्त हो गया। जैसा कि उसने 'आत्मचिकित्सा' के पीछे कुछ साहित्यशास्त्र का पढ़ना भी आरम्भ कर दिया कि जिसके पढ़ने से छंद प्रबन्ध रचने की सामर्थ्य हो जाती है। जब थोड़े ही दिनों में उसको नायिका भेद, अलंकार और छंदों का ज्ञान हो गया तो कुछ-कुछ कविता भी करने लग गई। एक दिन उसके पिता ने पूछा बेटी भाग्यवती! हम सुनते हैं कि तुम को छंद रचने की भी अच्छी सामर्थ्य हो गई है। सो यदि यह बात सत्य है तो दो चार श्लोक हम को काशीराज की स्तुति के बना दे कि तेरे विवाह के लिए कुछ द्रव्य प्राप्त हो जाए। भाग्यवती ने विवाह का नाम सुनके तो नेत्र नीचे को कर लिये परन्तु श्लोकों के विषय में धीरे से यह उत्तर दिया कि संस्कृत श्लोकों के बनाने में तो मुझे अभी पूरी

सामर्थ्य नहीं पर भाषा के दोहे चौपाई और कवित्त आदिक जितने छंद हैं मैं बुरे भले सब बना लेती हूँ जैसा कि देखिये मैंने एक रूमाल पर कुछ सुई का काम किया है। और उस सुई के काम में मैंने एक न्या बना के कुंडलियाँ छंद भी लिखा है। कि जो उसी रूमाल की स्तुति में है।

पंडित जी उस रूमाल को देख के बहुत ही प्रसन्न हुए और मन में कहा यह राजा जी के योग्य है। जब पंडित जी ने दूसरे दिन यह बात कह के राजा जी को दिखाया कि महाराज! यह रूमाल भाग्यवती ने बनाया है तो राजा जी अत्यन्त प्रसन्न हो के कहने लगे आहा! यह तो बहुत ही अच्छा बनाया और इसके बीचोंबीच जो उसने कुंडलियाँ लिखा हैं इस को देख के यह निश्चय करते हैं कि यह कन्या बड़ी ही चतुर है। और इसके समान काशी भर में दूसरी कोई नहीं होगी। लो आज यह मोतियों की माला हमारी ओर से भाग्यवती को देना। और जब आप उसका विवाह करो तो कुछ दिन आगे हम को विदित करना।

पंडित जी प्रसन्न हो कर भाग्यवती के पास आये और गली में की कई लड़कियों के सामने यह बात कह के वह माला दी कि बेटा भाग्यवती! राजा जी तेरे बनाये हुए रूमाल को देखकर बड़े आनन्दित हुए, सारी सभा के सामने उन्होंने यह मोती की माला तेरे लिए भेजी है। उन का मन गुण विद्या चतुराई को देख के अति आनन्द मानता है। यदि इन लड़कियों में से भी कोई कुछ अपनी चतुराई राजा जी को दिखावे तो वह अवश्य अपनी उदारता दिखावेंगे।

भाग्यवती ने लपक के उस माला को लिया और अपनी माता जी को जा दिखाई। इतने में पंडित जी ने पास जाके कहा लालमणि की माँ! लो आज तो राज़ा जी ने यह भी कह दिया है कि भाग्यवती के विवाह से पहिले हमको विदित करना। सो यदि तुम भी श्रेष्ठ समझती हो तो पंडित जगदीश जी के यहाँ उसका संबंध कर दें, क्योंकि एक तो वे राजमान्य और सारी काशी में धनाढ्य हैं दूसरा उनका पुत्र मनोहरलाल आज काशी में अद्वितीय पंडित है, पिछली सभा में उस बालक को शास्त्री की पदवी मिली। और राजा लोग उस को सदा अपने पास रखना चाहते

हैं हमने देखा है कि उसका जन्मपत्र भी भाग्यवती से मिलता है और तुम उसके रूप लक्षण को देख के भी मन में प्रसन्न होओगी। अवस्था सोलह वर्ष की और शील संतोष में भी भाग्यवती के समान है।

पंडितानी बोली तो बस फिर आप और क्या देखते हैं। सुख और सम्पत तो लड़की के भाग्य पर है पर माता-पिता का यह धर्म है कि घर-वर अच्छा देख लें। सो अब विलम्ब न कीजिये।

पंडित जी ने तुरन्त भाग्यवती का संबंध पंडित जगदीश जी के यहाँ भेज के यह प्रकट किया कि वैशाख शुक्ल अष्टमी का विवाह है।

पंडित जगदीश जी ने इस समाचार के पहुँचते ही अपने वंश के लोग बुला के सारा वृत्तांत सुनाया। लोगों ने कहा महाराज! यों घर तो पंडित उमादत्त जी का बहुत उत्तम और प्रतिष्ठा भी भगवान की दया से अच्छी और राजमान्य है, परन्तु उनका स्वभाव कुछ जगत से निराला सुना जाता है। जब वह अपने पुत्र लालमणि को शास्त्री वासुदेव जी के यहाँ ब्याहने आये थे तो इतने बड़े होकर न कोई बाजा लाये और न कोई तमाशा, कंगालों की नाई दो-तीन गाड़ियाँ लेकर आ बैठे थे। हाँ हम सुनते हैं कि पुरोहितों और उपाध्यायों और नाई कहार आदिकों को तो बहुत कुछ दिया और पाँच सौ रुपये गली में के कंगालों को भी दिये, परन्तु इतना देना तब ही शोभा पाता कि यदि बरात के साथ पाँच सात प्रकार का नाच और कई चौकियां गाने-बजाने वालों की होतीं। उनसे तो न कोई पाँच सात सौ रुपये की बखेर ही बन पड़ी और न एक रुपये तक की किसी को अग्निक्रीड़ा ही दिखाई; चुपके से बेटे का विवाह कर ले गये।

पंडित जगदीश जी ने कहा हम तो इन बातों में उनकी श्लाघा ही करेंगे कि जिन्होंने मूर्खों की भाँति अपने धन को व्यर्थ न लुटाया। भला तुम ही बताओ कि यदि बखेर के समय एक दो कंगाल भीड़ में दब जाते तो सरकार में कौन खिंचा-खिंचा फिरता? और अग्निक्रीड़ा में दो घड़ी की आहा के अतिरिक्त क्या लाभ होता? गाना, बजाना, नाच मुजरा तुम लोग भी तब लौं ही अच्छा समझते हो कि जब लौं इसके दोष को नहीं सुना, वे तो पंडित थे ऐसा व्यर्थ उत्साह क्यों करने लगे थे? लोगों ने कहा अच्छा

महाराज! आप पंडित हो जिस बात को चाहो खरी खोटी बना सकते हो, हमार यही धर्म है कि आप के पीछे चलते रहें।

पंडित जगदीश जी ने विवाह का दिन नियत करके जब पंडित उमादत्त जी के यहाँ सन्देश भेजा जो पंडित जी ने भाग्यवती के विवाह का सारा वृत्तान्त राजा जी को जा सुनाया। राजा जी ने एक सहस्र मुद्रा दे के कहा पंडित जगदीश जी बड़े प्रतापी और प्रतिष्ठित हैं। उनकी सेवा-पूजा में न्यूनता न होने पावे।

जब विवाह का दिन आया तो पंडित उमादत्त जी के लिखे अनुसार पंडित जगदीश जी यथायोग्य समाज बना कर आ प्राप्त हुए। लग्न के समय दोनों ओर से जैसा उचित था, दान, पूजा और औदार्य प्रकट हुआ। फिर खाना खिलाना जैसा कि हुआ उस में कौन दोष लगा सकता है। चौथे दिन यथाशक्ति पंडित उमादत्त जी ने भाग्यवती और मनोहर लाल अपने जमाई को, और उनके पिता को दान दहेज दे के नमस्कार किया और चलने के समय हाथ जोड़ के यह बात कही कि हम आपके दास और हमारी लाज आपके हाथ है।

अब भाग्यवती अपने ससुराल में आई। इसके गुण विद्या चतुराई की धूम तो सारी काशी में पहिले ही मच रही थी, नित्य नित्य बहुत-सी स्त्रियाँ इसके देखने को आने लगीं। जो कोई एक बार भाग्यवती के पास बैठके बात-चीत सुन कर जाती फिर उसका मन अपने घर में काहे को लगता, आठों पहर इसी के देखने की खेंच लगी रहती। थोड़े ही दिनों में इसने अपने प्रेम भरे बोलचाल से सब लोगों को वशी कर लिया। इसके घर के लोग तो इसके काम-काज और शील स्वभाव से प्रसन्न थे ही परन्तु गली-कूचे में भी बाल वृद्ध स्त्री-पुरुष ऐसा कोई न था कि जो इसकी श्लाघा न करता। चाहे यह नई बहू और अवस्था की छोटी भी थी पर दूर-दूर की स्त्रियाँ अनेक व्यवहारों में इससे बात पूछने को आया करती थीं। बड़ियों का आदर छोटियों पर दया और समान वालियों से मैत्री और अयोग्यों की अपेक्षा इस का यह व्यवहार देख के दो-चार स्त्रियाँ सदा इस के पास बैठी रहती थीं, इस कारण अब इसने उनको कुछ शिक्षा करना

आरम्भ किया। किसी को कहती तुम्हारी बुद्धि बहुत अच्छी दिखाई देती है क्या अच्छा हो कि यदि तुम थोड़ा-सा लिखना-पढ़ना सीख लो। किसी को कहती तुम आज से कुछ सीना-परोना सीखा करो। किसी को कहती, कल मैंने ऊपर से तुम्हारे घर में यह बात होती सुनी थी कि भाजी में लोन थोड़ा था, यदि तुम सीखना चाहो तो मैं दस दिन में तुम को सारे व्यंजन बनाने सिखा सकती हूँ। उसकी ऐसी मीठी और मनोहर वाणी थी जिसको जो कुछ कहा सो ही मान लिया। एक लड़की ने कहा मेरे पिता मुझको कई बार अक्षर सिखा चुके हैं। उनके नाम तो मैं जानती हूँ पर जब वे पूछते हैं कि यह कौन-सा अक्षर है तो मैं उसकी मूर्ति नहीं पहिचान सकती। सो कोई ऐसी युक्ति बताओ कि जिससे मैं अक्षरों की मूर्तियां पहिचान लिया करूँ।

भाग्यवती ने कहा, यह बात तो बहुत सहज है। मैं पंद्रह बीस दिन में तो तुम को सब अक्षर सिखा दूँगी। तुम कल सवेरे से एक घड़ी नित्य मेरे पास आया करो। जब दूसरे दिन वह लड़की गई तो भाग्यवती ने उसके हाथ में पाँच बादाम दिये कि जिन पर ककार से लेकर ङकार तक पाँच अक्षर के स्वरूप लिखे हुए थे। फिर उनमें से ककार वाला बादाम निकाल के उसको दिखाया और कहा, ला! मैं इसको इन पाँचों बादाम में मिला देती हूँ तुमने ढूँढ़ के यही बादाम मुझको पकड़ा देना। एक-दो बार तो उसने कोई और अक्षर पकड़ा पर फिर आप ही वही अक्षर निकाल के देने लग गई। जब उसने ककार की मूर्ति भली भाँति पहचान दी तो फिर वैसे ही खकार की भी पहिचान ली। जब पाँचों की मूर्ति उसके मन पर लिखी गई तो, फिर चकार आदिक पाँच भी वैसे ही उसकी पहिचान में कराये। इसी रीति से छः-सात दिन में अक्षरों की पहिचान और दस दिन लगमात्र की पहिचान करा के छोटे-छोटे पद पढ़ाने लग गई। 5 बजे से दस बजे लों लिखाना-पढ़ाना और दस बजे से बारह लों सीना-सिलाना सिखा के ऊपर का सारा दिन घर के काम-काज में पूरा करती थी, पर घर का सुधारना बनाना नौकर-चाकरों के आधीन होने के कारण कोई किसी काम-काज को हाथ नहीं लगाती थी। जो बरतन जहाँ पड़ा वह सांझ लों

वहीं पड़ा रहता। और कपड़ा जहाँ धरा वह वहीं पड़ा मैला हो जाता था। कई बार ऐसा भी हुआ कि किसी बहू का कोई गहना मंडेरे पर भाग्यवती ने उठाया, और कई बार किसी बेटी का छल्ला कोठे पर से किसी नौकर ने पाया। खाने और सोने के अतिरिक्त घर में कोई कुछ न जानती थी। पंडित जी जो कुछ घर में कमा के लाते, फिर के कभी नहीं पूछते थे कि कितना लाये ओर कैसे हुआ। अन्न'घी, मीठा, लोन-तेल आदिक सामग्री की कुछ गिनती नहीं थी कि महीने में कितनी आती और कहाँ जाती थी। चाहे नौकर-चाकर तो घर में चार-पाँच रहते थे पर यह कोई नहीं जानता था कि मुझे नित्य क्या-क्या काम करने चाहिये। भाग्यवती ने यह दशा देख के सोचा कि घर के सब व्यवहार जो बिगड़े तिगड़े'पड़े हैं इनको अवश्य सुधारना चाहिये। पर इतना विचार है कि यदि मैं किसी को कुछ समझाऊंगी कि तो मुझ से उसकी अनबन हो जाएगी। कोई ऐसी युक्ति निकालनी चाहिये कि जिस से काम भी चल जाय, और बुरा भी न माने।

जब तड़का हुआ तो भाग्यवती ने बिछौने पर से उठते ही सारे घर में झाड़ू दिया, और फिर आप ही रसोई के स्थान चौका लगाया और सब बरतन मल धरे, फिर आप ही दही बिलोकर अपने स्नान-ध्यान से अवसर पाया और लिखने-पढ़ने के स्थान पर जा बैठी। जब उसकी सासु जागी और सब काम हुआ हवाया पाया तो नौकरों से पूछा आज यह सारा घर झाड़ा-बुहारा हुआ देख के मेरा मन बहुत प्रसन्न होता है; सच कहो तुमको तड़के जागने की प्रकृति किसने सिखाई?

भाग्यवती ने यह सुनके कहा, ये लोग दिन भर सोये रहते और रसोई बनाने में बहुत दिन चढ़ा देते थे, इस कारण ये सब काम आज मैंने कर छोड़े थे। और आगे को भी मेरी इच्छा है कि नित्य मैं ही कर दिया करूँगी।

सासु ने कहा, ऐहै बहू! ऐसे छोटे कामों को तेरी बला हाथ लगाती है फिर ये निगोड़े नौकर दरमाहा काहे को पाते हैं! चलो तुमसे काम-काज कराना हमको अच्छा नहीं लगता। तुम तो भगवान् रखे अभी कोमलगात

और नई बहू हो फिर क्या हम अभी से तुमको कुछ काम-काज करने देंगी?

भाग्यवती बोली, आय! नौकर-चाकरों का होना तो बड़े घरों की शोभा है। भगवान ने तुमको दिया है तुम आगे दिये जाती हो। पर हम भी तो आपकी दासी ही हैं। यदि अपने घर का काम कर लिया करेंगी तो हमारा क्या घट जायगा। फिर अपनी दुरानियों और ननद की ओर ताक के कहा कि हमारा बहू बेटियों का कोमल गात तो तब ही शोभा पायगा कि यदि घर का काम करेंगी नहीं तो यह गात किस काम आवेगा? नौकर-चाकर चाहे कितने ही हों पर काम-काज जैसा अपने हाथ से ठीक होता है वैसा दूसरे के हाथ से नहीं होता। मैं तो इसमें प्रसन्न हूँ कि बाहर का काम-काज तो नौकर-चाकर किया करें और भीतर का काम-काज हम सब आप मिल के कर लिया करें। इसमें मैं दो फल देखती हूँ, एक तो अपने हाथों में काम करने से शरीर अरोग रहता है। और दूसरा अन्न वस्त्र भूषण बरतन आदि पदार्थ बिगड़ने नहीं पाते। जो लोग सदा निकम्मे बैठे रहते हैं न तो उनका कोई काम ही पूरा होता है और न उनके शरीर से आलस्य की ही निवृत्ति होती है कि जो सब व्याधियों का मूल है।

यह सुनके एक बहू ने कहा कि हमको तो तुम जो कुछ कह छोड़ो सो कर धरा करेंगी। दूसरी बोली हम तो पहिले ही से चाहती थीं कि कोई कुछ काम बताए। फिर बेटी देवकी ने कहा, भावी! अब तुम हम सब में चतुर आ गई हो, जो कुछ कहोगी कर लिया करेंगी। हम क्या करें इन सबको देख के मैं भी ढीली हो रहा करती थी।

भाग्यवती ने उत्तर दिया कि, मेरा कहाँ मुँह जो मैं तुमको कोई काम बता सकूँ, तुम तो मेरी बड़ी हो। हाँ मेरा धर्म यह ठीक है कि तुम सबके आगे मैं टहलन बनके रहूँ और जो कुछ आज्ञा तुम मुझको दिया करो सो तन मन से मान लिया करूँ।

यह सुनके सासु बोली, नहीं बहू! बड़ाई कुछ अवस्था का नाम नहीं, बड़ा तो वही है कि जो बुद्धि में बड़ा हो। सो क्या डर है तुम जिसको जो काम बता छोड़ो वह अवश्य कर लिया करेंगी।

भाग्यवती ने कहा, मेरा अपराध क्षमा हो, यदि आपकी इच्छा यही है तो लो मैं ही कह देती हूँ। क्योंकि जब लो हम सब मिलके एक-एक काम अपने ऊपर न उठा लेंगी घर की शोभा नहीं निकलेगी।

एक बहू को कहा, कि रसोई के समय आटा दाल घृत मिष्ठान लोन मसाला, अचार-मुरब्बा आदि जो सामग्री काम में आती है उसकी रखवाली तुम किया करो। इन वस्तुओं में से जो कुछ घटा हुआ देखो चार दिन पहिले कह दिया करो और जिसको इनमें से किसी वस्तु की इच्छा हो न तो वह आपसे निकाले और न कोई दूसरा हाथ लगावे जब दो तुम ही दो। और ईंधन तेल दाना घास आदिक की ताली भी आप ही के हाथ रहनी चाहिये और नौकर लोग झाड़ू पछोड़ के जब गेहूँ पीसनहारियों को दे दें तो तुलवा के आटे का धर लेना इत्यादि सब काम आपके पास रहें।

फिर अपनी मँझली दुरानी से कहा कि घर में जितने बरतन और गहने कपड़ा दरी पलंग सन्दूक तम्बू आदि पदार्थ हैं इन सबको आज ही से कागज पर लिख रखो, इनमें से जो वस्तु टूट-फूट जावे वा खो जाय अथवा जो कुछ नया बनाना चाहो सो ऐया जी से कह दिया करो।

जब कहार बर्तन मांज चुके तो नित्य उन्हें गिन के धर लेवें, और जो किसी दूसरे के घर में कोई वस्तु अपने यहाँ की माँगी हुई जाए उसका नाम लिख लेना और फिर शुद्ध करके मँगा लेना यह सब काम आपको करना चाहिए।

फिर ननद देवकी से कहा, बीबी जी! आपने जो इनको देख के ढीली ही रहना कहा यह सच है पर आपकी तो हम लोगों पर दया ही बहुत है।

आप सदा अपनी कृपा रखो, काम-काज कर लेने को हम आपकी दासी ही बहुतेरी हैं। क्योंकि यहाँ काम-काज करने का केवल हम ही को अधिकार हैं कि जिन्होंने इस घर में अपना सारा आयु व्यतीत करना है।

फिर भाग्यवती ने हाथ जोड़ के कहा, यदि तुम सबको आज्ञा हो तो यह सब काम मैं अपने ऊपर उठाती हूँ कि जो कुछ पदार्थ घर में आवे-जावे उसका लेखा-जोखा उसी रीति से लिख रखा करूँगी कि एक

छदाम् तक को भी भूल न होने पावे। और सौदा सूत लाने के समय नौकर लोग जो हमारे घर से हाथ रंग रहे हैं इनको भी मैं ही सीधे कर लूँगी।

सासु बोली, बहू! और क्या चाहिए, यदि लेखे-जोखे की लिखा-पढ़ी तुम अपने हाथ में रखो तो हमारे बहुत काम सीधे हो जाएँगे। देखो हज़ारों रुपये बाहर से घर में आते और घर में कोई ऐसा बड़ा खर्च भी नहीं, पर हमको कुछ प्रतीत नहीं होता कि वह द्रव्य कहाँ चला जाता है। बेटी, तुम बालकों को क्या सुनाऊँ पाँच सौ रुपया तो सेठ रामजीलाल का हमारे ऊपर आता है और पचास-साठ रुपया हारा नन्दा कहार उचावत के हमारी और बतलाता है। लड़का मनोहर तो अपने पढ़ाने से अवसर नहीं पाता और उसके पिता लेखा-जोखे में सदा आलस्य किया करते हैं। रही मैं, सो घर की चूही हूँ बाहर निकल ही नहीं सकती, फिर कहो तो घर की सम्हाल कौन करे? हाँ, भगवान ने तुम सरीखी चतुर बहू हमारे घर में भेज दी है, ईश्वर चाहे तो घर का रूप-रंग कुछ अच्छा निकल आवेगा।

भाग्यवती ने कहा, ऐया! नन्दा कहार को कहो कि आज वह बाजार का सारा नामा लिख लावे और उसको यह भी आप कह दें कि जिन लोगों से वह सौदा सूत लाता रहा उनके भी लिख लाओ। जब यह छोटी पूँजी पहिले उतर जायेगी तो उस बड़ी के लिये भी उद्यम किया जायेगा।

नन्दा भली-भाँति जान गया था कि यह बहू बड़ी चतुर आई है और हम सबके काम बिगाड़ेगी। जब पंडितानी ने कहा, लेखा लिख लाना तो सौ-सौ बहाने बनाने लगा। कभी कहता मा जी! पहले तो जो कुछ बाजार का उठता था तुम बिना पूछे मुझे को दे दिया करती थीं, अब क्या मैं कोई और नन्दा हो गया हूँ कि जिस पर भरोसा नहीं रहा? हम तो सात पीढ़ी से इसी घर का लोन खाते रहे कभी कोई छल-बल नहीं किया, सो अच्छा यदि आपको कुछ भ्रम हो गया है तो लाओ साठ के पचास ही दे दो, अब की बार दस रुपये हम अपने पास से दे दिला देंगे। और आगे को बाजार का काम जिस से चाहो करा लिया करो।

यह सुनके भाग्यवती जान गई कि ठीक दाल में कुछ काला है। फिर

अपनी सासु से बोलो, ऐया! इसको कहिये साठ के पचास देने की क्या बात, जो कुछ उठा हो कौड़ी दी जायगी, पर तुम उन लोगों का नाम तो बताओ कि जिनके यहाँ से उचावत उठती है।

नन्दा बोला, बहू! खफा क्यों होती हो, लो तुम्हारा ही घर भर जाय मैं कुछ भी नहीं माँगता, यों कहि के बाहर चला गया और फिर कभी मुं न दिखाया।[1]

भाग्यवती ने सासु से कहा, माँजी! देखो तुम्हारा नन्दा कैसा गन्दा था, सेंत में साठ रुपये उड़ाना चाहता था, यदि बाजार का कुछ ठीक देना होता तो वह क्या कभी छोड़ के जा सकता?

सासु बोली, ऐ है! यह लोग तो सदा हमको यों-ही लूटते रहे हैं। तुम्हारा भला हो कि इसको घर से निकाला। मुझे निश्चय है कि वह पाँच सौ रुपये भी हमारे सिर पर झूठ-मूठ हो ठहराही ठहरा रक्खे होंगे।

भाग्यवती ने पूछा आप बतायें तो सही कि वे पाँच सौ रुपये आपने काहे में उठाये थे। सेठ रामजीलाल से कोई सौदा मँगाया था, उधारे लिये थे।

सासु बोली, बेटी! इतनी तो भगवान की दया है कि आज लों किसी से उधार नहीं उठाने दिया। सौदा सूत तो रामजीलाल से मैंने कुछ नहीं मँगाया पर यह रुपये हमारी भूल से हमारे सिर हो गये हैं। बेटी वह सेठ बड़ा भला मानस है कि कभी हमारे घर पर माँगने नहीं आया और न कभी किसी हमारे नौकर-चाकर को ही कुछ रोक-टोक करता है। मैं आठ आना मिती के लेखे सदा तीस रुपये वर्ष पीछे इस सन्तलाल मिश्र के हाथ उसकी हाट पर भेज दिया करती हूँ। वह चुपके ले लिया करता है, कभी-कभी किसी दूसरे को हमारे घर का लेन-देन नहीं सुनाता। बेटी यह मिस्सर बीस वर्ष से हमारे घर में रसोई बनाता और बड़ा अच्छा नौकर है,

---

1. इस पृष्ठ का सारा प्रसंग छापे की भूल से रह गया था, इसलिए पीछे से लगाया है, पाठक क्षमा करें। इसको 32 पृष्ट के आगे पढ़े।

यह इसी की दया है कि उस को कभी हम लों नहीं आने दिया, नहीं तो क्या जाने वह सेठ हमको कैसा तंग करता।

भाग्यवती ने पूछा, "ऐया! वह कौन-सी भूल आप से हुई कि जिससे पाँच सौ रुपया आप के सिर हो गया?"

सासु बोली, आज छठा वर्ष हुआ मनोहर के बाप जयपुर के राजा ने बुलाये थे, वहाँ से जो छः-सात महीने तक कुछ खरच घर में न भेजा इस कारण मैंने सोने के कड़ों की एक जोड़ी बेचने के लिये इस सन्तलाल मिस्सर के हाथ बाजार में भेजी। जब यह वे कड़े लेकर बाजार में पहुँचा तो किसी ने कहा, ये कड़े तुमने कहाँ से लिये, यह तो मेरे यहाँ से चुराये गये थे, इस ब्राह्मण का भला हो कि जिसने अपने ऊपर कई भाँति की ताड़ना सहारी, पर हमारे यहाँ का नाम न बताया, नहीं तो क्या जाने मुझ बुढ़िया का चूंडा किस-किस कचहरी में खिंचा फिरता। बेटी! यह कहता है कि अन्त को वे कड़े तो सरकार में जब्त हो गये, जिसके वे चुराये गये थे उसको इस मिस्सर ने सेठ रामजीलाल से पाँच सौ रुपये मोल के दिलवा के बड़ी कठिनता से पैंडा छुड़ाया। सो ये वे रुपये तब ही से हमारे सिर चले आते हैं।

भाग्यवती को ये अनमेल-सी बातें सुनके कुछ भ्रम तो हुआ पर फिर बोली, माँजी आपकी बला कचहरी में भेज के कह दिया होता कि कड़े हमारे पास अमुक स्थान से आए हुए हैं, फिर इसमें मुझे एक यह संशय होता है कि जिस चोरी का मालिक पास हो वह तो उसी को दे दी जाया करती है फिर यह व्यवहार कैसे हुआ कि वे कड़े सरकार में जब्त हो गये और मालिक को मोल मिश्र से दिलाया गया?

सासु ने कहा, बेटी मैं ये कानून की बातें क्या जानूँ? मुझे तो जो कुछ मिस्सर ने बताया सो ही सच मान लिया और यह भी मुझे इसी ने कहा था कि किसी भाई बंधु के पास इस बात का नाम न लेना! क्योंकि शरीक लोग बैर से बात को बढ़ा दिया करते हैं। बड़े दोनों लड़के तो उन दिनों में बाप के साथ ही गये हुए थे और यह छोटा मनोहर उस समय लड़का था। बहू! मैंने तो आज तक उसके बाप को भी यह बात नहीं

बिताई और न उस भगवान के प्यारे ने कभी वे कड़े हट के पूछ हैं कि कहाँ हैं।

भाग्यवती उस समय तो चुप ही रही, पर दूसरे दिन अपने पड़ोस में की एक मालन को बुला के उससे कहा कि आज तुम हमारा एक काम कर दो। सेठ रामजीलाल की हाट पर जाकर यह प्रतीत कर आओ कि उसका हमारी गली में भी किसी से लेन-देन है वा नहीं। मालन ने आके उत्तर दिया कि बहू वह तो यों कहता है कि इस गली में कभी हमारे किसी बड़े का लेन-देन भी हमारी बही में नहीं लिखा।

भाग्यवती यह सुनके चकित हुई और अपने पास पढ़ने वाली एक लड़की को बुला के कहा, आज तुमने हमारी ओर से अपने बाप से कहना कि, भाग्यवती कहती है कि सन् अठावन को अप्रैल के महीने जो सन्तलाल ब्राह्मण के कड़ों का मुकद्दमा सरकार में हुआ था उसकी नकल हम को हासल कर दें। उस लड़की ने पूछा, कया पण्डितानी जी! किसी के मुकद्दमे की नकल कोई दूसरा मनुष्य भी ले सका करता है?

भाग्यवती ने कहा, क्यों नहीं! सरकार अंग्रेजी में यह तो अच्छाई कि प्रजा को किसी भांति की रोक-टोक नहीं।

लड़की बोली, पण्डितानी जी! आप सब व्यवहारों को जानती हो, जगत् की कोई बात भी आप से छिपी हुई नहीं। मुझे निश्चय है कि काशी भर में आपके समान स्त्री तो कोई नहीं होएगी।

भाग्यवती ने कहा, नहीं यह तो सच नहीं। पर जो बातें आवश्यक हैं उनको मैंने थोड़ा-बहुत जान रखा हुआ है। यह बात बहुत आवश्यक है कि प्राणी सरकारी कानून को भी थोड़ा-बहुत जरूर जान छोड़े। देखो बहुत से मनुष्य और स्त्रियाँ जो सरकारी कानून से अनजान हैं कचहरी दरबार का नाम सुन के ही क़ाँपने लग जाते हैं। और जब कभी उनको किसी हाकिम के सामने जाना पड़ता है तो डर के मारे पहिले ही हाथ-पाँव ढीले करके अपना काम बिगाड़ लेते हैं; सो योग्य है कि तुम भी मुझसे कोई कानून की पोथी पढ़ छोड़ो।

लड़की बोली, कानून की पोथी तो अंग्रेजी व फारसी जबान में होगी

कि जो मुझको आती नहीं?

भाग्यवती ने कहा, नहीं! हिंदी भाषा और नागरी अक्षरों में भी बहुत पोथियाँ छप गई हैं।

जब वह लड़की घर को गई, उसके तीसरे दिन आके बोली, मेरा बाप कहता है कि मैंने सरकार में सवाल दिया था, वहाँ से उत्तर मिला कि पाँच-छः वर्ष से इस भाँति का मुकद्दमा सरकार में कोई दायर नहीं हुआ कि जिसमें सन्तलाल ब्राह्मण के कडों की बात हो।

जब भाग्यवती ने अच्छी भाँति से जान लिया कि हुआ—हवाया कुछ भी नहीं, यह सारी सन्तलाल की नटखटी है, तो चुपके से उसकी लड़की से जो उसके पास पढ़ा करती थी, कहा, बीबी तुम्हारे घर में जो एक जोड़ी सोने के कड़ों को है किसी समय मुझको दिखाना क्योंकि मैं भी उसी भाँति के बनवाना चाहती हूँ। पर देखना, मेरे मा और बाप को यह बात विदित न होने पावे क्योंकि यदि वे मेरे किसी संबंधी के पास बात कर बैठेंगे तो फिर मेरा काम बिगड़ जायगा। भाग्यवती ने अपनी सासु से उन कड़ों का तोल-मोल तो सुन ही रखा था, जब कड़े ले आई तो पहिचान के डिब्बे में धर लिये।

फिर एक दिन एकान्त में बैठा के उस सन्तलाल ब्राह्मण को कहा, मिश्र जी! मुझे इस समय कुछ काम बन गया, यदि तुम कहीं से मुझे 180 रुपये उधारे ला दो, तो मैं शीघ्र ही ब्याज समेत उतार दूँगी। यह सुनके सन्तलाल तुरन्त रुपये ले आया और भाग्यवती को पकड़ा दिये।

दूसरे-तीसरे दिन भाग्यवती ने सन्तलाल के सामने अपनी सासु से कहा, ऐया! कल तुम्हारे बेटा पूछते थे कि हमारे घर में जो एक जोड़ी सोने के कड़ों की होती थी वह अब पाँच-छः वर्ष से कहीं देखी नहीं जाती सो बताओ तो वह कहाँ है?

इस बात को सुन के सासु तो कुछ चुपकी सी रही, पर बात के टालने के लिय सन्तलाल बीच ही में बोला, घर में ईंधन नहीं रहा कहाँ से मंगाया जायगा?

जब भाग्यवती ने इसका कुछ उत्तर न दिया और अपनी सासु से फिर

भी वही बात पूछी, तो सन्तलाल ने कहा, बहू जी इस समय इनका मन किसी और बात में लगा हुआ दिखाई देता है। तुम कड़ों की बात फिर कभी सोफते में पूछ लेना।

भाग्यवती ने कहा, अच्छा फिर सही, पर मिश्र जी तुम आज सेठ रामजीलाल को तो हमारे पास बुलाओ और उसे यह भी कहना कि वह अपनी बही भी साथ लावे कि जिस पर हमारे यहाँ का लेन-देन लिखा है।

यह बात सुनते ही मिश्र जी चकराये और आगा-पीछा ताकने लगे। जब कुछ उत्तर न बन पड़ा तो बोला, क्या सेठ तुम से कभी कुछ माँगने आया है? उसका लेन-देन तो हमारे से है सो हम आप ही उससे समझ लेंगे।

भाग्यवती ने कहा, अच्छा! फिर आप ही बताइये कि जिसने वे कड़े चोरी के बताये थे वह मनुष्य कहाँ था। और जिस फिरगी ने तुमसे उन कड़ों को छीन के जब्त कर लिया था उस का क्या नाम था?

सन्तलला ने बुरा-सा मुख बना के कहा, क्या बहू मैंने झूठ-मूठ ही कह दिया था कि वे कड़े चोरी के निकले?

भाग्यवती बोली, नहीं दादा! तुम इतने बड़े-बूढ़े और पुराने नौकर होकर जिस घर का लोन खाया उसकी बुराई क्यों करने लगे थे, पर मैंने भी तो इतना ही कहा है कि जाओ सेठ रामजीलाल को बुला लाओ।

सन्तलाल बोला, बहू! बहुत बातों में क्या फल? पर जाना गया कि तुम हमको इस घर में टिकने न दोगी। सो अच्छा लो, अपना घर सम्हालो, हमने तो नौकरी करनी है, भगवान हमारा आध सेर आटा किसी और ठाई बना देगा।

भाग्यवती बड़ी क्षमा और धैर्य से युक्त थी। उसने देखा कि हमारे कड़े आ गये और जो 180 रुपये छः वर्ष से आठ आना मिती के लेखे यह मेरी सासु से सेठ का नाम लेके ले गया है वे भी मैंने युक्ति से मँगा लिये हैं। अब इस बूढ़े ब्राह्मण को दुखी करने में क्या लाभ होगा। यह बात सोच के वे कड़े अपनी सासु के आगे रखे और कहा लो, पहिचान लो इस

मिश्र की बेटी के हाथ मैंने उस फिरंगी के यहाँ से मँगा लिये हैं कि जिसने जब्त कर लिये थे और जो रुपये मिश्र जी ब्याज के नाम से ले जाते रहे वे भी उस सेठ ने इन्हीं के हाथ परसों हटा भेजे हैं। आगे आपकी इच्छा, इस विश्वासघाती मिश्र को रखो चाहे न रखो।

पण्डितानी ने जब यह सारा चरित्र समझ लिया तो उस ब्राह्मण को थाने पहुँचाना चाहा, पर भाग्यवती ने कहा, माँजी, यदि इस कंगाल को कुछ दंड दिला दोगे तो आपको क्या लाभ इसका तो यही दण्ड है कि यह आज से हमारे घर न घुसा करे।

इस प्रकार के कई व्यवहार देख के जो अब घर में भाग्यवती का अत्यन्त आदर सत्कार होने लगा तो दूसरी बहुओं के मन में कुछ ईर्षा खड़ी हो गई। कभी तो ननद को कह देतीं कि भाग्यवती तुम्हारा घर में रहना नहीं सहारती, कभी अपने स्वामियों से कहतीं कि अब भाग्यवती बड़ी अहंकारन हो गई है।

कल इसने हमको यह बात कही कि मैंने तो इस घर के सैंकड़ों रुपये बचाए तुमने आज़ लों क्या बनाया है? कभी सासु से कहतीं कि, ऐय्या! तुम जो भाग्यवती को हम से अधिक प्यार करती हो, क्या वह आकाश से उतरी है? कभी अपने ससुरे को कहला भेजती कि, बाबा जी! आप जो भाग्यवती को हम सबसे अच्छी समझते हो क्या आपको दोनों आँख से समान ही नहीं देखना चाहिए! कुछ दिन तो इनकी बात पर किसी को कुछ निश्चय न हुआ, पर नित्य की काना-भरी बुरी होती है; धीरे-धीरे सब के मन में भाग्यवती पर कुछ भ्रम खड़े हो गये और फिर सबने यह भी मता पकाया कि जैसे बने इस घर में से कुछ अपना काम बना लें। पहिले तो ननद देवकी के मन में आया कि मैं जो इस घर के काम-काज में टूट-टूट मरती हूँ पीछे से ये लोग मुझे क्या दे देंगे सो योग्य है कि जो कुछ हाथ लगे अपना अलग करती जाऊँ। अब वह तो कुछ अलग कर ही रही थी, फिर भाग्यवती के जो दोनों जेठ थे वे अपनी लुगाइयों के कहने से अपनी गठड़ी अलग बाँधने लग गये। जो गहना, कपड़ा, बरतन-भांडा जिसके हाथ लगता वह न्यारा कर लेता था। और जिस प्रेम भाव से भाग्यवती

को पहिले देखते थे अब वह दृष्टि सभ की पलट गई। और यदि किसी दूसरे से भी भाग्यवती की बात करते थे तो टेढ़ी–तिरछी ही निकलती थी। लोगों का यह स्वभाव है कि एक की चार बना के सुनाया करते हैं। जब भाग्यवती नित्य लोगों से ऐसी बुरी बातें सुनने लगी कि आज तुम्हारी ननद यों बोल रही और जेठानियाँ यों कोस रही थीं और सासु तुम पर यह दोष लगा रही थी तो भाग्यवती के मन में कुछ चिंता-सी तो होती पर फिर जो उसको अपना कोई अपराध दिखाई न देता तो कहती, अच्छा! यदि हमारा मन शुद्ध है तो किसी का कैसे अशुद्ध हो सकेगा? मैं तो सबकी दासी हूँ, जो उनकी इच्छा सो समझ रखें।

जो कुछ भाग्यवती से सुना लोगों ने यथार्थ बितना ही क्यों कहना था। वे तो चाहते ही थे कि इनके घर में भी फूट पड़ी हुई दिखाई दे। इधर-उधर की बातें मिला के घरवालों का मन भाग्यवती की ओर से और भी पत्थर बना दिया। घरवाले लोग पहिले तो अपने ही मन में भाग्यवती पर क्रुद्ध रहते थे, जब लोगों ने सुना कि वह भी कुछ बुरा-भला कहती है तो सारे शत्रु बना बैठे। और उसको वृथा दुःख देने लग गये।

एक दिन जो भाग्यवती की माँ ने किसी से सुना कि वह ससुराल में कुछ दुखी रहती है और घर के लोग उससे विरोध रखते हैं तो बड़ी चिंता हुई। भोर होते ही एक बुढ़िया को भाग्यवती का समाचार पूछने भेजा। जब भाग्यवती ने सारा वृत्तान्त सुना कि किसी ने वृथा ही मेरी माँ को जा के सताया है तो बड़े धैर्य से उस बुढ़िया को बोली, दादी! मेरी माँ को राम-राम कहना और समझा देना कि मैं सर्व प्रकार से घर में प्रसन्न हूँ। मुझसे कोई विरोध नहीं रखता, सब मुझे प्यार करते और प्रसन्न रखते हैं, मैं किसी प्रकार से दुःख नहीं, तुम किसी भाँति की चिंता मत करो।

इधर तो वह बुढ़िया पीछे को हटी और उधर भाग्यवती की दोनों जेठानियों ने ननद देवकी को बुला के कहा, बीबी जी! यह भाग्यवती न तो तुम को देख के प्रसन्न होती है और न घर में किसी और से इसकी बनती है, कोई ऐसी युक्ति निकालो कि जिससे पंडितजी और पंडितानी इसको मनोहर समेत अलग कर दें। देखो हमने कैसा सुख पाया था, जन्म

भर कभी तिनका नहीं तोड़ा पर जबसे यह घर में आई सब को किसी-न-किसी धंधे में लगा छोड़ती हैं। आप तो किसी गंवार की बेटी है कि जो काम-काज करती हुई थकती नहीं, पर हम तो भगवान रखे बड़े बाप की बेटी है। जैसा माँ-बाप के घर में फूल के नाईं रही थीं। वैसे ही यहाँ रहना चाहती हैं, हमें काम-काज से क्या काम। जब यह पापिन अलग हो जायगी तो हम सब उसी भांति अपनी नींद से सोया करेंगी कि जैसे इसके आने से पहले थीं।

देवकी ने कहा, अच्छा! तुम सब मेरी सहायता में रहो तो मैं शीघ्र ही अपने बाप को इसका बैरी बना सकती हूँ। यह कह के उसी दिन अपनी माँ से रोती-रोती बोली कि किसी ने मेरी गठड़ी में से एक रेशमी साड़ी निकाल ली है। माँ ने जब दोनों बड़ी बहुओं से पूछा तो उन्होने कहा, कि एक दिन भाग्यवती की पढ़ने वाली लड़कियाँ बीबी की कोठड़ी में घुसी हुई तो हम ने ठीक देखी थीं पर यह हम नहीं जानतीं कि साड़ी कौन ले गया। भाग्यवती से तो सासु का मन कई दिन से पहिले ही इन्होंने खट्टा कर छोड़ा था अब उससे क्या पूछती पर देवकी को इतना कहा कि बीबी रोवे मत, तुझे साड़ी और मँगा दूँगी।

इन बातों का समाचार जब पंडित जगदीश जी के कानों तक पहुँचा तो एक दिन अपनी स्त्री से पूछा, इसका क्या कारण है कि हमारे घर में अब नित्य का क्लेश देखा जाता है कि जो आज लों कभी भी नहीं हुआ था? फिर हम यह भी देखते हैं कि अब घर में न कोई अच्छा गहना ही देख पड़ता है और न कोई कपड़ा फिर मैंने सुना है कि कल लड़की की साड़ी गठड़ी में से किसी ने निकाल ली है सो बताओ तो सही इन बातों का कारण क्या है। पंडितजी की इन बातों को सुनके और तो अभी किसी ने कुछ उत्तर नहीं दिया था पर देवकी ने आगे बढ़ के कहा यदि बुरा न मानो तो मैं बता देती हूँ।

जब पिता ने कहा बता, तो देवकी ने कहा कि जिस भाग्यवती ने पहिले इस घर को सुधारना चाहा था अब वही इसके बिगाड़ने पर कटि बाँध बैठी है। नित्य उसकी माँ की भेजी हुई लुगाइयाँ उसके पास आती

हैं, यह जो गहना, कपड़ा, बरतन अच्छा देखती हैं तुरन्त उठा के अपनी माँ के यहाँ भेज देती है। अभी तो चार दिन नहीं हुए कि एक बुढ़िया उस गली में की आई हुई थी।

नित्य की काना भरी के कारण मत तो पंडित जी का भी भाग्यवती की ओर से कुछ खिंचा ही रहता था, बेटी की यह बात सुन के बोला कि पीछे तो हुआ सो हुआ, यदि आगे को कोई वहाँ का आये अथवा यह कुछ अपना सन्देश पहुँचाये तो मुझे बताना।

देवकी ने उसके तीसरे दिन अपनी बड़ी भावजों के विचार से एक भावज के गले का हार लेकर उस साड़ी के पल्ले बाँधा कि जो खो गई प्रगट की थी। फिर वह सब कुछ एक थैली में बंद करके एक मालन के पास ले गई कि जो इनके पड़ोस में बसती थी और कहा, भाभी भाग्यवती कहती है कि यह एक औषध की थैली मेरी माँ को दे आओ। और यह एक चिट्ठी दी है कि जिसमें इस थैली में के औषध खाने-बरतने की विधि लिखी है। जब मालन ने यह थैली रख ली तो देवकी तुरन्त अपने बाप के पास पहुँच के बोली, आज भाग्यवती ने फिर एक थैली में कुछ भर के मालन के हाथ अपनी मा को भेजा है। यदि मालन इधर से निकले तो छीन के देख लेना कि उसमें क्या भरा है।

जब मालन वह थैली लेकर भाग्यवती की माँ की ओर चली तो पंडित जगदीश जी.ने उसे बुला के थैली लेकर छीन ली, और उस चिट्ठी को खोल के पढ़ा तो यह वृतान्त लिखा पाया—

सिद्धि श्री सर्वगुण संपन्न माता जी के प्रति भाग्यवती की राम-राम बांचना। एक साड़ी रेशमी के पल्ले मैंने एक हार भेजा है सो तुमने सम्भाल के रख लेना। और सब आनन्द है।

जब पंडित जगदीश जी ने यह वृत्तांत पढ़ा और उस थैली को खोलके देखा तो आग भड़क उठी और कहा कि उस दुष्टा भाग्यवती को अभी पकड़ के घर से बाहर निकाल दो। सच है कि पढ़ी हुई स्त्री खोटी होती है। हाय उसने हमारा घर लूट के बाप के यहाँ पहुँचा दिया। हम मनोहरलाल का विवाह और करा देंगे पर इस दुष्टा को घर में नहीं रखना।

जैसे पंडित जी बोलते थे उसी भाँति पंडितानी और दोनों बेटे और बहुएँ और देवकी भाग्यवती को बुरा भला कहने लग गये। तब तो सारी गली में हल्ला मच गया। जब किसी का समय खोटा आता है तो उसके साथ सारा जगत खोटाई करके लग जाता है। जो कोई सुनता भाग्यवती की विद्या बुद्धि पर चकित होता और कहता भाई, क्या हुआ जो उसने थोड़ी सी विद्या पढ़ ली थी, पर अन्त को तो स्त्री ही थी न!

जब भाग्यवती ने यह सारा वृत्तांत सुना तो बड़ी दुखी हुई और सोचने लगा कि यह किसी ने क्या आश्चर्य किया कि झूठा कलंक मेरे सिर पर खड़ा कर दिया। हाय! मुझको गली के लोग क्या कहते होंगे और मेरे माँ-बाप यह बात सुनके मुझे क्या कहेंगे! और मैं उन्हें मुँह कैसे दिखाऊँगी? हाय! मेरे भाई लालमणि यह बात सुनके लोगों को क्या उत्तर देंगे? और काशीराज की सभा में मेरी क्या उपमा होगी कि जहाँ से मैंने बड़ा नाम पाया था। हाय! इस बनावट को कौन झूठ मानेगा कि जो मेरे शत्रुओं ने झूठी ही बना के खड़ी कर दी! हाय! जो लोग मेरी स्तुति किया करते थे वे मेरे मुख पर थूक कर चलेंगे? हाय! मैंने पहले दिन ही अपनी सासु और ससुर को बात क्यों न बता दी कि मेरी जेठानियाँ और ननद मुझसे ईर्षा करती हैं? यदि मैं आज इनका बैर अपनी सासु-सुसरे को बताऊँ तो कब सच मानेंगे? कभी चित्त में आता कि चुपके से बाप के पास चली जाऊँ। कभी सोचती कुएँ में गिर के प्राण खो दूँ। कभी कहती अब जीने का क्या धर्म है, गंगा में डूब मरूँ। हाय! जिस घर और नगर में इतना मान और यश पाया उस में अब लोग मुझको बुरी कहेंगे।

भाग्यवती इस भाँति की बातें विचारती हुई सोच के समुद्र में बही ज़ाती थी कि इतने में उसको एक गीता का श्लोक स्मृत हुआ :–

दुःखेषु, नौद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
बीतराग भयक्रोधः स्थितधोर्मुनिरुच्यते।।1।।

(अर्थ इसका यह है कि कृष्ण जी कहते हैं कि जो दुख में दुखी नहीं होता और सुख में बहुत इच्छा नहीं रखता और जिसका राग, भय, क्रोध दूर हो गया है वह स्थिर बुद्धि वाला मुनि कहाता है।)

इस श्लोक के स्मरण होते ही भाग्यवती के सब शोक दूर हो गये और तुरन्त सावधान होके मन में कहने लगी कि मैं बड़ी मूर्ख थी कि थोड़ी सी विपत देख के व्याकुल हो गई। हा! हा! मुझे विद्या पढ़ने का क्या फल हुआ? मैं तो अज्ञानियों के समान शोक समुद्र में बह चली थी। हाय! मैंने क्यों न सोचा कि दिन सदा एक नहीं रहते; कभी सुख कभी दुःख यह तो सदा से रीति चली आती है, फिर उदास होने में क्या कारण? मुझे तो यह विचारना योग्य था कि जैसे सुख का समय दूर होकर यह दुःख का समय आ गया है वैसे यह भी सदा नहीं रहेगा, इसको दूर करके फिर सुख शीघ्र ही आ जायगा। बुद्धिमान कही है कि जो विपत्तकाल में धैर्य को हाथ से न छोड़े। हाय! यदि युद्ध में ही शस्त्र काम न आये तो फिर कब आवेगे? यदि विपत्तकाल में ज्ञान विचार से सुख न दिया तो फिर कब काम आवेंगे? अब तो यह योग्य है कि कोई ऐसा उपाय करूँ कि जिससे सासु और सुसरे के मन से भ्रांति दूर होकर मुझे निरपराध जानने लग जाएँ।

सोचते-सोचते पहिले तो यह बात निकाली कि अपने भर्ता द्वारा पंडित जी को देवकी और दोनों जेठानियों के विरोध का कारण जताऊँ, पर फिर यह बात सोची कि वह भी तो इन्हीं का बेटा है; जब माँ, बाप, भाई, बहिन और भावजों के मेरे विरुद्ध बकते सुनेगा तो मुझ अकेली की बात को कब सच मानने लगा है। भाग्यवती यह बात मन में विचार ही रही थी कि इतने में एक और संकल्प चित्त में उठा। वह यह था चाहे आज लौं कभी समागम तो नहीं पड़ा परन्तु आज अपने ससुरे को एक चिट्ठी लिख के अपने मन की सच्चाई दिखाऊँ। उसी समय लेखनी पकड़ के अपने सुसरे को बड़ी दीनता के साथ यह चिट्ठी लिखी।

स्वस्ति श्री परम करुणा निधान, वेद विद्या विशारद अधिक सुज्ञान, धर्म प्रचारक, परकष्ट निवारक, दया-समुद्र, तुम ही विष्णु-स्वरूप और तुम ही मेरे ब्रह्मा और रुद्र। मैं भाग्यवती मूढ़मति चरण सरोज पर सिर धरती हूँ, कान धर कर सुनिये एक विनती करती हूँ। मैं दीन छीन परम मलीन इस घर की दास हूँ, कभी कोई अपराध नहीं किया पर आज बहुत उदास

हूँ। आप यह तो सोचते कि जिसने मुझ पर यह कलंक लगाया वह मेरा शत्रु है वा मित्र? मैंने कभी चोरी नहीं की, मेरा मन पवित्र है, यह सब उसी का चरित्र है। यदि आप मन दे के इस बात को विचारो सच और झूठ को नितारो तो मैं अब कुछ आपको बता सकती हूँ, हार आर साड़ी का लेना थैली तो मैं यह सारा भेद समझ सकती हूँ। आप जानते हैं, ईर्षा के औगुणों को पहिचानते हैं, जिस के मन में यह आता है, कई वर्ष के प्रेम मैत्री को एक क्षण में दूर बहाती है। मुझको जो घर के सब लोग कुछ अच्छी-अच्छी कहने लग गये थे, बीबी और बहुएँ और मेरे दोनों जेठ ईर्षा में रहने और वृथा अपनी छाती को दहने लग गये थे। इसी कारण उस सबने मिलकर यह बात बनाई है, मेरा अपराध कुछ नहीं झूठ-मूठ ही मुझ पर चोरी जमाई है। यदि आप इस बात का सच झूठ विचार लो, सच्चे को सच्चा और झूठे को झूठा मन में धार लो, तो बहुत अच्छी बात है, नहीं तो, विनाश काले विपरीत बुद्धि, यह बात शास्त्र में विख्यात है। मेरा क्या है मैं तो घड़े की मछली हूँ, रक्खोगे रहूँगी, निकाल दोगे चली जाऊँगी। पर एक स्मृत रखना जहाँ जाऊँगी आप ही के यहाँ की बहू कहलाऊँगी। आगे आपकी इच्छा भला हो सो कीजिये, पीछे से पछताओगे। अपनी दासी समझ के अभय दान दीजिये।

इस चिट्ठी के पढ़ते ही पंडितजी के मन में तो बड़ी दया आई परन्तु पास बैठने वाले कब चैन लेने देते थे। उसी समय सबके सब बोले देखिये उसकी नटखट! एक चोर दूसरी चतुर बन के दिखाती है। आप तो भली बनी और हम सबको बुरे ठहराती है। अच्छा महाराज आपकी इच्छा हो सो कीजिये पर यदि वह घर में रहेगी तो हमारा ठिकाना नहीं, हम सब कहीं, और स्थान में निवास करेंगे।

पंडित जी ने यह सारा वृत्तांत जब मनोहरलाल को सुनाया तो वह तुरन्त भाग्यवती का बैरी बन गया। तब तो सबने मिल कर यह बात विचारी कि हुआ सो हुआ पर अब उसका यही दंड है कि वह मनोहरलाल के साथ अलग जा रहे और हम सब अलग रहा करें। यह सुनके मनोहरलाल ने कहा कि जब आप लोग उसको बुरी समझते हैं तो मैं

उसको अपने संग नहीं रख सकता, जहां उसकी इच्छा हो अकेली रहा करे।

उसकी ये बातें सुनके सबने भाग्यवती की चिट्ठी के उत्तर में यह बात लिखी है कि तुम्हारे बीच रहने में हमारे घर में फूट पड़ती है सो अब योग्य है कि तुम दूसरी गली में हमारे बाहर वाले स्थान में हो बैठो। उसने यह उत्तर पढ़ के सोचा कि अच्छा ईश्वर की भावी योंही है तो मेरी क्या आधीन?

अब भाग्यवती ने सारे परिवार से अलग होके जैसे अपने बुद्धिबल से फिर सब पदार्थ इकट्ठे किये और आपत से सम्पत् में पहुँची वह सारा वृत्तांत सुनने के योग्य है। जब भाग्यवती को अलग किया तो दोनों बहुओं को तो आधा-आधा घर बाँट दिया और पंडित जगदीश जी और पण्डितानी, मनोहरलाल समेत बेटी देवकी को साथ लेकर अलग रहने लगे। भाग्यवती के पास उस समय जल पीने के लिए भी कोई बरतन नहीं था। केवल लोहे का एक तसला किसी पड़ोसन के यहाँ माँग के अपने घर में ले आई। चाहे जानती थी कि यदि मैं अपने बाप के यहाँ अपनी विपत्ति की बात लिख भेजूँ तो मुझे सब कुछ वहाँ से आ सकता है परन्तु उसने इस बात को अच्छा समझा कि मनुष्य को किसी के अर्थी होना श्रेष्ठ नहीं। सिंह और शूरवीर वही है कि जो किसी दूसरे की मार से अपना पेट न भरे।

अब दूसरे दिन भाग्यवती के मन में विचार किया कि चुपचाप बैठने से निर्वाह नहीं होगा, कुछ उद्यम और यत्न करना मनुष्य का धर्म है। पर क्या करूँ, मेरे पास न तो कोई पैसा है कि जिसकी सहायता से कुछ व्यवहार फैलाऊँ और न कोई हथियार है कि जिससे कुछ उद्यम करूँ, चाहे भाग्यवती विद्या और गुण तो कई प्रकार के जानती थी पर कोई उद्यम और पुरुषार्थ का साधन पास न होने के कारण घड़ी दो एक सोच में पड़ी। इतने में जो कुछ मन में उठा तो वह लोहे का तसला एक पड़ोसन के यहाँ गहने रख के पाँच आने के पैसे ले आई। घर में आते ही दो आने का तो सूत मँगाया और एक आने में चार सूए। और दो आने में भोजन मँगवा

के पेट भरा। हाथ ऐसे शीघ्र चलता था कि साँझ लौ एक जोड़ी जुराब की ऐसी बूटे बेल से सजाई कि उसी दिन आठ आने को बेच दी। कुछ दिन तो यही चाल रही कि दो आने में भोजन और दो आने का सूत ला के चार आने के पैसे बचा तो गई। दो एक दिन के बाद वह तसला छुड़ा के उसी एक बरतन से जैसे रसोई का काम चलाने लगी वह बात भी सुनने के योग्य है।

पहिले तो तसले में पानी लाके कपड़े पर आटा मांड लेना और फिर तसले में दाल बना लेना। फिर दाल को दौनों में डाल के उसी तसले में तवे का काम चलाना और फिर रोटी पोकर उसी तसले में जल भर पीना। इस विपत्त से दिन काट कर, जब दूसरे महीने में जुराबों की कमाई में से चौदह-पंद्रह रुपये पास हो गये तो पांच रुपये में रसोई के बरतन मँगाये और वह तसला जिससे लिया था उसे फेर दिया। फिर दस रुपये में एक-एक रेशमी चादर मंगा के उस पर सूजनी काढ़ने का आरम्भ किया। उस पर ऐसी सुन्दर सिलाई की कि सूई के काम में फूल-पत्ती बेल-बूटा से अधिक इस भाँति-भाँति के दोहे भी लिख दिये–

दोहा

विद्या बन्धु विदेश में, विद्या विपत सहाय।
जो नारी विद्यावती, सो कैसे दुःख पाय।।
राज भाग सुख रूप धन, विपत समय तज जांह।
इक विद्या विपता समय, तजे न नर की बांह।।

जब वह सूजनी बाजार में आई तो सैकड़ों ग्राहक खड़े हो गये, कोई कहे मैं लूँगा कोई कहे मुझे दीजिए। अन्त को बीस रुपये मोग पड़े। इस भाँति की दो-तीन सूजनियाँ महीने में बेच के चार रुपये में भोजन चलाती और अब शेष रुपयों को इकट्ठा करने लगी। एक वर्ष में चार-पाँच सौ रुपया इकट्ठा करके कुछ थोड़ी-सी पृथ्वी मोल ले ली। अब पृथ्वी की कमाई में से तो वर्ष भर का अनाज पट्ठा चला आता और हाथों की कमाई में से चार-पाँच सौ रुपये प्रत्येक वर्ष में पीछे पड़ने लगा। फिर गली

में की लड़कियों को पढ़ाना-लिखाना सिखा के उनके घरवालों को अपना सहायक बना लिया। जीभ में ईश्वर ने वह रस दिया था कि पशु और पंछी भी कहना मानते थे। जो लड़कियाँ पढ़ने आतीं उनसे कुछ पढाई तो लेती नहीं थी पर किसी से टोपी किसी से कोई रूमाल किसी से जोड़ी जुराब की और किसी से दस्तानों की एक आध जोड़ी नित्य बनवा अच्छे मोल को बेच डालती। उनको काम सिखाना और अपना दस बीस रुपये महीने का ठिकाना यह भी निकाल रखा था। अब तो ईश्वर की दया हो गई किसी वर्ष में दो-तीन गहने और किसी में चार-पाँच अच्छे कपड़े और बरतन बना लेने लगी। कभी कोई पलंग और कभी कोई सन्दूक, कभी कोई दरी, कभी तम्बू आदि पदार्थ जो बड़े घरों की शोभा रूप होते हैं, हरेक वर्ष में कुछ-न-कुछ अवश्य बना लेती थी। जब उसमें पाँच-सात नौकर रखने का सामर्थ्य हो गया तो फिर एक गाये, अब दूध दही भी घर में ही होने लग गया और गोबर से ईंधन का काम बंद हुआ। यदि कोई गाय-भैंस अच्छा कट्टा बच्छा देती तो खेती के काम में जोतती और जो दबला-पतला देखती तो बेच के रुपये इकट्ठे कर लेती। संयम और यतन ऐसी वस्तु है कि थोड़े ही दिनों में भाग्यवती धनवती कहाने लगा गई। जिसके पास धन होता है लोग बिना प्रयोजन उसके प्रेमी हो जाया करते हैं। अब भाग्यवती को कुछ तो विद्या का बल और कुछ शील संतोष का समर्थन, कुछ धन की बाहुल्यता इन सब पदार्थों ने निंदक सब बंदक और शत्रु सब मित्र बना दिए। सदा ईश्वर का धन्यवाद करती हुई आनन्द-मंगल से घर में रहने लगी।

अब उसके घर के लोग भी चारों ओर से ये बातें सुनने लगे कि, भाई, सासु और ससुर ने तो भाग्यवती को घर से निकाल ही दिया था पर ईश्वर सबका पालन करता है। देखो उसने इनसे अलग होकर चौगुणा तो अपना घर बना लिया और काशी भर में नाम पाया, सो अलग रहा। भाई विद्या बड़ी अच्छी वस्तु है। इसके समान और कोई धन नहीं। कोई कहता देखो, जिस भाग्यवती को इन्होंने नंगी-भूखी निर्धन-निराश्रय करके घर से निकाल दिया था आज उसके यहाँ सैकड़ों कंगाल भोजन पा के

निकलते हैं। और आज उसने सौ रुपया धर्मार्थ निकाल के पाठशाला में भेजा है कि यहाँ विदेशी विद्यार्थी विद्या पढ़ते हैं। आज उसने एक हवेली गहने रखी है और आज उसके घर में कंगाली के लिए धर्मार्थ औषधि बाँटने वाले दो वैद्य नौकर रखे गए हैं। इन बातों को सुनके सासु और सुसरे के मन में लज्जा तो आती, पर कुछ उत्तर नहीं दे सकते थे।

अब इनके यहाँ की सुनिए कि भाग्यवती को अलग करने के पीछे घर में क्या-क्या उपद्रव हुए। जब भाग्यवती को अलग किया तो थोड़े दिन पीछे पंडित जगदीश जी को एक साधु मिले कि जिन्होंने इनसे कई दिन लो प्रेम बढ़ा के एक दिन पूछा, पंडित जगदीश जी अब आप तो वृद्ध हो गए और बेटे सब अपने-अपने घर में अलग हो रहे हैं, कुछ द्रव्य भी बटोर रखा है वा नहीं कि जो ऊपर की अवस्था में काम आवे?

पंडित जी बोले, बाबा जी! कमाया तो बहुतेरा पर हम ब्राह्मण लोगों को इकट्ठा करना कब आ सकता है।

बाबा जी ने कहा, अच्छा अब हमारा तो आप के साथ प्रेम हो गया आप से कुछ छिपाना अच्छा नहीं, सो लाओ थोड़ा-सा पारा और संखिया तो मँगा दीजिये। भगवान चाहे तो सब दरिद्र दूर हो जाएँगे। जब पंडित जी पारा संखिया मँगा दिया तो बाबा जी ने तुरंत कुठाली में डाल के पंडित जी के हाथ से एक बूटी का रस उनके ऊपर गिरवाया। जब ऊपर-नीचे थोड़े से कोयले डलवा के फूँक लगाने लगे तो बाबा जी ने कहा पंडित जी! बस अब चांदी बन जायेगी आप इस युक्ति से नित्य दो तोले चाँदी बना लिया करें और अब साधु चलता है। पंडित जी ने युक्ति तो सारी सीख ही ली थी, साधु के रहने को कुछ आवश्यक न समझा। बाबा जी जब चले गये तो कुठाली में से दो तोले चांदी निकल पड़ी। तब तो पंडित जी मन में बहुत प्रसन्न हुए और बोले धन्य ईश्वर परमात्मा है कि जिसने हमको अमोघ धन अर्पित किया।

जब दूसरे दिन पंडित जी ने तड़के ही सब कर्मों से पहले अंगीठा तपाया और कुठाली में पारा संखिया डाल के फूँके लगाने लगे तो चाहे दस-बीस बार वही बूटी डाल के बहुतेरा झख मारा चाँदी देवता के दर्शन

न हुए। अब तो धत् पड़ गई, नित्य चार-पांच आने का संखिया पारा आग में जलाना और सांझ को बुरा-सा मुंह लेकर बैठ जाना, और कहना साधु जी की तो बड़ी दया हो गई थी पर न जाने क्या भेद रह जाता है? एक दिन पंडित जी इसी सोच में बैठे थे कि सामने से वही साधू जाते हुए दिखाई दिया कि जो इनके लूटने का बीज बो गये थे। पंडित जी ने तुरन्त दौड़ के उन्हें जा रोका और चरणों पर सिर धर के बड़ी दीनता और प्रेम भाव से अपने घर में ले आये। चौबारे में तो बाबा जी का पलंग बिछ गया और तन-मन से सेवा होने लगी। बाबा जी ने तो पांच-चार बार फिर भी चाँदी बना के दिखा दी पर जब पंडित जी बनाते थे तो कुछ नहीं बनाता था।

जब बाबा जी ने देखा कि अब यह पण्डित लालच में पूरा अन्धा हो गया है तो कहा, पण्डित जी! हमने तो रसायन के बताने में कुछ पड़दा नहीं रखा पर क्या करें तुम्हारे भाग्य में इस अनन्त लाभ का प्राप्त होना नहीं लिखा। सो अच्छा हम तुम्हारे पाँच-सात वर्ष के निर्वाह के लिये कुछ पदार्थ अपने हाथ से ही बना देते हैं जब वह खा लोगे तो फिर कभी देख जायेगा। जाओ, आप को जितना कि मिल सके कुछ सोना हम को ला दो। हम वह सोना दुगना बना देंगे। पंडित जी तुरन्त अपनी स्त्री का सारा गहिना उतार लाये और ला के बाबा जी को सम्भाल दिया। बाबा जी ने उनके सामने उस गहिने को एक बूटी के रस में लपेट के एक हांडी में भर दिया, और उनके हाथ में मुख़ बंद कराके चूल्हे पर रखवा दी, और आग जलवाने लगे। कुछ काल के पीछे बाबाजी ने कहा पण्डित जी थोड़ा जल मंगाइये कि हाथ धो लूँ, पण्डित जी के घर में जल लाने वाले चाहे कई मनुष्य थे पर बाबा जी के रिझाने के लिये आप ही नंगे पाओं भागे गये। पण्डित जी का जाना और बाबा जी ने ऐसी फुर्ती की कि चूल्हे पर से वह हांडी उतार के वैसे ही रंग ढंग की एक और हांडी चूल्हे पर रख दी कि जिसमें उतने ही तोल के कंकर भरे हुए थे। जब पंडित जी जल लेकर आये तो कहा देखना हांडी गिर न पड़े इसको उठा के सीधे कर दो। पण्डित जी तो भोले-भाले थे उनको हांडी पर कुछ भी भ्रम नहीं हुआ था

पर बाबा जी युक्ति से उनको यह विश्वास बढ़ाया कि देख ले वैसे ही भारी है मैंने कुछ पीछे से निकाल नहीं लिया। चार घड़ी के पीछे बाबा जी तो गहने वाली हांडी काँख में दबा के लोटा पकड़ दिशा फिरने चले गये और पण्डित जी चूल्हे की सेवा में रहे। जब साँझ लों बाबा जी लौट के न आए तो पण्डित जी ने हांडी को उतार के देखा। हांडी तो कंकरों से भरी हुई थी, देखते ही हाथ मलने लग गये और सिर पटक-पटक कहने लगे हाय! मैं विद्यावान होकर धोखा खा गया। इनका विलाप सुनकर शास्त्री मनोहरलाल जो इनका छोटा बेटा था कहने लगा कि जो विद्या और विचार से युक्त होकर चूक जाये उसका यही दंड है कि जो आपको मिला। क्या आपने भर्तृ शतक नाम ग्रंथ का श्लोक नहीं पढ़ा था कि–

उत्खातं निधिशंकया क्षितितलं ध्माता गिरेर्धातवः।
निस्तीर्णः सरितांपतिर्नृपतयो यत्नने सन्तोषिताः।।
मंत्राराधन तत्परेण मनसा नीताः श्मशाने निशाः।
लब्धाकाण बराटिकाऽपि न मया तृष्णेऽधुना मुंच माम्।।1।।

(अर्थ इसका यह है कि मैंने धन की भ्रांति से पृथ्वी को खोदा, और पर्वत की धातुओं को रसायन की कामना से जलाया, मोतियों की इच्छा से समुद्र को तैरा, और धन प्राप्ति के निमित्त बड़े यत्न से राजाओं को रिझाया, मंत्र सिद्धि और भूत सिद्धि के लिये दृढ़ मन होकर कई रातें मसानों में बिताईं, परन्तु हे तृष्णा मुझे एक कानी-कौड़ी भी प्राप्त न हो सकी, सो तू अब मुझको छोड़ दे)।

पण्डित जी ने कहा, यह तो सब कुछ पढ़ा था पर उसने जो मुझको कई बार चाँदी बना के दिखा दी थी इस कारण मेरा मन पतियाया गया। भला तुम ही बताओ तो उस साधु ने पारे की चाँदी कैसे बना दी होवेगी?

मनोहर लाल ने कहा, मैं कुछ आप से बुद्धिमान तो नहीं पर मेरी समझ में यों आता है कि जब उसने पारा कुठाली में डाल के ऊपर कोयले दिये तो पारे के तोल की चाँदी की डली अपने पास से क्या तो किसी कोयले के बीच भर के कुठाली में रख दी और क्या चाँदी के ऊपर कोई काला धागा लपेट के कौला-सा बना दिया जब कोयलों के बीच मिला के

वह बनावटी कोयला कुठाली में डाला और फूंकें लगाईं तो पारा उड़ गया और चाँदी की डली पिघल के कुठाली में बैठ गई। बस आपने जान लिया कि उस पारे की ही चाँदी बन गई है।

पण्डित जी ने कहा, हाँ सच है। एक भारी-सा कोयला ठीक मेरे हाथ से कुठाली में डलवाया करते थे। सो अब जाना गया कि वह चाँदी से भरा होता था। अच्छा भाई ईश्वर की भावी यों-ही थी पर इतने में ही शिक्षा प्राप्त हो गई सही!

अब बेटी देवकी की सुनिये। एक दिन पड़ोसन ने आके कहा देवकी मेरे घर के लोग मुझसे लड़े रहते हैं, इस कारण मैं अपने खाने तक से दुःखी रहती हूँ, यदि तेरे पास हो तो मुझ को पाँच रुपये उधार दे मैं टका रुपया के लेखे तुझे ब्याज दे दिया करूँगी। जब देवकी ने उसको बड़े घर की बहू समझ के पाँच रुपये दे दिये तो पंद्रह दिन पीछे पाँच टके और पाँच रुपये फेर के दे गई। थोड़े दिन पीछे फिर आके बोली तुम जानती हो कि हमारा स्वभाव किसी की कौड़ी रखने वाला नहीं; जब लों किसी का देना होता है धापके नींद नहीं आती। देवकी ने कहा, हाँ! मैं तुम्हारी सच्चाई को जानती हूँ, जब तुम को कुछ काम पड़ा करे तो बे डर दस-बीस रुपये ले कर काम चला दिया करो। पड़ौसन ने कहा दस-बीस तो नहीं पर यदि तुम मुझको पचास रुपये उधार दो तो मैं आना रुपये के लेखे ब्याज भर सकती हूँ। लालच बुरा होता है। देवकी ने झट पचास रुपये निकाल दिये और कहा लो मैंने ये रुपये ज्यों-त्यों इकट्ठे कर रक्खे थे और अब मेरे पास नहीं है। हाँ रुपया तो पाँच-चार सौ मेरे पास अलग इकट्ठा हो गया था पर खोये जाने के भय से मेरे बाप ने उन सब का गहना पत्ता ही मुझे घड़ा दिया है।

पड़ोसन घर में पहुँचते ही पिछले पाँव भागी हुई आके कहने लगी, बीबी देवकी! एक तो तू ब्राह्मण की बेटी तेरे अंश को हम कब तक खायेंगे, सो यह लो अपना रुपया पकड़ो। इतनी जल्दी मत किया करो। लो तुमने मुझे पचास के इक्यावन गिन दिये थे, मैं यह तुम्हारा रुपया फेर लाई हूँ। भगवान करे तुम्हारी ब्राह्मणों की कौड़ी हमारे पास न रहे। देवकी

ने लपक के वह रुपैया ले लिया और मन में समझी यह तो बड़ी धर्मात्मा जीव है कि जिसको पराये पदार्थ का इतना भय है।

थोड़े दिनों के पीछे पड़ोसन ने आके वे पचास रुपये देवकी के आगे धरे और पचास आने ब्याज के दिये और कहा लो बीबी जी गिन लो कभी फिर काम पड़ेगा तो फिर मँगा लूँगी। देवकी ने कहा, नहीं! तुम ने इतनी जल्दी क्यों की? तुम्हारे ही पास थे हमको तो तुम पर अब कुछ भ्रम नहीं रहा, जाओ दस-बीस दिन और काम चला लो। पड़ोसन ने कहा अच्छा तुम्हारी खुशी, मैं थोड़े दिन और रख लेती हूँ, पर आज तो मैं तुम्हारे पास एक और काम को आई थी। मेरी नन्दसाल में एक लड़की का विवाह है वहाँ से मुझे बुलावा आया है। यदि चार दिन के लिये अपना गहना मुझे दो तो मैं विवाह देख आऊं। देवकी को उस पर कुछ भ्रम तो रहा ही नहीं था तुरन्त सारा गहना निकाल दिया।

बस यह अन्त का दिन था फिर पड़ोसन ने कभी मुख न दिखाया। जब देवकी उसके घर में जाती तो वह सीधे मुख से बोलती भी नहीं थी कि कौन और क्यों आई है। जब देवकी अपना गहना मांगती तो वह झुंझला के कहती, अरी तू कौन है? और गहना कैसा? क्या तूने कुछ भंग खाई है? बता तो सही, तेरा घर किस गली में है? मैं तो कभी घर से बाहर भी नहीं निकली कि तुझे पहिचान सकती! चल कोई मर्द आ निकलेगा तो तुझे नाहक शर्मिंदी होना पड़ेगा। देवकी कहती, अरी तू कई बार मेरे घर गई और कितने दिनों से तेरा मेरा लेन-देन चला आता है और एक दिन तू मुझे भूल से दिया हुआ रुपैया फेर कर दी आई थी और अभी दस दिन नहीं बीते कि नन्दसाल में जाने के लिये तू मेरा सारा गहना माँग के लाई है फिर यह क्या बात है कि अब मुझे रूखी-सूखी बातें सुना रही है? देवकी की इन बातों को सुनके बोली, वाह! अच्छी कही, मैं तो जब से ब्याही आई हूँ कभी घर से बाहर पाँव नहीं रखा। मेरे घर में भगवान ने सब कुछ दे रक्खा है, मैं तुम से लेन-देन करने और गहना माँगने क्यों गई थी? और तू ऐसी नादान कहां कि आई कि भूल के बढ़ती रुपैया गिन देती, चल दूर हो मेरे घर के लोग बुरे हैं, कोई छोकरा छला आ गया तो

इज्जत बिगाड़ देगा, भीख-मांगतों की सारी उमर गई, अब हम को देनदार बनाने आई है।

जब देवकी किसी दूसरे से यह बात सुनाती तो लोग उसी को झूठी करते और कहते, बीबी जी! तुमने किस के सामने गहने पत्ते दिये थे। क्या तुम नहीं जानती हो कि बिना लिखित कराये एक कौड़ी भी किसी को नहीं देनी चाहिये। जाओ चुपके से बैठो, जो पैसे तुमको ब्याज में मिले उन्हीं को धो-धोकर पियो कि जिन्होंने तुमको लालच में फँसाया था।

इधर देवकी तो भाग्य को रो रही थी उधर एक सन्यासन उस गली में आ रही थी कि जिसका ऊपर का स्वांग देख के सब लोग उसको उत्तम साधनी मानने लग गये। आठों पहर लुगाइयों की भीड़-भाड़ उसके पास लगी रहती। कोई कहती, माई जी! मेरा पति मुझ से प्रेम नहीं रखता। कोई कहती, माई जी! मेरे बेटे की बहू मर गई है, दूसरा विवाह कब होगा? कोई बोलती माई! मैं तो तन मन से तुम्हारी दासी हो जाऊँ जो मेरा भाई विदेश से घर में आ जाये। कोई कहती माई जी! मैं दस वर्ष से घर बसती हूँ भगवान ने जगत में कुछ साँझ नहीं बनाई जो एक भी छोकरा हो जाये तो तुम्हारी टहल करूँ। वह माई यह सुन के किसी को कहती, लो! यह यंत्र पानी में घोल के पिलाना, तुम्हारा पति तुम्हारे चरण धोने लग जाएगा। किसी को कहती लो यह धागा गूगल की धूप दे के अपनी कमर में बांधो शिवजी करेंगे तो तुम्हारे घर लड़का हो जायेगा।

ये बातें सुनके पण्डित जगदीश जी की बड़ी बहू भी उस सन्यासन के पास पहुँचो। और बीच ही में से एक लुगाई ने कहा, लो माई जी! आज तो पण्डिताइन जी भी तुम्हारे पास आई हैं, यदि इनकी आशा पूरी कर दोगी तो काशी भर में तुम्हारा नाम हो जाएगा। यह बड़े घर की बहू है, यदि इनको कुछ परिचय दिखाओगी तो सब लोग तो तुम्हारे दास हो जायेंगे।

माई ने कहा, आशा पूरी करनी तो शिवजी के आधीन है, पर हमको जो कुछ गुरु महाराज ने बताया है उसमें फरक नहीं रखेंगे। सो अच्छा मिसराईन तुम्हारा मनोरथ भगवान की दया से पूरे हो रहे हैं।

किसी बात का घाटा नहीं पर एक सन्तान की चाह है सो यदि तुम

संतों की चाह है, सुदृष्टि हो जाए तो हम भी जगत से सुखी चले जाएं।

सन्यासन बोली, अच्छा! निश्चय रखोगी तो उसके घर कुछ घाटा नहीं। एकांत में आना, तुमको भी एक धागा बना दिया जाएगा।

जब पंडितानी एकांत में गई तो सन्यासन ने कहा यह धागा तो तुम अभी से अपनी कमर में बांध लो और सनीचर की रात को हमारे साथ नगर से बाहर एक चौराहे में चलना होगा। पर एक बात है उस समय तुम स्नान करके सब कपड़ा गहना पहिन लेना और जो कुछ शृंगार सुहागिन स्त्रियों का होता है वह सारा बनाके मेरे पास आना।

पंडितानी सनीचर की सांझ को नहा-धो गहने-कपड़े पहिन जब सन्यासन के पास पहुँची तो सन्यासन ने तुरन्त एक थाली में थोड़ा-सा सिन्दूर और फूल रख के पण्डितानी के हाथ दी और आप साथ होकर उसे नगर से बाहिर ले गई। और कहा लो मिसरायन, वह चौराहा दीखता है, तुम पहिले तो इसी भाँति बनी-ठनी हुई उसके पास नमस्कार करो, फिर मेरे पास आके सब गहने-कपड़े उतार धरो। मैं तो उनकी रखवाली में रहूँगी और तुम यह सिंदूर और फूल लेकर नंगे बदन चौराहे के पास जाओ। पहले तो उस पर यह सिंदूर और फूल चढ़ाना फिर आँखें मूँद के शिवजी के नाम की चुपचाप एक माला पूरी करना। जब माला पूरी हो जाये तो फिर आके गहने-कपड़े पहन लेना।

पंडितानी उसकी आज्ञा के अनुसार ज्यों-ही आँख मूँद के चौराहे के पास बैठी तुरन्त सन्यासन ने गहने कपड़े की गाँठ बाँध अपना पीछा सम्भाला। घर तो किसी दूसरे का ही मांगा हुआ था अब उस गली में क्या काम था। न जाने कहां छपन हो गई।

जब पण्डितानी माला पूरी करकके आई तो न सन्यासन है, न गहने, कपड़े, तब तो बहुत घबराई और दो-तीन बार भूमि पर पटक पड़ी। फिर छाती पीट के कबी कहती, हाय! मैं क्या करूँ? हाय! मैं कहाँ जाऊँ? हाय! मैं नंगी घर में कैसे पहुँचूँगी? इस प्रकार रोती-रोती जब कुछ उपाय न सूझ पड़ा तो ज्यों-त्यों चुपके से घर में आई और औंधे मुख धरती पर आ पड़ी। जब घर के लोगों ने जान लिया कि ये गहने-कपड़ा सब लुटा

बैठी है तो सन्यासन की ढूँढ होने लगी। कोई कहता वह साधु नहीं थी। ठग, इसने अमुक लाला के यहाँ भी योंही हाथ मारा था। कोई बोला प्यारेलाल की गली में भी कुछ दिन इसकी हाट जमी थी पर कोई गटड़ी का पूरा आँख का अंधा इसके हाथ न लगा।

अब गली के लोगों में यह विचार होने लगा कि भाई पण्डित जगदीश जी के यहाँ जो दिनोंदिन लूट की बातें होती सुनी जाती हैं इसका क्या कारण है? एक ने कहा, जब से इन्होंने भाग्यवती को दुखी किया तब से भगवान ने इनको भी सुखी नहीं बैठने दिया। कोई बोला हाँ, ठीक! इनके घर में भाग्यवती हंस थी और तो सब बहुआँ काग भरी हुई हैं। देखो उसके पीछे इन्होंने बनाना तो क्या था पर अपने हाथ से ही घर उजाड़ रही हैं। हम देखते हैं कि जब इन्होंने भाग्यवती को अलग किया तब से वह तो सुखी है इनके यहाँ दरिद्र पड़ता जाता है। सच है शास्त्र में लिखा है कि :—

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते, पूज्यायांति ह्यपूज्यताम्।
त्रीणि तत्र भविष्यन्ति दारिद्रं मरणं भयम्।।1।।

अर्थ इसका यह है कि जहाँ अपूज्यो की पूजा और पूज्यों का निरादर होता है वहाँ तीन बातें होती हैं एक दारिद्र, दूसरा मरण, तीसरा भय; सो देख लो इन सब में गुण विद्या बुद्धि की अधिकता के कारण भाग्यवती पूजा और सत्कार के योग्य थी सो उसके निरादर और इन मूर्ख बहुओं के आदर ने इनके घर में दरिद्र को भर दिया है।

इन बातों को सुन के पंडित जगदीश जी और उनकी स्त्री के मन में कुछ लज्जा-सी तो आई पर यह कब हो सकता था कि भाग्यवती को मना लाते।

जब किसी के दिन खोटे आते हैं तो पूछ के नहीं आते; दिनों-दिन कुछ बिगड़ता ही चला जाता है और उसके मन में अपने आप वैसे ही संकल्प उदय होने लग जाते हैं कि जिनसे हानि होवे। जैसा कि देखो जब पंडित जगदीश जी की दूसरी बहू ने देखा कि अब घर का सब पदार्थ नष्ट हो गया किसी के पास कोई अच्छा गहना-कपड़ा भी नहीं रहा तो मन में

सोचने लगी, ऐसा न हो कि अब पंडित जी मेरे गहनों को बेच के निर्वाह करने लग जाएँ। सो योग्य है कि मैं अपना सब गहना पत्ता अपने भाई के यहाँ पहुँचा दूँ यह सोच के सब कुछ भाई के घर भेज दिया।

जब थोड़े दिन बीत तो उस भाई ने यह नटखटी की कि प्रातः उठते ही एक दिन यह प्रकट कर दिया कि हमारे घर में चोरी हो गई है। यह सुन के उसकी बहिन दौड़ी गई और भाई से पूछा कि तुमने मेरा गहिना तो ऐसे स्थान में कभी नहीं रखा होवेगा कि जिसको चोर ले जाते। भाई ने बुरा सा मुख बना के उत्तर दिया कि, बीबी! हमारा तो जो कुछ गया उसकी हमको ऐसी कुछ चिंता नहीं पर भारी सोच तो हमको तुम्हारे ही माल की हो रही है कि बहन बेटी का धन हम कैसे उतारेंगे, हाँ चाहे हम जानते हैं कि तुम्हारे घर में सब कुछ भगवान् ने दे रक्खा है और तुम मुझ छोटे भाई को अपने माल के पीछे दुखी नहीं करोगे पर अन्त को तो यह बात बुरी ही हुई न कि तुम्हारा पदार्थ हमारे घर से चुराया गया।

बहिन सुनते ही पीली हो गई और बोलो, ना भाई! अब हमारा घर भी ऐसा नहीं रहा कि उस माल के लिए तुमको कुछ न कहूँ, बल्कि अब तो तुमको शीघ्र हमारा पल्ला पूरा करना पड़ेगा।

भाई ने कहा, सच पूछो तो हमारा घर भी तुम्हारे ही धन ने लुटाया है, यदि वह पापी धन हमारे घर न आता तो हमारा काहे को लुटता। सो जाओ हमारा मन इस समय जला बला हुआ है, कुछ बुरी बात मुख से निकल जाएगी। और यदि बहुत घबराती हो तो चलो आँखों से दूर होवो, हमारे पास लेने-देने को कुछ नहीं, जो चाहो सो कर देखो।

बहिन को यह सुनके निश्चय हो गया और तुरन्त चुपचाप पीछे को हटी। जब घर में सास ने पूछा बहू उदास सी दीखती हो, कुशल तो है? तो कुछ उत्तर न दिया। इतने में पंडित जगदीश जी घर में आए तो पंडितानी बोली आज तो मंझली बहू भी उदास दिखाई देती है, क्या जाने और कौन-सा फूल खिला हो। पंडित जी ने आके पूछा तो प्रकट हुआ कि सबने तो सारे घर का होम कर ही दिया था पर अब इसने पूर्णाहूति डाल के काम समाप्त कर छोड़ा है।

तब तो पंडित जी को बहुत सोचा हुआ और भाग्यवती का ज्ञान बुद्धि बहुत याद करने लगे। फिर सारे परिवार को बुला के कहा, भाइयो! हमने भाग्यवती को थोड़े से अपराध पर घर से बाहर निकाल दिया, उस बुद्धिमती के बिछड़ने ने हमारा घर धूलि में मिला दिया। मैं तुम सब को यह समझाना चाहता हूँ कि जिसको गृहस्थ आश्रम में सुख लेना हो वह अपने किसी चतुर और बुद्धिमान् मनुष्य को थोड़े से अपराध पर अलग न किया करे। देखो हार और साड़ी का जाना बहुत थोड़ी बात थी, यदि हम उसको सहार लेते तो काहे को हम रसायन के धोखे में आते और क्यों देवकी का गहना पत्ता पड़ोसन मार बैठती? और काहे को बड़ी बहू को सन्यासन लूटती? और क्यों यह छोटी बहू भाई का घर भरती? हाय भाग्यवती बड़ी चतुर थी और उसके होते हमारा घर कभी नाश न होने पाता। सो चलो आज भाग्यवती को मना लाएं। जो कुछ उससे अपराध हुआ सो भी हम अब अपने मन से भुला देते हैं। उस समय वह बालक थी यदि कुछ चूक हो गई तो क्या डर है। छोटों का अपराध बड़ों को मन पर नहीं रखना चाहिए।

यहाँ यह बातें हो ही रही थीं कि इतने में भाग्यवती ने सुना कि आज घर में मेरे बुलाने का विचार हो रहा है। उसने सोचा कि मेरी बुद्धि की क्या बड़ाई है कि यदि मैं उनके आने पर घर में चलूँ। उत्तम तो वही है कि जो बड़ों के पास चल के आप जाए। मैं जो छोटी हूँ तो ईश्वर ने ही मुझे छोटी बनाया है। यदि वे मेरे पास चलके आ जाएंगे तो क्या मैं उनसे बड़ी बन जाऊंगी? वह समय ही वैसा था नहीं तो पंडित जी महाराज ऐसे ज्ञानी होके मुझे घर से कभी न निकालते। तो अच्छा बुद्धिमान वही है कि जो सब प्रकार से अपनी ही भूल मान लेता है। ये बातें सोच समझ भाग्यवती पालकी में बैठ आप ही पंडित जी और अपनी सासु के पाओं में जा पड़ी और तो सब लोग उस समय इसकी बुद्धि विचार और ज्ञान विवेक की श्लाघा करने लग पड़े परन्तु पंडित जी और सासु ने प्रणाम की आशीर्वाद के बिना, मारे लज्जा के मुख से और कुछ न कहा।

अब भाग्यवती ने देखा कि पंडित जी और सासु के मन में मेरे अलग

कर देने और घर का सारा धन मूर्खपन के प्रताप से नष्ट हो जाने की लज्जा दूर करने के लिए आप ही अपनी सासु से बोली कि मैं बड़ी पापिन हूँ कि आज लौं कभी पालागन कहने नहीं आई। यों तो सदा मेरा मन आपके चरणों में लगा रहता था, पर क्या करूँ अकेली का घर से बाहर निकलना बड़ा कठिन है। मैं तो कई दिन से ताकती थी पर आज जो मैंने सुना कि घर से कुछ खोया गया इस कारण मेरा मन रह न सका। सच है कि जब कोई वस्तु जाना होता है तो बड़े-बड़े बुद्धिमान देखते ही रह जाते हैं। इसी कारण बड़ों ने कहा है कि कोई अपनी बुद्धि पर घमण्ड न करे। ईश्वर की इच्छा के आगे जीव की बुद्धि और ज्ञान कुछ काम नहीं आता। देखो तो बीबी और मेरी जेठानियाँ तो भला स्त्रियाँ ही गिनी जाती हैं, पंडित जी तो रसायन के धोखे में न आते कि जो सब विद्या-निधान थे। परन्तु इससे यही पाया जाता है कि जानहार वस्तु किसी प्रकार नहीं रह सकती। सो अच्छा आप कुछ सोच न करें उधर भी सब कुछ आप ही का है जो चाहो सो मांग लो।

जब पंडित जी ने और सासु ने सुना कि अपने निकाल देने का कुछ उलाहना नहीं देती और न हमारे अज्ञान पर कुछ हँसी करती है तो कहा, बहू भाग्यवती! हाँ ईश्वर की जैसी इच्छा होती है सब काम वैसे ही होते हैं, उसकी इच्छा के सामने जीव की बुद्धि कुछ वस्तु नहीं यह तुमने सच कहा। और जो तुमने कहा कि उधर से जो कुछ चाहो सो मांग लो, यह भी सच है, पर जब तुमको हमने अलग किया उस समय आप तो कुछ दिया ही नहीं फिर अब हम तुमसे किस मुख माँग सकें?

भाग्यवती ने कहा, ऐय्या! तुझको तो तुमने सब कुछ दिया है। देखो यह जो कुछ अब मेरे घर में दिखाई देता है सब आप ही की दया से हुआ है। मैं तो अपने अलग करने को भी आपकी दया ही समझती हूँ क्योंकि यदि आप मुझे अलग न करते तो एक तो कोई मुझे भी अवश्य ठग के ले जाता दूसरा जो उद्यम और यत्न मैंने अलग हो के किए वे तुम्हारे बीच होने से काहे को बन पड़ते, सो ठीक सोचा जावे तो मेरी वृद्धि का हेतु मेरा अलग करना ही है। फिर मैं यह भी सोचा करती हूँ कि वह समय

ही मेरे लिए कुछ वैसा था नहीं तो आप कभी मुझे अलग न करते। अच्छा वह दिन आपके आधीन था न मेरे, ईश्वर ने वही रचा हुआ था कि जो कुछ हुआ। यदि वैसा न होना होता तो पंडित जी उस चिट्ठी के अक्षर पहिचानते कि जो उन्होंने थैली के साथ किसी मालन से छीनी थी। अथवा उस मालन से ही इतना पूछते कि तू भाग्यवती को जानती भी है या नहीं? और यह थैली तुझे किसने पकड़ाई है। अथवा मेरी उस चिट्ठी को ही विचारते कि जो मैंने अपने हाथ से लिख के भेजी थी। अथवा तुम ही सोचतीं कि भाग्यवती ने हमारे सामने कोई अपराध नहीं किया फिर हम लोगों ने कहे कहाए उसके बैरी क्यों बनते हैं।

इन बातों को सुन के सासु ने पूछा, ऐ है बहू! क्या यह सारा उपद्रव हमारे घर में बीच वाले लोगों ने ही खड़ा कर दिया था और तुझे कुछ भी मालूम नहीं?

भाग्यवती ने उत्तर दिया, मैं तो आज लौं इस बात को सोचा करती हूँ कि मेरे ससुरे और सासु ने मुझे किस अपराध पर घर से बाहर कर दिया? और यदि कोई मेरा अपराध उनको जान पड़ा था तो मुझे बुला के झूठी करते तो मैं तो आज लौं यही माने हुई बैठी हूँ कि पराई बेटी का किसी के घर में क्या मान होता है जब चाहा गाय-भैंस की नाईं कान पकड़ के बाहर कर दी।

यह सुन के सासु ने आँखें भर लीं और मारे मोह के कंठ ऐसा रुक गया कि कुछ बोल नहीं सकती थी। जब यह सारा वृत्तान्त अपने पति से कहा तो वे भी सुनते ही रोने और पश्चाताप करने लगे और बोले, हाय! हमने ईर्ष्यालु और बैरी लोगों के कहने से अपने हृदय का टुकड़ा भाग्यवती अलग करके अत्यन्त दुखी की, हाय उस परम सत्पात्र और माता-पिता की लाड़ली भाग्यवती को कि जो हमको भी अपने प्राणवत् प्यारी थी कई वर्ष लौं वृथा सताया, हाय हमारा यह पाप कैसे दूर हो सकेगा कि जिन्होंने उस भाग्यवती को कि जिसके खेलने खाने के दिन और अभी भोली-भाली अवस्था में थी अपने पति से हीन रखा। धन्य है उसका धैर्य और धिक्कार है हमारी बुद्धि को कि जिन्होने उसकी प्रेम भरी चिट्ठी को पढ़ के भी कुछ

विवेक न किया। हाय हम बड़े कृतघ्न और पापी हैं कि जिसके प्रताप से हमारा गया हुआ धन प्राप्त हुआ और जिसने हमको झूठे ऋण से छुटाया। हमने उसको लोगों के कहने पर घर से निकाल दिया। पंडित पंडितानी का यह विलाप और शोक देख के दोनों बहुओं और बेटी देवकी का मन भी भर आया। वरन भाग्यवती के धैर्य सन्तोष क्षमा कोमलता शान्ति गम्भीरता सरलता आदिक उत्तम गुणों ने उनके मनों को ऐसा गिराया कि अपने अपराध आप ही प्रकट करने लग गईं। एक बहू बोली भाग्यवती का कुछ दोष नहीं हम ही अत्यन्त खोटी हैं कि जिन्होंने इस निरपराध गौ को सताया। दूसरी ने कहा मैं बड़ी पापन हूँ कि इस साक्षात् देवी को वृथा कलंक लगा के सबकी दृष्टि में बुरा बनाया। लड़की बोली इन दोनों का भी कुछ दोष नहीं, इस पाप का बीज केवल मेरे ही पापी मन ने बोया था कि जिससे यह परम पवित्र भाग्यवती कई वर्ष कष्ट उठाती रही। मैंने आप ही अपनी साड़ी छिपाई और आप ही बड़ी भावज का हार उसके पल्ले बांध के थैली में डाला था और वह मालन तो भाग्यवती को जानती भी नहीं थी, वह भी मैंने ही उसको कहा था कि औषध की थैली भाबी का माँ को दे आओ। और वह चिट्ठी मुझे संतलाल मिश्र का बेटी गौरी ने लिखा दी थी, जिससे भाग्यवती ने उनसे कड़ों की जोड़ी मंगा ली थी जो उसके बाप ने सरकार में जब्त हो गई बताई थी। सो अच्छा, हम सब पापी हैं हम से हो गई, भाबी हम सबके पाप और अपराध क्षमा करें। और यदि हम सोचें तो इस पाप का फल भी हम सबको न्यारा-न्यारा हाथ पर मिल चुका है। देखो घर का धन सब नष्ट हो गया, गहने-कपड़े, बर्तन सब ठगों ने ठग लिए। क्या यह इसी बात का फल नहीं कि भाबी भाग्यवती को घर से अलग कर दिया था? यदि यह बीच में होती तो किसी को क्या सामर्थ्य था कि हम लोगों को धोखा दे सकता।

पंडित जगदीश जी इन बातों को सुनके सब भाइयों के सामने फूट-फूट रोने लगे और उनकी स्त्री ने लपक के भाग्यवती को छाती से लगा लिया और कहने लगी कि बेटी! हम सब तेरे देनदार और अपराधी

हैं, क्या करूँ मुझको तो इन बातों का भेद कुछ भी प्रतीत न हुआ। हम पुराने समय के लोग हैं इस नए समय की बातें क्या जानें। जो कुछ किसी ने कान में भर दिया सो ही सच मान लिया, सो अब हमारा अपराध क्षमा कर और यह तेरा घर है, हम तो दोनों बूढ़े हुए, किसी तीर्थ पर बैठ के दिन काट लेंगे। इस पापी परिवार का यही दंड है कि अब हम इनके बीच नहीं रहने के, तुम जानो तुम चाहे इनको अपने संग रखो चाहे हाथ पकड़ के निकाल दो, हम अपना बाजा बहुतेरा बजा चुके।

यह सुन के भाग्यवती रोने लगी और बोली, ऐय्या! तुम्हारे पीछे इस घर में मेरा क्या काम है। जहाँ तुम वहीं मैं तुम्हारी सेवा टहल में जन्म सफल करूँगी। और यह घर इन ही लोगों को सफल रहे मैं तो इनकी और तुम्हारी दोनों की दासी हूँ पहले तो चाहे मेरा मन कुछ इनकी ओर से तपा हुआ था पर अब इनके सच सच कह देने ने मेरे मन को ठंडा कर दिया। अब मैं इनसे कभी अलग नहीं रहूँगी। धन्य है वह जीव कि जिसने कभी कोई अपराध नहीं किया और फिर अत्यन्त धन्य है वह कि जो अपराध हो जाने के पीछे पछताने लग जावे और अपने अपराध को अपने ऊपर मान ले सो मुझको तो इन सब के चरण .चूम लेने चाहिए कि जिन्होंने अपने अपराध को मान लिया। अब आपको और बाबा जी को भी यही उचित है कि इनके अपराध मन से भुला दें और मेरी ओर से कुछ चिंता न करें। चाहे चार दिन मैं आपसे अलग तो रही पर अलग रहने में मुझे कुछ कष्ट नहीं हुआ वरना लाभ हुआ है। सो अब तो यही समय है कि तुम हमारे तीर्थ रूप बने घर में बैठे रहो और हम मिल के आपकी टहल किया करें। लो मैं इस घर का भी सब कुछ यहीं मँगा लेती हूँ। पर एक बात ये है मेरे दोनों जेठ और जेठानियाँ उसी प्रकार बीच में मिल जाएँ। अब विपत् का समय तो चला गया फिर अलग रहने में क्या प्रयोजन?

यह सुन के सब के मन प्रसन्न हो गए और सब मिल के घर में रहने लगे। जब भाग्यवती ने अपने घर का सब पदार्थ मँगाया तो पन्द्रह सहस्र रुपया रोक और गहने कपड़े बर्तन आदि पदार्थों की कुछ गिनती न रही। और अब पंडित जगदीश जी का घर फिर भाग्यवान् दिखाई देने लगा। और

सब संबंधी एक मूठ हो गए। जहाँ चार मनुष्य बैठते ये ही बातें करते कि भाई! देखो एक सत्पात्र स्त्री ने बिगड़ा हुआ घर फिर-फिर थोड़े काल में कैसा खड़ा कर दिया। कोई कहता भाई स्त्रियाँ तो बहुतेरी ही हैं पर भाग्यवान जीव कोई एक ही होता है। कोई कहता, नहीं भाई! जीवों की क्या बात है यह सब विद्या का प्रताप है। मनुष्य हो चाहे स्त्री विद्या सबको भाग्य लगा देती है। हाय वे कैसे बुरे माता-पिता हैं कि जो अपनी सन्तान को विद्या नहीं सिखाते। धिक्कार है उन पर कि जो यह बात कहा करते हैं कि स्त्री को विद्या न पढ़ानी चाहिए और बड़े ही मूर्ख हैं वे लोग जो अपने मुख से ये बातें कहा करते हैं कि विद्या पढ़ी हुई स्त्री बिगड़ जाती है। क्या भाग्यवती स्त्री नहीं थी कि जो कई वर्ष अपने पति से अलग रह के पवित्र रही? और क्या यह विद्या का ही प्रताप नहीं कि विपत्काल में धैर्य सन्तोष को हाथ से न छोड़ा? और क्या यह विद्या ही का फल नहीं कि एक लोहे के तसले से सहस्रों रुपयों का पदार्थ इकट्ठा कर लिया? भाई यह विद्या ही का प्रताप है कि जिन्होंने भाग्यवती पर झूठे कलंक लगाए और घर से निकाल दी! फिर उनके अपराध क्षमा करके अपने साथ मिला लिया, और यह भी विद्या ही का प्रताप है कि भाग्यवती को वह धैर्य सन्तोष प्राप्त था कि जिसके प्रताप से उसके सामने शत्रु लोग आप ही लज्जावान होकर अपने अपराध प्रकट करने लग गए। क्या यह विद्या ही का प्रताप नहीं कि भाग्यवती कई वर्ष लों घर से निकाली रही और अलग रहने में सैंकड़ों दुःख और क्लेश सहारे पर एक ही नगर में बसते हुए अपने माता-पिता लों एक बात भी नहीं पहुँचने दी? जो कुछ दुःख-सुख था अपने ही ऊपर उठाया, किसी दूसरे को कभी नहीं सुनाया कि जैसे और स्त्रियां जब घर में तनिक सी भी अनबन होती है तो गली कूचे में एक की बीस-बीस बनाके सुनाया करती हैं। सो यह सब विद्या का ही प्रताप है।

अब भाग्यवती अपने घर में आनन्द मंगल से रहने लगी और शास्त्री मनोहर लाल का भी उसमें अत्यन्त प्रेम हो गया। वह उसको देख के जीता और यह इसको अपना स्वामी परमेश्वर जान के कभी सेवा-टहल से विमुख

नहीं होती थी।

जब कुछ दिन घर में बसते हुए बीते तो भाग्यवती को एक कन्या उत्पन्न हुई। उस पहली सन्तान को कन्या देख के शास्त्री मनोहर लाल जब कुछ उदास होने लगा तो एक दिन भाग्यवती ने कहा, स्वामी! यह क्या बात है यदि आप ऐसे बुद्धिमान् हो के उदास होने लगे तो और कौन न होगा? क्या आप कन्या और बालक में कुछ भेद गिनते हो? ईश्वर की दृष्टि में तो कुछ भेद नहीं प्रतीत होता। यदि उसके यहाँ कुछ भेद होता तो कन्या के शरीर में भूख प्यास नींद आदि व्यवहार कुछ अधिक न्यून होते। फिर जन्म मृत्यु बढ़ना घटना भी समान ही दिखाई देता है। अब कहिए कि फिर सोच करने का क्या प्रयोजन! बालक भी माता-पिता के मन को दस-पन्द्रह वर्ष लों खिलौने के न्याई प्रसन्न करता है सो इतनी अवस्था पर्यन्त कन्या भी मा बाप को कुछ थोड़ी लाड़ली और प्यारी नहीं होती। यदि कहो कि कन्या ब्याही जाने के पीछे पराई हो जाती है यह बात तो बालक में भी उसके समान ही देखी जाती है क्योंकि वह स्याना होने से अपनी स्त्री पुत्र का हो जाता है; जैसा पहले वह अपने माता-पिता का बना रहता है उतना फिर पीछे से नहीं रहता। यदि इस बात को झूठ मानते हो तो अपनी ओर ही देख लो, तुम तो बड़े बुद्धिमान थे, मेरे साथ ब्याहे जाने के पीछे अपने माता-पिता के क्यों न रह गए? सो ईश्वर के इस दान पर आपको आनन्दित रहना चाहिए। यदि आप कहो इसके पालन-पोषण की हमको चिंता रहेगी तो सुनो पहले तो यह बताइए कि खग मृगादि की पालन-पोषण कौन करता है? दूसरा यह कहिए यदि बालक होता तो क्या आप उसका पालन-पोषण न करते? यदि आप कही कन्या के विवाह पर धन बहुत लगाना पड़ता है तो आप भली प्रकार जानते हैं कि मेरे और आपके पिता ने इस बात का तो नाम ही दूर कर दिया कि कोई बेटी के विवाह पर वृथा धन का नाश न करे सो यदि और लोग भी इस सुखदायक रीति को अपने घरों में चला दें तो अहोभाग्य, नहीं तो हम तो अवश्य वैसा कर सकते हैं कि जैसा हमारे तुम्हारे विवाह में दोनों पिता ने किया था। क्योंकि उन्होंने केवल अपने ही सुख के लिए

विवाहों में धन लुटाना वर्जित नहीं ठहराया वरन् सारे जगत् को इस व्यर्थ क्लेश से छुड़ाने के लिए उद्यम किया था। शास्त्री जी ये बातें सुन के बहुत प्रसन्न हुए और भाग्यवती की विद्या और बुद्धि की अपने मन में श्लाघा करने लगे।

भाग्यवती के धैर्य और क्षमा आदि उत्तम गुण कुछ अपने ही घर में नहीं थे वरन् यदि कोई अन्य स्त्री पुरुष भी इसके साथ लड़ना बोलना चाहता था तो यह चुप हो रहा करती थी जैसा कि देखिए—

उस गली में एक ऐसी क्रूर स्त्री रहती थी कि जिससे सब लोग डरते और कोई सामने नहीं आ सकता। लड़ने में वह यहाँ तक प्रसिद्ध थी कि सारी काशी में नाम उसका लड़ाकी पड़ा रहा था। उसका सवभाव ऐसा क्रूर था कि कोई चाहे कैसा ही क्षमाशील और भला मानस हो यह अपने खोटे वाक्य सुना के उसके स्वभाव को अवश्य बिगाड़ दिया करती थी और गली में ऐसा कोई बाल-वृद्ध-स्त्री-पुरुष नहीं था कि जिसके साथ एक आधी बार इसने लड़ाई न कर ली हो।

एक दिन की बात है कि भाग्यवती अपनी छत पर अपनी लड़की लिए बैठी थी कि इतने में लड़ाकी भी सामने से अपनी छत पर किसी काम को चढ़ी। जब भाग्यवती ने उसको अपने से बड़ी समझ के 'पाइ लगी' कही तो लड़ाकी बुरा सो मुख बना के और नाक-भौं चढ़ाके बोली, बहू! तुझे तो अपनी विद्या और धन का घमण्ड हो रहा है, तू काहे को हमें पालगी कहेगी।

भाग्यवती बोली, मुझमें तो ऐसी कोई विद्या व धन नहीं कि जिसका घमण्ड हो जाए। और मैं अपनी जान में सदा आप को अपनी बड़ी जानती और पाइ लगी कहती रही हूँ और यदि मुझसे कभी चूक भी हो गई हो तो आप क्षमा करें, क्योंकि छोटों के अपराध बड़े लोग सदा से क्षमा करते आए हैं।

लड़ाकी ने कहा, क्यों री तू मुझ से ठट्ठे करती है? चल मैं तेरे बनाए से बड़ी नहीं हूँ। यदि तू मुझे बड़ी न समझेगी तो क्या मैं छोटी हो चली हूँ? चल अपनी पाइ लगी घर रख हम इसके भूखे नहीं। हम छोटे

बड़े जैसे हैं अपने घर पर हैं, तेरे घर में कभी भीख माँगने नहीं गए। नकारी बोलने को मरती है?

यह सुन के भाग्यवती सुन्न-सी हो गई और मन में सोची यह क्या आश्चर्य है कि इसने अपने आप ही मेरी सीधी बात को उलझा समझ लिया? फिर बहुत दीनता और नम्रता से बोली, माँजी! आपकी जो इच्छा सो कह छोड़ो पर मैं तो अपने को आपकी दासी और तुम को अपनी सासु और माँ के समान सदा अपनी बड़ी जानती हूँ।

लड़ाकी ने कहा, क्या री! तू मुझे चतुराई से अपने बाप और अपने सुसरे की सुगाई बनाती है? हत्तेरे ससुरे की दाढ़ी जलाऊँ? वह भडुआ कौन है जो मुझे अपनी लुगाई बनावें? उसकी लुगाई बन तू अथवा उसकी बेटी देवकी! आने दे मेरे बड़े बेटे को मैं कैसा तेरा चूँडा और तेरे ससुरे कंजरे की दाढ़ी फुकवाती हूँ। यों बकती और फूट-फूट रोती हुई अपने घर के द्वार पर आ खड़ी हुई जो कोई भला-बुरा स्त्री-पुरुष उस गली में से होकर जाता उसी को पकड़ के खड़ी हो जाती और रो-रो के कहते, देखो जी चुड़ैल भाग्यवती मुझे अपने सुसरे की लुगाई बनाती है।

लोग इसके स्वभाव को तो जानते ही थे पर जब भाग्यवती से आकर पूछते कि तुमने आज यह भिड़ों का छत्ता क्यों छेड़ लिया तो वह संक्षेप से अपनी पाइ लगी कहने से लेकर सारा वृत्तांत सुना देती और लोग सुन के लड़ाकी के स्वभाव पर बहुत चकित होते थे।

जब लड़ाका भाग्यवती को बहुत गालियाँ दे रही थी तो एक पड़ोसन ने उठ के कहा, बहू भाग्यवती! जो तू इसी भाँति चुप हो रहेगी तो यह पापिन काहे को पैंडा छोड़ेगी? तू कहे तो मैं तेरे सुसरे और जेठों पास छोकरा भेज के बुला लूँ। बहू! हमसे तो ये गालियाँ नहीं सुनी ज़ातीं और हम यह भी जानती हैं कि जो तुम इसके आगे चुप हो रहेगी तो कल को कोई और तुमको दबाने लग जाएगी। सो अच्छा तो यही है कि तुम इसको जरा धमका दे।

भाग्यवती ने हँस के कहा, अम्मा! तुम सच कहती हो पर मैं यह सोच रही हूँ कि इसके बकने से मेरा बिगड़ता क्या है? अब लों कोई नहीं

जानता कि किसके साथ लड़ती है यदि मैं इसके सामने खड़ी हो के कुछ उत्तर देने लगूंगी तो सब कोई कहेगा कि भाग्यवती से लड़ाई होती है और जो तुमने मेरे ससुरे और जेठों के पास छोकरा भेजने की बात कही, इससे यह तो जाना जाता है कि तुम बड़ी सहायक हो, परन्तु उनके घर में बुलाने में यह विचार है कि अब तो लुगाइयों की लड़ाई है इधर लड़ी और उधर फिर वैसी ही हो गई, पर मर्दों के बुलाने से न जाने कितनी लंबी खिंच जाए। योग्य तो यही है कि मैं इसकी गालियों को विवाह की गालियां समझ के चुप रहूँ। जब थक जाएगी तो यह भी आप ही चुप हो जाएगी जैसा कि मैंने नीति शास्त्र में यह श्लोक पढ़ा है—

क्षमा खड्ग करे यस्य दुर्जनः किं करिष्यति।
अतृणे पतितं वन्हिः स्वयमेवोपशाम्यति।।1।।

अर्थ इसका यह है कि जिसके हाथ में क्षमा का खड्ग पकड़ा हुआ हो बैरी उसका क्या बिगड़ेगा। जब अग्नि में ईंधन न डाला जाए तो वह आप ही बुझ जाया करती है।

पड़ोसन ने कहा धन्य तुम्हारा धैर्य! पर हमसे तो इसकी गालियाँ कभी न सहारी जाएँ।

भाग्यवती ने कहा, हाँ सच है? खोटे वचन का सहारना बहुत कठिन होता है पर सुख तब ही होता है कि जब मन में खोटे वचन सहारने का सामर्थ्य हो जाए। सुनो मैं आपको एक बात सुनाऊँ कि जिसके ग्रहण करने से बड़ा भारी सुख हो सकता है। वह यह है कि जो लोग किसी को लड़के वा बोल के जीतना चाहते हैं वे हार जाते और जो आप हारना और चुप करना ग्रहण करते हैं वे सारे जगत को बिना यत्न जीत लिया करते हैं।

पड़ोसन ने कहा, यदि चुप कर रहना दूसरे को जीत लेता हो, तो तुम जो घर में चुपचाप बैठी ही लड़की क्यों नहीं हार जाती?

भाग्यवती बोली, तुम थोड़ी-सी और बैठो मैं शीघ्र ही तुम को लड़ाकी चुप हुई-हुई दिखा देती हूँ।

पड़ोसन ने कहा, तुम तो क्या इसको बड़े-बड़े चुप करा चुके पर यह

चुप न हुई।

भाग्यवती ने कहा, वे लोग चुप कराने की रीति नहीं जानते होंगे नहीं तो अवश्य इसको चुप करा देते।

पड़ोसन बोली, इनसे अच्छी रीति और क्या होगी कि कई लोगों ने इसके सामने गालियाँ दीं, और कई लोग इसको पकड़ के थप्पड़ मार चुके। और बहुतों ने इसे थाने से पहुँचाया और कई लोगों ने इसे जरीमाना भराया। यह चुड़ैल तब भी चुप न बैठी।

भाग्यवती ने कहा, यह रीति भी चुप कराने की थी तो अच्छी, पर मेरे पास इससे भी अच्छी एक और रीति है कि जिससे सब कोई चुप हो जाया करता है।

पड़ोसन ने फिर पूछा तुम इसको किस रीति से चुप कराओगी वह हमको भी बतानी चाहिए?

भाग्यवती ने कहा, यह रीति भी चुप कराने की थी तो अच्छी, पर मेरे पास इससे भी अच्छी एक और रीति है कि जिससे सब कोई चुप हो जाया करता है।

पड़ोसन ने पूछा फिर तुम इसको किस रीति से चुप कराओगी वह हमको भी बतानी चाहिए?

भाग्यवती ने कहा, मैं तो पहले ही तुमको बता चुकी हूँ कि जो कोई लड़ने वाले के सामने चुप हो रहे उसको देख के लड़ने वाला क्या मंडेरों को गालियां देवेगा? तुम सच जानो कि यदि मैं न बोलूँगी तो यह आप ही चुप हो जाएगी।

पड़ोसन ने कहा, आज तो चाहे तुमको चुप देख के थोड़ा चुप हो रहे पर जब कभी तुम इसके सामने आओगी, यह तब ही कुछ न कुछ बकने लग जाएगी।

भाग्यवती ने कहा, अच्छा तुम देखती रहो ईश्वर ने चाहा तो मैं शीघ्र ही इसको ऐसी उत्तम बनाऊँगी कि कभी किसी से लड़ने का नाम न लिया करे।

जब दो-तीन दिन बीते तो लड़ाकी का एक छोटा-सा लड़का खेलता

हुआ गली में एक सांढ़ के आगे आ गया। ज्यों-ही सांढ़ उसको दबाने लगा भाग्यवती ने दौड़ के उस लड़के को गोद में उठा लिया और छाती से लगा के उसका माथा चूमने लग गई। एक लुगाई जो दूर खड़ी देख रही थी, भागती हुई लड़ाकी के पास जा के यह बात बता रही थी कि जो भाग्यवती न उठाती तो आज तेरा छोकरा सांढ ने मार दिया होता कि इतने में भाग्यवती भी लड़के को चूमती हुई लड़ाकी के घर में पहुँची और कहा छोकरे को अकेला गली में मत छोड़ा करो। लड़ाकी को भाग्यवती की क्षमा देख के अपने बोलने बकने पर कुछ लज्जा सी तो आई पर स्वभाव के क्रूर होने के कारण मुख से यही निकला कि तुमने क्यों उठाया, क्या हमारे हाथ-पांव साथ नहीं थे, हम आप ही उठा लाते।

भाग्यवती ने कहा, आपके हाथ-पांव सदा बने रहें पर यदि मैं लड़के को उठा लाई तो मेरा क्या घट गया? क्या आपका लड़का हमको कुछ पराया है अथवा मुझको तुम अपनी दासी नहीं समझतीं? मैं तो यही जानती हूँ कि हमसे जितनी टहल आपकी बन सके हमारी सौभाग्यता है।

लड़ाकी लड़के को उठा के भीतर जा घुसी पर चलती बार उस चुड़ैल के मुख से यही निकाल कि चल री! भगवान हमको किसी की टहल का अर्थी न बनावे।

जब भाग्यवती अपने घर में चली आई तो उसके छठे सातवें दिन इसके पिता की गली में से एक ब्राह्मण आके कहने लगा, बेटी भाग्यवती! मुझको मेरे यजमान लाला सदासुख ने तुम्हारे पास इसलिए भेजा है कि तुम्हारी गली में एक लड़का है, उसकी जन्मपत्री हमारे पास भिजवा दो। उसने यह भी कहा कि यदि बीबी भाग्यवती श्रेष्ठ समझे तो हमारी कन्या का संबंध अपने हाथ से उस लड़के का बाप तो मर गया सुना जाता है पर उसकी मां को जो लोग लड़ाकी बोलते हैं इसका क्या कारण है? और यह बात भी उसने तुम ही पर छोड़ी है कि तुम भलीभांति विचार लो कि वह घर और वर कैसा है?

इधर तो भाग्यवती से वह ब्राह्मण पूछा ही रहा था उधर किसी ने लड़ाकी से जाकर कहा कि एक ब्राह्मण तुम्हारे बेटे की जन्मपत्री माँगने

आया है और भाग्यवती के घर बैठा तुम्हारे कुल की बातें पूछ रहा है। लड़ाकी बोली, उससे तो कल हमारी लड़ाई हो रही थी फिर वह कसाई की जनी मेरे घर की बड़ाई क्यों करेंगी? अच्छा मैं आप उसके घर में जाके सुनती हूँ कि वह हमारे घर को क्या-क्या कलंक लगाती है?

जब लड़ाकी भाग्यवती की डेवढ़ी में आके छिप रही तो भाग्यवती को उस ब्राह्मण से यह कहती पाया कि मिश्र जी! अपने यजमान से जाके कहो कि भाग्यवती कहती है कि देखते क्या हो ऐसा घर वर फिर नहीं पाओगे, विलम्ब न करो तिलक भेज दो और जो तुमने पूछा कि उसकी माँ को लोग लड़ाकी क्यों बोलते हैं सो यहाँ तो उसको कोई लड़ाकी नहीं बोलता और न मैंने कभी उसको गली-चौक में किसी से लड़ती देखा है। मिश्र जी तुम जानते हो कि आजकल जगत् में बैर-विरोध ईर्ष्या बहुत बढ़ रही है, किसी बैरी ने तुम्हारे पास जा के उस नाम लड़ाकी बताया होवेगा। सो तुमको चाहिए कि किसी की सुनी सुनाई बात पर कान मत धरो, वह कभी किसी से लड़ाई-भिड़ाई नहीं किया करती, हाँ इतना ठीक है कि वह इस गली में की सब लुगाइयों से बड़ी है, इस कारण यदि किसी को कुछ अनरीति करते देखती है तो शिक्षा के प्रकार से दबक दिया करती है। सो यहाँ कोई उसके कहने का बुरा भी नहीं माना करता। हमारे घर पर तो वह सदा अपनी दया रखती है और हम उसको बड़ी समझ के सब कामों में पूछ लिया करते हैं।

ये बातें सुन के लड़ाकी बहुत प्रसन्न हुई और उसी दिन से भाग्यवती के शील सन्तोष क्षमा-धैर्य की सारी गली में श्लाघा करने लग गई। एक दिन किसी स्त्री के पास यह भी कहा कि हमारी गली में भाग्यवती के समान भला मनुष्य कोई नहीं होगा; देखो मैंने उसको वृथा इतनी गालियाँ दीं पर उसने एक का भी उत्तर नहीं दिया। आज काशी भर में उसके धनी और सुसरे की बात सब लोग मानते हैं, वह चाहती तो मुझे एक घड़ी में गली से बाहर निकलवा देती पर धन्य है उसकी क्षमा को कि उसने मेरी लड़ाई का आज लों उनके पास नाम तक नहीं लिया। मुझे तो वह ऐसी प्यारी लगती है कि सारा दिन उसे पास बैठी उसकी मीठी-मीठी बातें

सुनती रहूँ। पर क्या करूँ मैंने जो उसको बहुत खोटे वचन कहे हुए हैं इस कारण मेरी आंखें उसके सामने नहीं हो सकतीं। लड़ाकी की ये बातें सुन के वह स्त्री भाग्यवती के पास गई और यहाँ का सारा वृत्तान्त सुनाया। भाग्यवती ने उस समय तो इतना ही कहा कि उनकी दया है जो हमारी बड़ाई करती है नहीं तो मुझ में बड़ाई के योग्य कोई बात नहीं। पर दूसरे दिन अपनी लड़की को खिलाती हुई भाग्यवती आप ही लड़ाकी के घर में जा घुसी और कहा तुमको देखे बहुत दिन हो गए थे इस कारण मेरा मन घर में न रह सका। कहो अम्मा! आप आनन्द-कुशल से हो? लड़ाकी ने भीतर से लाके मूढ़ा दिया और मन में सोचने लगा कि इसके साथ बातें कौन-सी करनी चाहिए? फिर कुछ सोच-समझ के बोली बहू भाग्यवती! यह तुम्हारी लड़की सदा से दुबली-पतली देखी जाती है, भगवान् रखे खाने-पीने का भी घर में कुछ घाटा नहीं पर इसकी देह पर मांस नहीं आता। भाग्यवती ने खिले हुए मुख से बड़ी प्रसननता से उत्तर दिया कि अम्मा ! आप सच कहती हो, पर अब जो इसके दांत जम रहे हैं इस कारण कुछ और भी दुबली हुई जाती है। मेरी बड़ी भूल हुई कि पहले ही से इसको डॉक्टर साहब के यहाँ न भेजा। मैं सुनती हूँ कि वे लोग नश्तर के साथ दांत उगने के स्थान को थोड़ा छेड़ दिया करते हैं कि जिससे बच्चों को दाँत जमने पर कुछ कष्ट नहीं रहता। लड़ाकी ने कहा भाग्यवती इन फिरंगी लोगों की सब बातें ऐसी ही चतुराई की सुनी जाती है।

भाग्यवती ने कहा, हाँ। इनके समान चतुर और प्रजा का भला चाहने वाला राजा आज और कौन है? देखो, हमारे देश में सीतला निकलने से कितने बच्चे मरा करते थे पर जब इन्होंने टीका लगाने की रीति फैलाई है तब से बहुत थोड़े बालक ठंडे होते हैं।

लड़ाकी ने पूछा, भाग्यवती! तुम तो पढ़ी-लिखी हुई और सारे काम जानती हो मुझे यह भली-भांति समझा छोड़ो क्या टीका कराने से शीतला ठीक थोड़े ही निकलती है। मैंने तो पिछले दिनों में कि जब वे लोग हमारी गली में टीका लगाने आए थे बहुत लुगाइयों को उनके पास बालक भेजने से रोक दिया था।

भाग्यवती ने कहा, तुमने बहुत बुरा किया, टीका लगवाना तो बहुत ही अच्छी बात है। जो लोग अपने बच्चों को टीका नहीं लगवाते वे अपने बच्चों को आप मृत्यु...

जब भाग्यवती ये बातें करके उठने लगी तो लड़ाकी बाहर तक साथ आई और बोली ऐसी-ऐसी गुण विद्या की बातें जो तुम मुझको सुनाती सिखाती रहा करो तो मैं किसी समय तुम्हारे घर पर ही आ निकला करूँगी।

भाग्यवती ने बड़े आनन्द से उत्तर दिया कि धन्य मेरे भागय वह तो आप ही का घर है, आप आनन्द से वहाँ आएँ मैं इससे भी अच्छी कई पोथियाँ आपको सुनाया करूँगी। यह कहके भाग्यवती घर को गई और लड़ाकी दूसरे ही दिन से उसके घर में आने-जाने लग गई। भाग्यवती के थोड़े दिन के सत्संग ने उसके मन को ऐसा सुधारा कि सारी गली में लोग लड़ाकी की बुद्धि विचार और ज्ञान विवेक की उपमा करने लग गए।

अब भाग्यवती के यहाँ एक पुत्र उत्पन्न हुआ कि जिसको सुन के पंडित जगदीश जी नें अत्यन्त आनन्द माना। सारी गली के लोग घर में बधाई देने आते और कहते लड़के की उमर बड़ी हो। चाहे पंडित जगदीश जी ने और मनोहरलाल शास्त्री ने लड़का होने में यथाशक्ति पदार्थ कंगालों और भिक्षुओं को तो दिया और सौ रुपया पाठशाला में भी धर्मार्थ भेजा परन्तु भाई-बंधुओं के कहने से नाच-मुजरे और अग्निक्रीड़ा में एक कौड़ी भी न लगाई।

जब भाग्यवती चालीसवें दिन का स्नान कर चुकी तो उसकी सासु ने दो एक ताँबे के ताबीज और एक-दो ऊन के धागे ला के कोई लड़के के गले ओर कोई भुजा में और कोई भाग्यवती के हाथ और कटि में बाँधना चाहा। और कहा, ले बहू! इनमें से एक तो बाबा गोमती पगरि जी ने भेजा और दूसरा भैरोनाथ योगी के यहाँ से आया है। और यह धागा मैंने एक महन्त जी से लिया है, और यह पंडित रुद्रमणि जी ने दिया है कि जो मंत्रशास्त्र में बड़े प्रवीण और सारी काशी भर में सिद्ध गिने जाते हैं। सो तू इन सबको लेकर आदर से बाँध, इनकी दया से बालक की रक्षा

रहेगी।

भाग्यवती ने हँस के कहा, ऐय्या! यह तो तुमने बड़ी दया की नहीं तो मुझे बालक की आप रक्षा करनी पड़ती। अब न तो कुछ शीत ऊष्ण में बचाव करना पड़ेगा और न भूख-प्यास के समय दूध ही चुंघाना पड़ेगा, ये सिद्ध लोगों के दिए हुए धागे और मंत्र आप ही बालक की रक्षा करेंगे।

सासु ने कहा, नहीं बहू! दूध चुंधाये बिना बालक कब पल सकते हैं?

भाग्यवती ने कहा, अम्मा! मैं क्या जानूँ तुम ही ने कहा था कि ये धागे और ताबीज के बाँधने से बालक की रक्षा रहेगी सो यदि बालक पिलाने से ही पलते हैं और उनकी रक्षा भी अपने ही हाथ से करनी पड़ती है तो फिर इन धागे-ताबीजों के बाँधने से क्या प्रयोजन सिद्ध होवेगा?

सासु ने कहा इनके होने से एक तो किसी की नजर नहीं लग सकती और दूसरी किसी देव-परी-भूत की छाया-पछाया नहीं हो सकती कि जिससे बच्चों को बड़ी भारी जोखम है।

भाग्यवती बोली, जब लड़की हुई थी तब तो तुमने मुझे कोई यंत्र और धागा बाँधने को नहीं दिया था वह आज लों जीती-जागती और भली-चंगी है। न तो उस पर किसी की नजर ही लगी और न वह आज लों किसी देव-परी व भूत की जोखम में आई देखी गई है, फिर आप यह तो बताइए कि उसकी रक्षा किसने की?

सासु ने कहा, बहू! बचानेहार तो सबका भगवान है कि, ये बातें केवल जगत की मानी हुई होती हैं।

भाग्यवती बोली, तब तो फिर तुम ही सोचो कि इस फूल के समान कोमलगात बच्चे को इनके बाँधने से बोझ उठाने और कभी-कभी इनके चुभ जाने के बिना और क्या लाभ होगा?

सासु ने कहा, अच्छा बहू! तुम जानो मैं तो तुम्हारा ही भले के लिए लाई थी, यदि इनमें तुमको कुछ फल नहीं दिखाई देता तो फैंक दो, पर मैं एक बात तुमसे पूछती हूँ कि क्या जब किसी बालक को कुछ कष्ट खेद हो तो झाड़ा-टोना, यंत्र-मंत्र कुछ नहीं कराना चाहिए?

भाग्यवती बोली, माँजी! क्या मैं कुछ तुमसे स्यानी हूँ कि जो तुमको कुछ सिखाने बैठूँ पर आप इतना विचारें कि कष्ट और खेद छोटे-बड़े सब जीवों को उदर विकार अथवा रुधिर विकार से हुआ करता है कि जो दोनों के शरीर के भीतर रहते हैं फिर धागे, टोने-झाड़ फूँक, यंत्र-मंत्र आदि बखेड़ों से कि जो शरीर के ऊपर और बाहर बाँधे और पढ़े जाते हैं क्या फल होता है? हाँ जो वस्तु भीतर अर्थात् उदर और रुधिर को शुद्ध कर दे उसके खाने-बरतने का कुछ डर नहीं। सो यह शक्ति किसी औषधि में हो तो हो और किसी में नहीं देखी जाती।

सासु बोली, तब तो तुम भूत-प्रेत और किसी देवी-देवता को भी मनुष्य में आ जाना काहे को मानती होगी।

भाग्यवती ने कहा, मैं तो मान भी लूँ यदि कोई मुझको मेरी आँखों से दिखा देवे। अम्मा! बहुत तो यही देखने में आता है कि क्या तो स्त्री और बालक अपने घर के लोगों को डराने के लिए कुछ बहाना बना बैठते हैं और क्या कभी-कभी कोई रोग भी होता है कि जिसको अज्ञानी लोग भूत-चुड़ैल का आवेश मान लेते हैं और जो तुमने मनुष्य के देह में किसी देवी-देवता का आना कहा, इसको तुम आप ही विचार के कहो कि मनुष्य के मल-मूत्र-युक्त महामलीन और अपवित्र देह में परम पवित्र देवी-देवता काहे को प्रवेश करते होंगे?

सासु यह सुन के चुप हुई और अपने पति से कहने लगी हमारी छोटी बहू भगवान् रखे बड़ी ही चतुर है, इसी कारण ईश्वर ने छोटी-सी अवस्था में धन, संतान और सब भाँति का सुख दे रखा है।

पंडित जगदीश जी ने कहा हम तो सदा उस परमात्मा का धन्यवाद करते हैं कि जिसने हमारे घर में भाग्यवती भेजी। हमको ईश्वर ने सारे सुख इसी के साथ दिखाए हुए हैं पर अब मेरे मन में यह संकल्प बहुत उठता है कि तुम सबको साथ लेकर कुछ दिन तीर्थ यात्रा करूँ।

पंडितानी बोली, आहा! यह तो आपने मेरे मन ही की कही। अब हरिद्वार का कुंभ नगीच आया है चलो पहले वहाँ का स्नान कर आएँ फिर कभी दूसरी ओर देखा जाएगा।

पंडित जगदीश जी ने पहले तो रेल पर चढ़ के चलने की इच्छा की थी पर फिर भाग्यवती के कहने से यह दृढ़ हुआ कि, घरों से चलना नित्य नित्य नहीं हो सकता, यदि रेल पर चलेंगे तो अच्छे-अच्छे नगरों और क्षेत्रों का दर्शन स्पर्श नहीं हो सकेगा, सो योग्य है कि अपने घर को बहली और पालकी और घोड़े संग ले चलें, एक तो भाड़ा नहीं देना पड़ेगा। दूसरा जहाँ चाहा एक-दो दिन ठहर पड़े।

यह बात सबने अच्छी मानी और घर का ठाठ लेकर सब त्यार हो गए। दोनों बड़ी बहुओं सासु और भाग्यवती बहली में चढ़ने ठहराए और पंडित जगदीश जी के लिए पालकी हुई। शास्त्री मनोहरलाल के लिए बड़ा धोखा और छोटे टट्टू पर आवश्यक कपड़ा चीथड़ा लादने की युक्ति लगाई। और जितनेक भाण्डे-बर्तन आवश्यक थे वे गिनके कहार को सम्हाले और कहा तुम रसोई बनाने वाले मिश्र के साथ अगाड़ी विराम पर चल के अपने चौके-बर्तन का उद्यम कर छोड़ा करना। फिर मिश्र से कहा, देवता! हमारे पहुँचने से पहले तुमको चाहिए कि किसी मोदी से सीधा सामग्री लेकर रसोई का उद्यम कर छोड़ा करो हम पहुँचते ही सारा नामा चुका दिया करेंगे।

फिर पंडित जगदीश जी ने भाग्यवती के कहने से, थोड़े रुपये मनोहरलाल के पल्ले बंधवा के कहा कि मार्ग में जो कुछ नित्य का खरच पड़े उसका लिखना और मोदी का निपटाना यह काम नित्य तुमको करना पड़ेगा और जो रुपए सारी यात्रा के लिए साथ लिए थे उन सबके नोट मंगवा के पास रखे। पंडित जी के दोनों बड़े बेटे तो घर की रखवाली में रहे और आप पंडित जी सारे परिवार समेत यथा रीति काशी से बाहर हुए।

पहले विश्राम पर पहुँचे ही सांझ के समय प्रथम तो मोदी का नामा चुकाया और फिर मिश्र और कहार को कहा तुम दोनों सो रहो क्योंकि आधी रात लो तो हम सब बातचीत करते हुए जागते रहेंगे उसके पीछे तुम दोनों को जाग के डेरे का पहरा देना पड़ेगा।

इसी प्रकार चलते-चलते जब प्रयाग में पहुँचते तो वहाँ हरद्विार के

जाने वाले लोग बहुत इकट्ठे हो गए। उस भीड़-भाड़ को देख के भाग्यवती ने अपने घर के सब लोगों को सुनाया, मेले में ठग-उचक्के बहुत होते हैं, योग्य है कि सब कोई चौकसी से रहे, क्योंकि भीड़ बुरी होती है। चाहे रात के समय मिश्र और कहार पहरा देते भी थे पर भाग्यवती एक-दो बार उठ के आप भी डेरे का ध्यान कर लिया करती थी।

एक दिन की बात है कि प्रयाग से कुछ आगे चलके एक गाँव में दुपहर हो गया। मेला बहुत होने के कारण गाँव के भीतर तो उतरने को स्थान न मिला, वृक्षों के नीचे बाहर निवास करना पड़ा। भाग्यवती समेत स्त्रियाँ तो सब तंबू में बैठी थीं और पंडित जी पालकी के बीच सोये पड़े थे। उस समय शास्त्री जी ने कहार के संग रसोइए से कहा, मिश्र जी! हम एक काम को जाते हैं, तुमने डेरे की चौकसी रखना। ज्यों-ही शास्त्री जी डेरे से बाहर हुए एक उचक्के ने आकर खूँट से छोटे टट्टू को खोल दिया। जब टट्टू थोड़ी दूर गया तो उसी उचक्के ने सामने आके मिश्र से कहा, अरे देखता क्या है भाग, तुम्हारा टट्टू जाता है। मिश्र तो उधर भागा आप पीछे से बड़े घोड़े पर लात दे उड़ने लगा। जब भाग्यवती की दृष्टि पड़ी कि घोड़ा जाता है तो सोची कि हम स्त्रियों में से तो न कोई तंबू से बाहर निकल सकती है और न कोई ऊँचे से पुकार सकती है, फिर क्या युक्ति करूँ कि जिससे घोड़ा बच जाए। तब तो यह बात सोची कि अपनी लड़की के हाथ में सोने के कड़े पहना के उसे तंबू के पिछली ओर छोड़ दिया। ज्यों-ही उचक्के ने देखा कि घोड़े से अधिक मोल के कड़े पहने हुए किसी की छोटी-सी लड़की अकेली खेल रही है, पहले इसी को उठाऊँ तो घोड़ा छोड़ उसके पास आया, लड़की उस नए मनुष्य को देख के डरी और ऊँचे से चिल्लाई तो तुरंत पंडित जी जाग के पालकी से निकल भागे। आते ही उचक्के को पकड़ लिया और थाने पहुँचाया। जब यह सारा वृत्तान्त घरवालों ने सुना तो रसोइए के मूर्खपन और भाग्यवती की चतुराई पर सबको आश्चर्य हुआ। अब और सुनिए कि, इनका डेरा तो प्रताती दिखाई देता ही था, चार-पाँच उचक्के वहीं से इनके पीछे हो लिये। जहाँ इनका डेरा ठहरा करता वहीं वे ठहर जाते और जब चलते तो चल पड़ा

करते थे। डेरा तो उनका नित्य इनके निकट हुआ ही करता था परन्तु अब पंडित जगदीश जी के साथ इन्होंने थोड़ा प्रेम भी उत्पन्न कर लिया। कभी-कभी पंडित जी के पाँव दबाने लग जाया करते हैं और कभी पंखा हाँकने लग जाते। एक दिन जो पंडित जी ने उनके स्थान और जाति पूछी तो किसी गाँव के वैश्य बताया और कहा कि हम भी श्री हरिद्वार जी को जाते हैं।

एक दिन जो किसी सराय में स्थित हुई, तो अधिक प्रेम बढ़ाने और सरलता दिखाने के लिए उनमें से एक ने कहा, पंडित जी महाराज! आप बड़े प्रतापी और धनवान् हैं, इस कारण मैं कह तो नहीं सकता पर हमारी सब की इच्छा है कि यदि आप मान लें तो आप के डेरे के लिए भी आज रसोई कच्ची-पक्की जैसी आप कहें हमारी ओर ही बन जाए।

पंडित जी ने कहा, है तो ठीक! पर हम तो कभी किसी का नौता माना नहीं करते।

वैश्य बोला, नारायण कहो महाराज! हमारी कहाँ सामर्थ्य जो हम आपको नौता (न्यौता) जिमाएं, यह तो प्रेम की बात है। जब आपका मन चाहे आज हम को जिमा दें, हम बड़े आनंद से आपके यहाँ जीम लेंगे।

पंडित जी ने इस विषय में जब भाग्यवती से पूछा तो उसने कहा, किसी का निरादर करना तो अच्छा नहीं होता पर विदेश की बात है, क्या जाने किसी के मन में क्या भरा है, पर आप उनसे यह कह दें कि हम अपने ब्राह्मण के बिना किसी के हाथ की रसोई नहीं पा सकते?

वैश्यों ने इस बात को और भी अच्छी समझ के आपस में विचारा कि, इस समय तो हमने केवल अपनी प्रीति और सरलता ही दिखानी है, इन्हीं का ब्राह्मण बनावे। तुरन्त सारी सामग्री मंगवा दी और रसोई बनने लगी। जब रसोई जीम चुके तो एक-एक बीड़ा पान का सब को दिया। अब अत्यन्त प्रेम बढ़ गया और आपास में किसी को कुछ भ्रम न रहा। पंडित जी के यहाँ की कोई वस्तु लेने खाने में न कुछ उनको संशय होता और न उनके यहाँ के पदार्थ खाने-पीने में इनको कोई संदेह खड़ा होता था। चाहे वे चोरी दाँव तो बहुतेरा लगा चुके पर भाग्यवती की चतुराई

से बड़ा भय करते थे।

एक दिन उन्होंने यह युक्ति निकाली कि रसोई बनाने वाले मिश्र से किसी भाँति गठ जाएं तो सब काम ठीक हो जाएगा। यह सोच के कभी तो उसको एक सीधा दे दिया, और कभी कोई धोती वह अंगोछा पहना देते। कभी भोजन जिमा के दो-चार आने दक्षिणा पकड़ा दी और कभी किसी नदी वा ताल पर नहा धो-के दो पैसे पकड़ा देने लग गए।

जब देखा कि ब्राह्मण देवता अब हमारे हो गए हैं तो एक दिन पूछा, देवता! पंडित जी आपको क्या दरमाहा देते हैं।

मिश्र ने कहा, सेठ जी! मैं दो-चार वर्ष से इनके घर में नौकर हूँ और दो रुपए महीना और रोटी-कपड़ा मिलता है। फिर बोला, पंडित जी तो बड़े अमीर और कभी दो के चार भी पकड़ा दिया करते हैं, पर इनकी बहू बड़ी चतुर और लेखेधारी है, वह एक कौड़ी भी किसी की ओर अधिक नहीं जाने देती।

चोरों ने एक मुट्ठी किसी अन्न की दे के कहा, लो मिश्र जी! ये दाने हमको बैजनाथ जी की झाड़ा से मिले थे, इनका यह स्वभाव है कि जो कोई अपने हाथ से किसी को खिला दे वह उसका दास हो जाता है। सो तुम किसी प्रकार यह दाने सारे परिवार को खिला दो, सब तुम्हारे दास हो जाएंगे और तुम्हारे बिना किसी दूसरे का कहना इस घर में न चलेगा।

मिश्र जी ने वह दाने दाल में मिला के सब को खिला दिए और वही दाल आप भी खाई, जब चार घड़ी बीती तो सब के सब उल्लू बन गए। किसी को कुछ सुध-बुध न रही।

जब चोरों ने देखा कि अब किसी को सुध-सम्हाल नहीं और भाग्यवती भी मूर्छित पड़ी है तो सारे डेरे को लूट कर जो कुछ पाया लेकर लंबे हुए। पंडित जी का परिवार उस दिन तो मूर्छित रहा जब दूसरे दिन सुध आई तो क्या देखते हैं कि न कोई बर्तन है न कपड़ा न वे वैश्य ही कहीं दिखाई देता है, जो कुछ ठाठ था सब लुट गया।

भाग्यवती को जब कुछ सुध आई तो बड़ी पश्चाताप करने लगी और बोली कि मैं तो पहले ही दिन से उन पर विश्वास नहीं करती थी और

इसी कारण मैंने उस सराय में अपने ब्राह्मण के हाथ से भोजन बनवाया, पर न जाने उन्होंने अब हम को क्या खिलाया और कैसे खिलाया? हम तो अपने को तब मूर्ख ठहराएँ कि यदि कोई वस्तु उनके हाथ से खाई हो। यह तो ऐसा जाना जाता है कि उन्होंने मिश्र से मिल के अथवा इससे चोरी कोई अमल की वस्तु हमारी रसोई में मिला दी होगी। यदि ऐसा न होता तो हम एक ही समय सब के सब मूर्छित न हो जाते।

भाग्यवती ये बातें करके टहलती-टहलती उस स्थान पर आई कि जहाँ रसोई बनाई थी। जब कुछ दृष्टि देकर देखा तो चौके में चूल्हे के पास से एक-दो बीज़ धतूरे के गिरे पाये, जब बीज भाग्यवती ने अपनी सासु को दिए तो पंडित जी ने मिश्र से पूछा बता रे! तूने यह धतूरा चौके में काहे को रखा था? मनोहर, जा इस चमार के जने को थाने में ले जा और कह कि इसने हमको विष खिलाई और ठगों से मिल के हमारा डेरा लुटवाया।

मिश्र ने हाथ जोड़ के कहा, महाराज! मैं क्या जानूँ कि ये धतूरे के बीज़ हैं, मुझे तो उन बनियों ने यह कह के दिए थे कि पीस के दाल में डाल लेना बहुत अच्छी बन जाएगी और यदि मैं इसको विष समझता तो आप ही क्यों खाता?

भाग्यवती ने उसकी बोल-चाल से समझ लिया कि चाहे कोई कारण हो पर इस मिश्र ने इसको धतूरा समझ के हमें नहीं खिलाया। बहुत क्या विचारें पर यह उनके धोखे में आ गया। सो चाहिए कि आगे को पक्का कर दूँ। यों सोच के बोली, मिश्र जी! अपराध तो तुमने ऐसा ही किया था कि कुछ दिन जेलखाना देखते, पर अब हमको तेरे बुढ़ापे पर दया आती है! अच्छा जा! अब तो पंडित जी क्षमा करते हैं पर आगे को कभी भी किसी की दी वस्तु किसी के भोजन में न मिलानी चाहिए।

फिर अपनी सासु से बोली, ऐय्या! आप कुछ चिंता न करें, विदेश में हम पर उपद्रव तो बड़ा ही उठा था परन्तु ईश्वर ने बड़ी दया की कि वे चोर, बर्तनों के थैले और छोटे टट्टू और एक बड़ी दरी और गाड़ी के

बैलों के बिना हमारा और कुछ नहीं ले गए क्योंकि नोट के कागद और सब का गहना-पत्ता और रोकड़ी जहाँ डेरा हुआ करता है मैं सब कामों से पहले थैली में भर के एक गढ़े में दबा दिया करती हूँ, सो ईश्वर की दया से वह सब कुछ वैसा ही धरा है और गाड़ी भी खड़ी है। तब तो सब के मन प्रसन्न हुए और बोले, इस मिश्र ने तो हमारे प्राण भी खोए थे और पदार्थ लुटवाने में भी कुछ घाटा नहीं रखा था, पर तुम्हारा भला हो तुमने अपनी बुद्धि से सबका गहना-पत्ता और नोट बचा छोड़े नहीं तो भीख मांग के घर पहुँचना पड़ता। चलो घोड़े, टट्टू, बैल और दरियाँ तो और भी बहुतेरे बना लेंगे पर ईश्वर की बड़ी भारी दया इस बात में समझनी चाहिए कि तुम्हारा लड़का-लड़की कुशल से रहे।

भाग्यवती ने कहा अब यहाँ रहना अच्छा नहीं, कोई छोटे-मोटे बैल लेकर गाड़ी को चलती करनी चाहिए। पंडित जी के पास पालकी है और हम सब मिल के गाड़ी में निर्वाह कर लेंगे, रहा कपड़ा सो कहार अपनी बहंगी पर रख लिया करेगा।

जब वहाँ से चलने लगे तो भाग्यवती ने सब से कहा, मैंने पहले कहा था कि मेले की भीड़ बहुत है और इसमें ठग उचक्के बहुत होते हैं। और अब तुम सब ने इस बात की परीक्षा भी कर ली है सो चाहिए कि अब अगाड़ी की यात्रा बड़ी चौकसी से पूरी करो। यात्रा उसी पुरुष की सुख से पूरी होती है कि जो खाने-पीने और सोने-जागने में चोकस रहे। खाने-पीने में चौकस रहना केवल इस बात का नाम नहीं कि किसी के हाथ से न खाना-पीना चाहिए वरन् खाने-पीने में चौकसी इस बात का भी नाम है कि खाने-पीने में संयम रहे। बहुत लोग हैं कि विदेश में आके पथ्य-कुपथ्य कुछ नहीं विचारते, जो कुछ पदार्थ नया देखते हैं उसको अवश्य खा-पी लेते और रोगी हो जाते हैं। सो चाहिए कि जो मनुष्य विदेश में निकले पहले तो पथ्य-कुपथ्य विचार के खाए और फिर थोड़ा खाए।

एक बात और भी है कि यात्रा में सबकी वृत्ति तमोगुणी होती है

और ठीक समय पर अन्न, जल और सोना जागना न मिलने के कारण मन बहुत तपा हुआ रहा करता है, सो बुद्धिमान को चाहिए कि धैर्य और विचार को हाथ से न छोड़े। और यह बात भी बहुत ही आवश्यक है कि यात्रा में जो लोग अपने संग हों उनको कभी दुखी न करे और उनके दुःख-सुख में उनका साथ निबाहे। भाग्यवती ये बातें करती हुई चली जाती थी कि आगे एक सरोवर आ गया। सबकी यह इच्छा हुई कि मिश्र और कहार ने रसोई का उद्यम आगे जाके कर ही रखा होगा सो योग्य है कि हम सब यहाँ स्नान कर चलें।

एक तीर पर गाड़ी खड़ी करके जो उतरने लगे तो भाग्यवती ने कहा, अम्मा! वह देखो सामने जो मनुष्य सरोवर में स्नान करने को बैठा है उसने कैसी चूक की बात की है, मैं देख रही हूँ कि उसने रुपयों की एक गंजिया[1] कटि से खेल के ताल के तीर पर धर दी और ऊपर अपनी चादर डाल के उसको छिपा दिया है। मुझे निश्चय है कि यदि किसी उचक्के की दृष्टि इस पर पड़ गई होगी तो तुम्हारे देखते ही उठा लेता है। भाग्यवती ये बातें कर ही रही थी कि एक उचक्के नें अपने कपड़े उसके पास उतारे और स्नान को उद्यत हुआ। जब देखा कि उस गंजिया वाले की दृष्टि थोड़ी-सी अपनी चादर पर से टली गंजिया समेत चादर को उठा के तो झट अपने साथी को आगे पकड़ाया और एक उसी रंग-ढंग की दूसरी चादर अपने पास से उस स्थान पर रख दी। यह बात देख के भाग्यवती की सासु बोली, ऐहे बहू! अब यह निगोड़ा इसको ले ही जाएगा? और यात्री की यात्रा पैसे बिना कैसे पूरी होगी?

भाग्यवती ने कहा, तो और क्या! फिर इसने इतनी भीड़ में अपने रुपए खोल के ताल के तीर पर क्यों धरे थे?

पंडितानी बोली, खोल के न रखता तो गंजिया न भीग जाती?

भाग्यवती ने कहा, अहा! आप भी अच्छी कहती हैं, क्या तुम यह नहीं सोचती हो कि गंजिया का भीग जाना अच्छा था व जड़ से खोई जाना?

---

1. बाँसुली वा नौला भी बोलते हैं।

सासु ने कहा, यदि इसके भाग्य में गंजिया का खो जाना ही लिखा था तो यह रोक कैसे सकता?

भाग्यवती बोली, आं हां! मैं यह तो नहीं कहती कि भाग पर भरोसा नहीं रखना चाहिए पर यह तो सब को समझ में आता है कि यदि वह कटि से अलग न करता तो गंजिया खोई कभी न जाती। सो मनुष्य को चाहिए कि जहाँ लों हो सके अपनी चौकसी में घाटा न रखे आगे भगवान की इच्छा।

जब स्नान ध्यान करके इन्होंने अपनी गाड़ी आगे को चलाई तो विश्राम स्थान पर पहुँचे। वहाँ क्या देखते हैं कि एक वृक्ष के नीचे चौका भाण्डा किए हुए इनका कहार उदास सा बैठा है। पंडित जी ने पालकी से उतरते ही पूछा, अरे मिश्र कहाँ गया है? क्या अब लों रसोई नहीं चढ़ाई? उसने कहा महाराज! हम सवेरे से इस छाया में अपना चौका लगा के बैठे थे, इतने में एक लाला दस-बीस मनुष्य की भीड़ लेकर यहाँ आ उतरे थे। हमने बहुतेरा समझाया कि हम सबसे पहले यहाँ उतरे हैं और अब इस स्थान को हम नहीं छोड़ेंगे, पर उसके नौकरों ने हमको मार-पीट के यहाँ से उठाना चाहा। हमने भी भगवान की दया से आपका लौन खाया है, ऐसे घूँसे लगाए कि नौकर तो क्या उनके लाला भी जन्म भर नहीं भूलेंगे, सो फिर जो उनका कोई नौकर रोता हुआ थाने में जा खड़ा हुआ था इस कारण एक सिपाही आके मिश्र को थाने में ले गया।

पंडित जी ने पूछा, यदि किसी भले मानस ने तुम से स्थान छोड़ने को कहा था तो छोड़ के और किसी वृक्ष के नीचे हो बैठते, इतना झगड़ा क्यों बढ़ाया?

कहार ने उत्तर दिया, महाराज! आप भला कहते हैं, देखो तो सही एक तो मारे भीड़ के यहाँ ऐसा कोई रुख नहीं दिखाई देता कि जिसके नीचे कोई टिका हुआ न हो दूसरा जो स्थान हमने सवेरे से अपना कर छोड़ा था, उसको हम उनके कहने से छोड़ कैसे देते?

पंडित जी बोले भाई है तो सच! पर विदेश में कभी-कभी आप मिट जाना भी अच्छा होता है। भला कहो तो उस स्थान में क्या तुमने घर बना

के बैठना था? श्रेष्ठ तो यही था कि तुम किसी और स्थान में हो बैठते; थोड़े काल में या तो छाया ही वहाँ आ जाती और क्या वे लाला ही रसोई बना-खाकर आगे को टरक जाते, अब जाओ किसी सिपाही को कुछ दे दिला के मिश्र को छुड़ा लाओ।

जब मिश्र आया तो भाग्यवती ने सासु से कहा, अम्मा! तुम मिश्र को बुला के कहो, पहले तो तुम्हारे मूर्खपन ने हमको धतूरा खिलाया और अब तुम हम को थाने पहुँचाना चाहते थे अभी तो हरिद्वार दूर है क्या जाने किस-किस झगड़े में डालोगे।

जब पंडितानी न मिश्र को बुला के समझाया तो बोला, पंडितानी जी! तुम कहती तो ठीक हो, पर एक बात हम मूर्खों की भी याद रखो, विदेश में ऐसे ढीले और डरपोक वन रहना भी अच्छा नहीं होता। देखो यदि हम उसके आगे ढीले और दीन ही रहते तो वह हमारे भाण्डे बर्तन भी छीन लेता। आपकी दया से हम सब कुछ जानते हैं। जहाँ ढीले होना चाहिए वह स्थान भी हमसे भूला हुआ नहीं और न वही छिपा हुआ है कि जहाँ तकड़े हो जाने से काम निकलता है।

यह सुनके भाग्यवती बड़ी प्रसन्न हुई और बोली, आहा अम्मा आज तो मिश्र ने बड़ी बुद्धि की बात कहीं। मैं तो इसको सीधा-सा ही जानती थी पर क्यों न हो अन्त को तो बनारस का पानी पिया हुआ है ना!

इन बातों के पीछे डेरा कूच किया, जब थोड़ा आगे बढ़े तो गाड़ी में बैठे-बैठे भाग्यवती ने सासु से पूछा, ऐय्या! तुम तो कई बार हरिद्वार गई होगीं, मुझे यह तो बताइए कि यह जो इतना बड़ा मेला इस एक ही सड़क पर दिखाई देता है यदि चारों ओर से इतना ही आया होगा तो वहाँ रहने का स्थान काहे को मिलता होगा?

सासु बोली, नहीं बहू मैं तो पहले कभी नहीं गई, पर मैंने यह सुना है कि वहाँ रहने के लिए बहुत स्थान बने हुए हैं। कई ऊँचे-ऊँचे मन्दिर तो वहाँ राजा लोगों के बनाए हुए हैं और अनेक स्थान वहाँ साधु लोगों के बन रहे हैं जो उन राजाओं से भी अधिक शोभा देते हैं।

भाग्यवती बोली, फिर वे साधु काहे को हुए वे तो बड़े भागी सेठ

समझने चाहिए कि जिनके स्थान ऐसी बड़ी भारी लागत के आपने सुनाए। भला आप यह तो बताओ कि वे साधु लोग इतना धन कहाँ से और कैसे इकट्ठा कर लेते हैं।

सासु ने उत्तर दिया कि बहू! ये लोग राजाओं से मांग के भी कुछ धन ले जाते हैं और सहस्रों रुपयों का व्यवहार भी किया करते हैं।

भाग्यवती बोली, फिर उनको आप साधु क्यों समझती हैं कि जो राजाओं से धन मांग के लाते हों? साधु तो वही है कि जो ईश्वर के प्रेम-मग्न रहे और शरीर निर्वाह के बिना और किसी पदार्थ की अपनी निमित्त कामना न रखे। जैसा कि गीता में लिखा है–

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति।
शुभाशुभ परित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रिय।।

अर्थ इसका यह है कि भगवान् कहते हैं जो पुरुष न कभी किसी वस्तु को पाके प्रसन्न होता और न अति द्वेष करता है और न किसी बात की सोच करता और न किसी पदार्थ की चाह करता है। और जिसको न किसी के शुभ से प्रयोजन और न अशुभ से काम है और भक्तिमान् पुरुष मेरा प्यारा है!

सासु बोली, हाँ बहू! जैसे तुम कहती हो वैसे साधु भी वहाँ बहुत आते सुने जाते हैं। जैसे कि कई साधु वहाँ खंडेसरी और ऊँचे भुजा वाले आते हैं। और बहुत वहाँ वैसे आते हैं कि जो झूले पर लटकते रहते और कभी अन्न नहीं खाते एक पाव भर दूध पी के निर्वाह करते हैं। कई वहाँ वैसे भी सुने जाते हैं कि जो सदा नंगे रहते और शीत काल में जलधारा में बैठते और ग्रीष्म में पंचाग्नि तपते हैं। और कोई-कोई ऐसे भी भगवान् के प्यारे वहाँ आते सुने हैं जिन्होंने जन्म भर राख में लेट के दिन पूरे किए हैं।

भाग्यवती बोली, माँजी! मैं तो इन लोगों को भी भगवान् के प्यारे और साधु कभी नहीं कहूँगी कि जो आपने सुनाए हैं। क्योंकि ये सारे स्वांग पेट भरने के लिए नाच रूप हैं कुछ कल्याण के निमित्त नहीं जैसा कि शास्त्र में लिखा है–

काषायग्रहणं कपालभरणं केशावली लुञ्चनम्।
पाखण्डव्रत भस्मचीवरजटा धारित्वमुन्मत्तता।
नग्नत्वं निगमागमादिकवितागोष्ठी सभामण्डले।
सर्वं चोदरपूरणार्थनटनं न श्रेयसां कारणम्।।1।।

इसका अर्थ है कि गेरुए कपड़े रखना और मनुष्य की खोपड़ी हाथ में रखना, केशों का उखाड़ना और पाखंड के व्रत धारण करना, धूली में लिपटे रहना और फटे पुराने कपड़े और जटा का बोझ उठये रहना, बदन से नंगे रहना और बहुत से वेद-पुराणों की कविता और सभा-गोष्ठी करना, इत्यादि सारे काम उदर भरने के निमित्त नृत्यकारी रूप हैं कल्याण का कारण नहीं, कल्याण का कारण तो केवल ईश्वरभक्ति और वैराग्य है।

इस प्रकार की बातचीत करते-करते ऐसे स्थान में पहुँचे कि जहाँ हरिद्वार केवल एक विश्राम पर था। तड़के ही जो भाग्यवती अपने लड़के को लेकर किसी आवश्यक काम के निमित्त अपनी गाड़ी से उतरी तो भीड़ के कारण भूल के गाड़ी से थोड़ा सरक गई। जब गाड़ी वाले इसको चढ़ाने के लिए लपक के कुछ आगे हुए तो यह बहुत पीछे रह गई। मेले की भीड़ ऐसी नहीं थी कि किसी भूले-भटके को मिलने देती। भाग्यवती ने बहुत ही उद्यम किया पर गाड़ी का कुछ पता न लगा। अब गाड़ी तो सैकड़ों गाड़ियों से मिली-जुली हरिद्वार में जा पहुँची और भाग्यवती पाओं से नंगी लड़के को उठाए हुए अकेली पीछे ढूँढ़ती रह गई। उस समय सैकड़ों गाड़ियाँ मेले में चल रही थीं जिसको पूछती कि हमारी गाड़ी किधर गई है। पास न कोई पैसा था न रुपया और न कोई गहना कि जिसको बेच के उस दिन का भोजन ले लेती। उस दिन भाग्यवती ने अपनी भूल मान के मन में यह भी कहा कि मैंने आज लों कोई यात्रा नहीं की थी परन्तु अब यह भी परीक्षा भी हो गई कि चाहे एक दिन की यात्रा भी हो परन्तु कुछ पैसा रुपया अपने साथ सब को अवश्य रखना चाहिए। उस दिन भाग्यवती को जो कष्ट हुआ ईश्वर ही जानता है। छोटा बच्चा अलग दुखी करता और पाओं में आवले न्यारे क्लेश दिखा रहे थे। चलने के कारण एड़ियां तो चिड़ी के बच्चे की नाईं लाल निकल आईं और मारे प्यास के

मुख उबलता जाता था। धूप के ताव और धूल ने उसके कोमल मुख को अत्यन्त व्याकुल कर दिया और मारे सोच और संकोच के मन की वृत्ति खिन्न भिन्न होती जाती और धैर्य सन्तोष हाथों से निकल जाता था।

यद्यपि घर के लोगों से बिछड़े के भाग्यवती की ऐसी बुरी दशा हुई परन्तु मन की दृढ़ता को हाथ से न छोड़ा। चित्त में यही उद्यम और निश्चय रखा कि अब जा मिलती हूँ। कभी-कभी यह भी विचारती कि मैंने जन्म भर कभी भूख प्यास को नहीं सहारा और न कभी एक कोस लों भी पाँव से चली और न कभी पाभर बोझ उठाया था। ईश्वर बड़ा गर्व प्रहारी है कि जिसने भूख प्यास का सहारना और पैदल चलना और लड़के का बोझ उठाना, ये तीनों बातें मुझे एक ही दिन में दिखा दीं। फिर कहती उसने मुझे रीति से यह शिक्षा दी है कि मनुष्य को चाहिये कि शरीर को अत्यन्त सुखी न रखे। कभी कभी भूख प्यास को भी सहारा करे और अपने पाँव से कोस दो कोस चलना भी अंगीकार करें। ओर कुछ न कुछ बोझ उठाने की प्रकृति भी तन और मन को अवश्य सिखाना चाहिए। वैद्य लोग बड़े बुद्धिमान् हैं कि जिन्होंने अपने ग्रंथों में शरीर की अरोग्यता के निमित्त नित्य का टहलना अथवा मोगली मुग्दर का फेरना श्रेष्ठ लिखा है। ये बातें कहती और सोचती चली जाती थी कि एक मन्दिर दिखाई दिया। तुरन्त उसके निकट जा खड़ी हुई, और सोचने लगी कि यदि मुझे आज कुछ खाने-पीने को न मिला तो कल मेरी छाती में बालक के लिए दूध नहीं रहेगा। सो अपने खाने-पीने का तो मैं एक दो दिन हठ भी कर सकती हूँ पर बालक को भूखा रखना अच्छा न होगा। इसी सोच में खड़ी थी कि उस मन्दिर के भीतर से हाथ में पोथी लिए हुए एक लड़की निकली जिसको देख इसने पूछा कि तू किसकी और कहाँ से आती और यह मन्दिर किसका है?

लड़की बोली, मैं वैश्य की बेटी और अपनी संथा पढ़ के आती हूँ और यह कोई मन्दिर नहीं स्त्री लोगों की पाठशाला है।

तब तो भाग्यवती भीतर गई ओर वहाँ की पंडितानी से मिल के यह दोहा सुनाया–

दोहा

कौन पढ़ावत है यहाँ, का की यह चटशाल।
कौन कौन विद्या यहाँ पढती हैं सब बाल।।

पंडितानी इस तुरन्त के रचे हुए दोहे को सुनकर चकित हुई और बोली कि पढ़ाया तो यहाँ मैं ही करती हूँ और यह चटशाला सारे ग्राम के सुख के निमित्त राजा उदयसिंह जी ने बना रखी है कि जो इसी ग्राम में निवास करते हैं। विद्या यहाँ वे ही पढ़ाई जाती हैं कि जिनका राजा जी को आप अभ्यास है जैसा कि हिंदी भाषा और संस्कृत। सो आपकी वाणी से यह तो स्पष्ट जाना गया कि कुछ पढ़ी-लिखी हुई हो पर यह बताओ कि कैसे यह दोहा तुरन्त बना लिया वैसे कोई संस्कृत श्लोक भी बना लिया करती हो वा नहीं? और यह भी बतलाना चाहिए कि आपका नाम क्या है और कहाँ से आती हो और अब इच्छा किधर की है।

भाग्यवती ने तुरन्त ही यह श्लोक पढ़ के उत्तर दिया–

अहं भाग्यवती देवी वाराणस्यां समागता।
हरिद्वारं प्रयाम्यद्य विप्रयुक्ता स्वबन्धुभिः।।

अर्थ इसका यह है कि हे देवी! मैं भाग्यवती नाम ब्राह्मणी वाराणसी अर्थात् बनारस से आई और हरिद्वार को जाती हूँ और आज अपने संबंधियों के साथ से बिछड़ रही हूँ।

जब भाग्यवती ने उसके सब प्रश्नों का उत्तर एक ही श्लोक में सुना दिया तो पंडितानी ने तुरन्त राजा से जा कहा कि इस समय एक ब्राह्मणी शाला में खड़ी है, वह बड़ी ही पंडिता जानी जाती है और मैंने उसको आप देखा कि वह भाषा और संस्कृत के छंद और श्लोक भी झटपट बना लेती है, मैं चाहती हूँ कि आप भी उसको अवश्य देखें। उस राजा को गुणवानों के देखने का अत्यन्त प्रेम था। झट पंडितानी के साथ शाला में आए। जब पास पहुँचे तो भाग्यवती ने उठके तुरन्त यह दोहा नया रच के आशीर्वाद में पढ़ा :–

दोहा

सुख सम्पत की वृद्धि हो, उदय रहे यशमान्।
बल विद्या की जय सदा, उदयसिंघ बलवान्।।

पंडितानी बोली, देवी भाग्यवती! हमारे राजा जी भाषा छंदों को भी बहुत अच्छा समझते हैं, परन्तु मेरी इच्छा है कि जिस में तुम्हारी सारी व्यवस्था इनको प्रतीत हो जाए ऐसा कोई संस्कृत श्लोक बना के सुनाओ।

भाग्यवती ने उसी समय यह श्लोक नया बना के पढ़ा कि जिससे भाग्यवती की सारी दशा और विपत्ति प्रकट होती थी–

राजान्नद्यगतास्सर्वे मदीया बांधवाः क्वचित्।
स्वपुत्रक्षुन्निवृत्यर्थमागताहं त्वान्तिके।।

अर्थात्– हे राजन्! आज मेरे सब संबंधी कहीं भूल गए हैं, अपने पुत्र की भूख मिटाने के लिए तुम्हारे पास आई हूँ।

राजा यह सुन के बहुत प्रसन्न हुए, और सारी शाला के सामने भाग्यवती के गुण, विद्या और शील की श्लाघा करने लगे। फिर भाग्यवती को स्ना़न भोजन कराने के अनन्तर इक्कीस रुपया भेंट देकर अपने पुरोहित और रथवान् को आज्ञा दी कि इन पंडितानी जी को हरिद्वार पर पहुँचा के जब लों इनके संबंधी न मिलें सेवा-टहल में तत्पर रहना। और फिर भाग्यवती से कहा कि अब तो हम आपकी आवश्यकता देख के रोकना योग्य नहीं समझते पर लौटती बार एक-दो दिन यहाँ अवश्य दया करनी होगी। क्योंकि हम अभी आपके अमृत भरे वचन सुनके तृप्त नहीं हुए।

अब भाग्यवती तो रथ में बैठ के हरिद्वार में आई और इसके संबंधी लोगों में से कोई पीछे को भागा और कोई मेले में ढूँढ़ने लग रहा था। जब भाग्यवती की सासु भाग्यवती का ध्यान करके रोने लगती तो पंडित जगदीश जी कहते, मनोहर की माँ हम यह तो नहीं कहते कि भाग्यवती सी बहू के बिछुड़ जाने से हमारा मन दुखी नहीं हुआ पर उसकी बुद्धि विवेक पर हमको यह निश्चय कभी नहीं पड़ता कि वह हम से बिछुड़ के

और स्त्रियों के नाईं रोती व भूली भटकती फिरती होगी। हम को पूरा निश्चय है कि चाहे उस के पास कुछ पैसा-कौड़ी नहीं पर उसने अपने बालक को भूखा कभी नहीं रहने दिया होगा और हम यह भी जानते हैं कि हम चाहे कितना ही उद्यम और यत्न करें परन्तु वह इस भीड़ में हमको कभी नहीं मिलेगी। और जब वह आप ही उद्यम करेगी तो कोई ऐसा उपाय रच लेगी कि जिसमें बिना यत्न हमारे पास पहुँच जाए।

भाग्यवती की सासु बोली, हाँ वह तो लुगाई ठहरी इतने बड़े मेले में हमें कहाँ ढूँढ़ती फिरेगी, क्या उसको हमारा पता पूछते हुए लज्जा नहीं आवेगी? क्या वह आज लों कभी घर से बाहर निकली थी कि जिसको मनुष्यों से बोलने-बतलाने का समागम मिला हो? भला सोचो तो सही, वह किसी से कैसे पूछेगी कि अमुक पंडित जी कहाँ ठहरे हैं? क्या वह आपका व मेरा और मनोहर का नाम ले सकती है?

पंडित जी ने कहा यह सब सच और वह कभी घर से बाहर भी ठीक नहीं निकली, पर विद्यामान् को कोई बाहर और भीतर की बात भूली हुई नहीं होती। जो तुमने पता पूछने की बात कही विदेश में किसी से कुछ पूछने में क्या लज्जा है? और जिस लज्जा में अपने को कष्ट हो बुद्धिमान् उसको कब सहार सकता है? हाँ वह हमारा तुम्हारा नाम तो ठीक नहीं ले सकती पर लिखे-पढे मनुष्य को किसी का नाम दूसरे को समझा देना क्या कुछ कठिन होता है?

पंडितानी ने ये बातें सुन के पंडितजी को उत्तर तो न दिया, पर भाग्यवती की चिंता से मन कब हटता था। अंत को अपने सब नौकर चाकर मेले में और बाजारों में फिर भेज दिए। और बड़ी बहुओं को कहा तुम इस चौबारे की बारियों में बैठ के भाग्यवती को देखती रहो, क्योंकि सारा मेला इसके नीचे होकर निकलता हे, और इसी कारण हमने इसका भाड़ा और स्थानों से चौगुना दिया है। फिर मनोहरलाल को कहा, बेटा तुम हरिद्वार की ठीक पैड़ी पर बैठो कि जहाँ सब यात्री एक बार अवश्य पहुँचा करते हैं और पंडित जी को कहा, आप चाहे बुरा मानो चाहे भला, पर मेरी तो यह इच्छा है कि कनखल और हरिद्वार की सब धर्मशाला और

शिवालयों में तुम आप जाके देख आओ कि कहीं मेरी भाग्यवती आई है वा नहीं।

इधर तो पंडितानी के कहने अनुसार भाग्यवती के ढूंढ़ने को सारे लोग डेरे से निकले उधर भाग्यवती ने मेले से बाहर अपनी रथ खड़ी करके, यह बात विचारी कि लड़के को उठाके इतनी बड़ी भीड़ में मुझे घुसना अच्छा नहीं पर कोई और युक्ति निकालनी चाहिए कि जिससे वे लोग सुगम ही मुझको आ मिलें। तुरन्त पाँच-दस पत्र कागद के मंगा के उन पर न्यारी-न्यारी यह बात लिखी कि–

"मैं भाग्यवती कनखल और हरिद्वार के बीच में गंगा नहर के पुल पर ठहरी हूँ।"

फिर उस राजा के पुरोहित को कहा कि देवता! मेले में जो प्रधान स्थान और प्रसिद्ध धर्मशाला और शिवालय वा मुख्य क्षेत्र देखो उनके द्वार पर ये पत्र एक-एक चिपका आओ। पुरोहित उन कागदों को लेकर गया, कोई हरिद्वार की पैड़ी के पास और कोई बाजारों के चौक और कोनों पर, ओर कोई श्रवणनाथ के शिवालय के द्वार और कोई योगी बाड़े के माथे पर चिपका आया, कोई पत्र कुशावर्त्त ब्रह्मकुण्ड के ऊपर चिपका दिया कि जहाँ सबकी दृष्टि अचानक पड़ जाती थी।

ज्यों-ही वे पत्र पंडित जी और मनोहरलाल की दृष्टि में पड़े तुरन्त गंगा नहर के पुल की ओर दौड़े। जाते ही भाग्यवती को बैठी देख के अति आनन्दित हुए, रथ तो साथ ही थी। भाग्यवती को उसमें बैठा लड़के को पंडित जी ने छाती से लगा लिया जब अपने चौबारे में आए भाग्यवती ने वे इक्कीस रुपए आगे चढ़ा के सासु के चरणों पर सिर रक्ख और दोनों जेठानी को यथायोग्य पालागन कही। तब तो सब बालक को उठा-उठा चूमने और भाग्यवती से बिछुड़ने का वृत्तान्त पूछने लगीं। भाग्यवती ने सारा व्यवहार भूखे-प्यासे रहने, और पाठशाला में आके राजा उदयसिंह को मिलने और रुपए और रथ पाने का उनके आगे प्रकट किया। वे सब सुनके आपस में कहने लगीं धन्य तुम्हारी बुद्धि और धैर्य! यदि कोई हम सरीखी लुगाई होती तो तड़प के मर जाती।

भाग्यवती ने कहा, यह तो मैं कैसे कहूँ कि अपने साथ से बिछुड़ कर कोई दुखी नहीं होता पर इतनी बात चाहिए कि मनुष्य असमर्थ और उदास न हो जाए। क्योंकि बिछुड़ना, मिलना, जीतना, हारना, हानि, लाभ ये सब व्यवहार मनुष्य के लिए ही हैं, और यह भी सच है कि एक सा समय कभी नहीं रहता। कभी विपत, कभी सम्पत जीते जी प्राणी को कई बार देखने पड़ते हैं। वरन् मैं तो यह कहती हूँ कि जिसने कभी विपत नहीं देखी उसको सम्पत का भी कुछ रस नहीं प्राप्त होता होगा।

अब भाग्यवती सबसे कहने लगी कि मैं इस मेले में तीन-चार प्रकार के क्लेश देखती हूँ सो चाहिए कि जो कोई स्नान व किसी और निमित्त को नीचे मेले में जाए वह उन क्लेशों से चौकसी में रहे।

एक यह कि यहाँ भीड़ में उचक्के लोग यात्रियों के कान और नाक तोड़ लेते हैं सो योग्य है कि कोई स्त्री पुरुष कान में कुछ गहना पहन कर मेले में न निकले। यदि निकले भी तो कानों पर कपड़ा बाँध के निकले। मैंने कल देखा कि एक पंजाबन सोने की बालियाँ पहने हुए जाती थीं कि भरे बाजार में भीड़ के प्रताप से उचक्के ने उसके कान तोड़ लिए और वह बुच्ची होकर घर में आ बैठी।

दूसरा यह है कि भीड़ में चलना बहुत चौकसी का काम है क्योंकि मैंने देखा है कि कल एक मारवाड़ी मनुष्य बड़े बल से लोगों को कुचलता और ढकेलता हुआ मेले में जाता था आगे से एक ऐसा धक्का उसको लगा कि धरती पर जा पड़ा। भीड़ इतनी बड़ी थी कि फिर ऊपर को न उठ सका और पीछे से एक ऐसा समूह लोगों का आया कि उनके पाँवों के नीचे ही कुचला गया, और भीड़ में उसका यह पता भी न लगा कि वह कब मरा और मर के उसकी हड्डियाँ कब पिस गईं।

तीसरा ऐसे मेले में अपना डेरा भूल जाया करता है सो चाहिए कि हम सब अपने डेरे का अपने-अपने मन में कोई चिन्ह बना छोड़ें जैसा कि देखो, इस चौबारे की एक खिड़की टूटी हुई है और किवाड़ इसके हरे रंगे हुए हैं और इसके सामने पुलिस की चौकी है।

चौथा यह कि यहाँ मेले में हाटों पर यात्री लोगों को सौदे सूत में

बड़ा धोखा मिलता है। मैंने कल देखा था कि एक यात्री हाट पर बैठा मूंगा ले रहा था। जो मूंगा उसके मन को भाए, भाव उनका यह तो सात रुपया तोला देता और हाट वाला दस रुपया मांगता था। इसी झगड़े में वह गाहक मूंगा छोड़ के उठ खड़ा हुआ। ज्यों-ही उसने पीठ फेरी हाट वाले ने उसी मेल के झूठे मूंगे निकाल के कहा अच्छा भाई आठ रुपए दे जाओ। जब उसने फिर भी यही उत्तर दिया कि, हम तो सात से कौड़ी ज्यादा नहीं देंगे, तो हाट वाला बोला चलो साढ़े सात तो दो? जब गाहक न फिर भी सात ही कहे तो बोला अच्छा साहेब बोहिनी का समय है, एक भले मानस से कुछ नहीं कमाया सही, लाओ तुम राजी रहो सात ही दे जाओ। उस गाहक ने मूँगे तो पहले देखे भाले हुए ही थे फिर हट के कुछ दृष्टि न की कि मूँगे वे ही हैं वा और पलट धरे हैं। लेके चल दिया। जब डेरे में आके किसी और को दिखाए तो सब झूठे निकले और तीन पैसा मोल पड़ा।

एक मैं और बात देखती हूँ कि ये लोग ब्राह्मण बने हुए, लोटा लिए, डेरे-डेरे मांगते फिरते हैं, इनसे बहुत चौकस रहना चाहिए क्योंकि इनमें बहुत ऐसे होते हैं कि यदि किसी डेरे में कपड़े, बर्तन, जूता अथवा और कोई वस्तु धरा देखें तो तुरन्त आँख बचा के उठा लेते हैं। कल की बात है कि उस सामने डेरे में कोई भिखारी भीख मांगने आया तो बाहर के बराण्डे में एक धोती सूख रही थी, डेरे वालों की आँख बचाके झट उठा ले गया।

फिर आज तड़के हमारी पिछली ओर हल्ला मच रहा था कि कोई मांगने वाला हमारे खेलते हुए छोटे से लड़के को उठा के ले गया कि जिसके हाथों में पाँच रुपए के कड़े पहने हुए थे।

मैं बड़ी चकित हूँ कि लोग अपने बच्चों को गहना क्यों पहना छोड़ते हैं? देखो कई बच्चे गहनों के कारण चुराए जाते और कईयों का प्राण घात हो जाता है, तुम सबको स्मरण होगा कि काशी में छोटेलाल की गली में के किसी वैश्य की छोटी-सी लड़की जो गहनों से लदी हुई रहती थी किसी पापी ने उठा के गला घोट दिया और गहने उतार लिए थे। फिर हमारी

ही गली में मिश्र सदासुख के बेटे को तुमने सुना था कि चार रुपए के कड़ों पर प्राण से मारा गया।

भाग्यवती की सासु बोली ऐ है बहू! क्या बाल बच्चों को लोग गहना कभी भी न पहनाया करें।

भाग्यवती ने कहा जिन गहनों से बाल-बच्चों का प्राण नाश हो, उनके पहनाने से लाभ क्या होता है? अम्मा! मैं सच कहती हूँ कि गहना तो वह पहनाना चाहिए कि जो सदा बालकों की रक्षा करे। सो वह गहना गुण और विद्या है। अम्मा! विद्या के समान कोई गहना नहीं, देखो जो कोई विद्या से हीन हो चाहे वह गहने-कपड़े से कैसा ही सजा हुआ हो उसको विद्यावानों की सभा में आदर नहीं मिलता। और जो कोई विद्या से विभूषित हो वह अत्यन्त कुरूप और गहने कपड़े से हीन होने पर भी आदर पर सकता है। जैसा कि नीतिशास्त्र में यह श्लोक लिखा है—

रूपलक्षणसंपन्नाः सुशीला कुलसम्भवाः।
विद्याहीन न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः।।

अर्थ इसका यह है कि रूप लक्षण से संपन्न और सुशील और अच्छे कुल में उत्पन्न हुए पुरुष भी विद्याहीन होने से शोभा नहीं पा सकते जैसा कि सुन्दर लाल वर्ण होने से पलास के फूल गंध से हीन होने के कारण शोभा नहीं पा सका करते।

इधर तो ये बातें हो रही थीं उधर से पंडित जगदीश जी ने आके कहा, लो, अब कुंभ के स्नान ध्यान तो हो लिए और मेला सब बिछुड़ने वाला है; कहो अब तुम सबकी क्या इच्छा है? मेले से पहले उठोगे अथवा पीछे से उठना चाहते हो?

पंडितानी ने भाग्यवती से पूछा तो उत्तर दिया कि मेले के साथ उठने में तो मार्ग में बहुत क्लेश उठाने पड़ते हैं सो योग्य है कि हम मेले से पहले ही कूच कर दें।

यह सुन के पंडित जगदीश जी ने घर को हटने का उद्यम किया और धीरे-धीरे कई दिन के पीछे काशी में आ प्रवेश किया। पंडित जी को आना सुन के सब भाई-बंधु मिलने को आए। जब कोई यात्रा की बातचीत पूछता तो पंडित जी भाग्यवती की उपमा के बिना और कुछ न सुनाते

क्योंकि उनके मन में यह मनोरथ था कि जैसे भाग्यवती ने यात्रा में निर्वाह किया उसको सुनके और लोग भी वैसा करना सीख जाएँ। जब कोई पंडितानी से गली में की लुगाई मिलने को आती तो वह भी अन्य लड़कियों और स्त्रियों की शिक्षा के लिए भाग्यवती ही की चतुराई की बातें सुनाने लग जाती कि जो उसने यात्रा में दिखाई थीं।

किसी से कहती इसने हमारे घोड़े को यों बचाया और किसी को नहाने वाले की गंजिया का वृत्तांत सुनाया। किसी को कहा कि यह एक दिन मार्ग में भूल गई थी परन्तु अपने गुण विद्या के प्रताप से रथ पर बैठ के आई। किसी को वह बात सुनाई कि इतने बड़े मेले में इसने हमको प्रधान स्थानों पर पत्र चिपका के ढूँढ़ लिया; किसी को इसकी और चतुराइयाँ सुनाईं। जो कोई सुनता, भाग्यवती की बुद्धि पर चकित होता और कहता ठीक है यात्रा इसी का नाम है, और इसमें वैसा ही निर्वाह करना चाहिए कि जैसा भाग्यवती ने किया। घर में तो सारा संसार ही चतुर बना बैठा है पर यथार्थ चतुर और बुद्धिमान् उसी का नाम है कि जो विदेश में पूरा उतरे।

एक दिन भाग्यवती ने अपने सब संबंधियों के सामने विनती की कि यदि सब की आज्ञा हो तो मैं दस-बीस दिन अपनी मां और बाप के पास रह आऊँ। एक तो मुझे उनको देखे बहुत दिन हो गए हैं। दूसरे तीर्थ यात्रा से हट के उनके दर्शन करने भी बहुत आवश्यक हैं क्योंकि वह भी मेरे तीर्थ रूप और पूज्य हैं।

सबने प्रसन्न होकर पालकी मंगवा दी और भाग्यवती अपने पिता के यहाँ आई। यहाँ इसको देखते ही मां ने छाती से लगा ली और पाठशाला में इसके आने का सन्देश भेजा के तुरन्त उसके पिता को बुला भेजा, वे सुनते ही आए और भाग्यवती के सिर पर बड़े प्यार से हाथ रखा और कहा, बेटा! बहुत दिनों से मेरा मन तुम्हारे देखने को तड़फता था। यह बड़े आनन्द की बात है कि तुम आनन्द कुशल से तीर्थ यात्रा कर आए, फिर इसकी सास और सुसरे का क्षेम कुशल पूछ के यात्रा की बातचीत होने लगी।

उसके पीछे भाग्यवती ने अपनी मां से पूछा कि अम्मा! सारे लोग मेरे

मिलने को आए पर मैं भाई लालमणि और भावज को नहीं देखती, उन्हें मेरे आने का समाचार नहीं पहुँचा अथवा कहीं बाहर गए हुए हैं?

मां ने कहा, बेटी मत पूछ लालमणि की बुद्धि पर हमको यह भरोसा नहीं था कि जो कुछ उसने किया।

बहुत दिनों से अब वह अपनी लुगाई को संग लेकर हमसे अलग जा रहा है। इसमें तो हमारी छाती ठीक ठंडी है कि वह पचास रुपया महीना का नौकर और अपने घर में अच्छा खाता-पीता और किसी प्रकार दुःख नहीं, पर हम को उसको अलग रहना तो नहीं भाता है न! बेटी हमारे यहाँ कौन से बेटे-पोते हैं कि जिनको देख के मन भरा रहे। एक लालमणि ही था, घर में था तो घर का भाग्य लग जाता था, अब बाहर जा रहा है तो वह स्थान शोभा पा रहा होवेगा, अच्छा बेटी समय का यही स्वभाव है कि सब लोग अपने-अपने सुखों के गाहक हैं।

भाग्यवती एक ठंडी सांस खेंच के बोली हाय! हाय! मेरे भाई में तो कोई बुरी बात नहीं थी, क्या भाबी ने उसके मन को बिगाड़ दिया है अथवा और कोई कारण हुआ।

मां बोली, हम झूठ क्यों कहें वह तो बड़े अच्छे घर की और सैंकड़ों स्त्रियों में बड़े ही सत्पात्र है, पर हमारा लड़का ही कुसंग के प्रताप से कुछ बिगड़ रहा है।

भाग्यवती ने कहा, हाय! हाय! अब वह इतना पंडित होकर कुसंगी हो गया है! कुसंग तो एक ऐसी वस्तु है कि किसी की भी बुद्धि ठिकाने नहीं रहने देता। सो अच्छा एक बार मैं भी उसको समझा के देखूंगी। यों कह के पालकी में बैठ लालमणि के घर गई।

लालमणि तो उस समय घर में था नहीं पर उसकी स्त्री ने ज्यों-ही भाग्यवती को पालकी से उतरती देखा झट दौड़ के छाती से लगा लिया, और बड़े आदर भाव से भीतर ले गई। आनन्द-कुशल और तीर्थ यात्रा का वृत्तान्त पूछने के पीछे बहू ने कहा क्या करूँ। तुम्हारे भाई ने मुझे सबसे अलग करके बैठा दिया है, नहीं तो कब हो सकता था कि तुम्हारा ससुराल से आना सुन के मिलने को न जाती।

भाग्यवती ने कहा, भाबी जी! तुम मेरी बड़ी भौजाई हो, चलो मैं ही तुम्हारे पास आ गई तो क्या घट गया? आप यह तो बताइए कि भाई का स्वभाव अब कैसा हो गया है?

भाबी बोली और तो सर्व प्रकार से अच्छा पर एक दो ब्राह्मणों के छोकरे उनके आगे-पीछे लगे रहते हैं, वे जो कुछ कह देते हैं तुम्हारा भाई से ही पल्ले बांध लेता है। उन्होंने ही यह सिखाया था कि तुम अपने हाथ से कमाते-खाते हो फिर क्या कारण है कि अपने मां-बाप के बीच रहते हो? अलग रहोगे तो कुछ गहना-कपड़ा भी बना लोगे, अब तो जो कुछ कमाते हो उन्हीं के हाथ देना पड़ता है फिर सब कुछ अपने ही पास रहेगा। बीबी भाग्यवती! ऐसी-ऐसी बातें सुना के हमको बड़ों की सेवा से अलग कर छोड़ा है।

यह बातें होती ही थीं कि पंडित लालमणि घर में आ निकला। उसको देख के भाग्यवती ने बहुत प्यार से राम-राम कही और आनन्द कुशल पूछा। लालमणि ने राम-राम का उत्तर तो दिया, पर जिस प्रेम से भाग्यवती उठी थी वैसा प्रेम लालमणि की बोलचाल से प्रकट न हुआ। भाग्यवती ने यह व्यवहार देख के लालमणि से पूछा, भाई! तुम लड़े बोले होगे तो मां-बाप से होगे, पर मुझ पर क्यों रूठ रहे हो? देखो, मैं कैसे प्रेम से कितने काल पीछे तुम्हारे देखने को आई, तुम भागे जाते हो! न कुछ पूछा न बताया, कहो तो सही तुम्हारा मन किधर खिंच रहा है? और मुझे यह भी बताओ कि मां-बाप के साथ तुम्हारी अनबन कैसे हो गई?

लालमणि बोला, अनबन की तो क्या बात है पर अलग रहना अच्छा होता है। सो देखो हम अपना शरीर लेकर अलग निकल आए हैं, न उनसे अन्न लिया न वस्त्र, और न कोई गहना-कपड़ा ही उनसे मांगा है, यह जो कुछ ठाठ तुम मेरे घर में देखती हो, सब अपनी ही कमाई से बनाया है। ईश्वर ने हमको चार अक्षर दिए हुए हैं उनके प्रताप से रोटी कमा खाते हैं।

भाग्यवती बोली, भाई! आप मुझ से बड़े और गुण विद्या में भी बड़ाई के योग्य हो, इस कारण मैं आपको शिक्षा तो कर नहीं सकती पर

जो बुरा न मानो तो एक बात कहूँ? आपने जो कहा कि हमने उनसे कुछ लिया नहीं, अपना शरीर लेकर अलग ही गए हैं, इसमें मैं यह पूछती हूँ कि यह शरीर आप ने कहाँ से मँगाया था? क्या किसी मेले में से अथवा देशावर से मंगाया था वा किसी गली में से पड़ा पाया था? मैं तो यह जानती हूँ कि एक शरीर तो क्या किंतु सारा संसार ही हम को माता-पिता ने दिखाया है। जो तुमने चार अक्षरों की बात कही यह भी उन्ही की दया से प्राप्त हुए हैं। यदि बाल्यावस्था में वे उद्यम न कराते तो हम तुम मूक और जड़ रह सकते थे। हाँ यह ठीक है यह सब ठाठ आपने अपनी ही कमाई से बनाया है, पर आप यह तो सोचते कि यह कमाई करने की बुद्धि तुमने कहाँ से पाई थी? भाई मैं सच कहती हूँ कि माता-पिता का हम पर बड़ा भारी उपकार है। और जो कुछ हम इस समय सुख संभोग करते हैं सब उन्हीं के उपकार का फल है। हाँ यह आपने सच कहा कि अलग रहना अच्छा होता है, पर इतना सोचना चाहिए कि मां-बाप ने जो आपकी पालना की और लिख पढ़ा के इतने बड़े बना दिया क्या उनका यही मनोरथ था कि स्याने होने पर तुम उनसे अलग हो बैठो? बुरा मानो चाहे भला, पर यह तो आपकी बड़ी कृतघ्नता है। भाई, क्या तुम उस बात को कभी स्मरण नहीं करते कि हमारे छुटपन में मां-बाप ने क्या-क्या कलेश उठा के हमको पाला था, खाने-पीने-सोने आदि व्यवहारों में आप दुखी रहे पर हमको दुखी न किया। क्या उनका यही फल है कि जब हम उनको सुख देने के योग्य और वे वृद्ध होकर हमसे कुछ टहल-सेवा की इच्छा करें तो हम उनसे अलग हो बैठें। भला कहो तो जो माली किसी रूख को फल की इछा से जन्म भर पालन करके अंत को कुछ फल न पावे उसका मन कैसा दुखी होता है? भाई! माता-पिता के उपकार के पलटे में यदि हम जन्म भर भी उनकी सेवा करते रहें तो पूरे नहीं उतर सकते। देखो मैं तुमको स्मरण कराती हूँ, मैंने सुना है कि एक बार जब तुम छः महीने के थे, तो तुम्हारी छाती में एक ऐसा फोड़ा निकला था कि जिसके अनेक उपाय करने से भी कुछ सुख न हुआ, एक दिन एक वैद्य ने अम्मा से कहा कि तुम लोन खाना छोड़ दो तो तुम्हारा बालक अच्छा हो जाए।

क्योंकि लोन खाने से तुम्हारा दूध सलोना हो जाता है और उसके पीने से बालक का लोहू बिगड़ जाता है कि जिसके कारण इस फोड़े का भाव नहीं मिल पाता। यह सुनके अम्मा ने तीन वर्ष लोन नहीं खाया था। जिसका छोड़ना मनुष्य को एक दिन भी कठिन होता है। मैं इसमें तुमको एक धनवान् का दृष्टान्त सुनाती हूँ कि जिससे तुमको माता-पिता का उपकार दिखाई देता रहे।

किसी धनवान ने अपने पिता और माता से यह अभिमान किया था कि मैं तुम्हारी बहुत सेवा करता हूँ। वे दोनों उस समय तो चुप रहे पर थोड़े दिन के पीछे उसको यों लज्जित और झूठा किया। माता बोली, बेटा आज तुम मेरे बिछौने पर मेरे संग सो रहो। जब उसने यह बात मान ली और उस रात को माता के बिछौने पर सोया तो माता सारी रात कभी उसकी छाती पर लातें रखती और कभी उसके सिर पर पांव धरती और कभी घुटने इकट्ठे करके उसके नाक और मुँह को फोड़ देती रही। सारी रात तो उसके बेटे ने तड़प-तड़प के उनींदे में काटी, जब उठने का समय निकट आया तो मां ने एक लोटा पानी का लेकर उस बिछौने पर उडेल दिया। दिन जो जाड़े के थे, वह धनवान् पानी के पड़ते ही चौंक उठा और बड़े क्रोध से माता को बोला कि एक तो मैं सारी रात मारे लातों के तड़पता रहा, दूसरा कहीं से यह पानी ऐसे जाड़े में बिछौने पर आ पड़ा तू कैसी हत्यारी माँ है कि जिसने मुझे बचाया नहीं?

माता ने हँस के कहा, बेटा! बस एक ही रात में घबरा उठे? तुम मेरी धैर्य को तो सोचते कि जो तुम्हारे छुटपन में कई वर्ष तुम को साथ लेकर सोती और तुम्हारी लातें सहारती रही हूँ। फिर बिछौना और पानी तो एक ओर रहा तुम नित्य मेरे मुख और सिर पर मल-मूत्र त्याग दिया करते थे और मैं कभी दुःख नहीं मानती थी। बस इसी बात पर घमण्ड करते थे कि मैं माँ-बाप की बहुत सेवा करता हूँ? तुम तो हमारी एक रात की सेवा का पलटा भी नहीं दे सके। यह सुनके बेटा बहुत लज्जित हुआ और समझा कि बेटा मां-बाप के ऋण से कभी नहीं छूट सकता है।

अब एक बात उसके पिता की सुनो कि एक सभा में बैठ के

अचानक उसके पिता ने कहा, बेटा! वह कौवा बैठा है। बेटा बोला हाँ पिता कौवा है। बाप ने फिर कहा, बेटा कौवा, पुत्र ने कहा हाँ कौवा! जब तीसरी बार पिता ने कहा, बेटा कौवा बैठा है तो पुत्र ने झुनझुना के कहा क्या आज आप कहीं से भांग खा आए हैं कि एक ही बात का पीछा नहीं छोड़ते?

पिता ने कहा, भांग तो नहीं खाई परन्तु तुम्हारी परीक्षा करता था कि देखूँ कितनी बार मेरे कहाए से तुम कौवा कहते हो क्योंकि एक बार छुटपन में तुमने मुझसे सौ बार कौवा कहलाया था। यह सुन के पुत्र अपनी कृतघ्नता पर बहुत लज्जावान् हुआ और माता-पिता के चरणों पर गिर के कहने लगा, सच है पुत्र चाहे सारी आयु भर टहल करता रहे पर माता-पिता का एक दिन की टहल का पलटा भी नहीं उतार सकता।

यह सुन कर लालमणि बोला कि ये बातें तो तुमने सब सच कहीं और हमने पहले भी पुराणों में बहुत पढ़ छोड़ी हैं कि माता पिता का पुत्र पर बड़ा भारी उपकार होता है, पर हमने उनके उपकार को कुछ नहीं दिया, जब मिलते हैं तो हम उनको बड़े समझ के प्रणाम करते हैं। केवल इतनी ही बात है कि हम उनके साथ रहने को अच्छा नहीं समझते।

भाग्यवती ने कहा, भाई! यदि उनके साथ रह के अपने हाथों से उनकी कुछ सेवा टहल ही न बन पड़ी तो उनका उपकार क्या माना? भाई! माता-पिता तो तीर्थ रूप होते हैं सो देखो यदि कोई तीर्थ से दूर रह के मन में प्रेम और श्रद्धा रखता रहे तो उसको तीर्थ का फल नहीं प्राप्त हो सकता।

लालमणि बोला, बीबी! मैं तो उनसे कभी अलग न होता पर वे मेरे मित्रों, श्रेष्ठ प्रेमियों को आते-जाते देख के कुढ़ते रहते थे, इस कारण मैंने इस बात को श्रेष्ठ समझा कि अलग रहना चाहिए।

भाग्यवती ने कहा, बताओ तो सही वे तुम्हारे मित्र कौन हैं? जिन के लिए तुमने अपने माँ-बाप को तज दिया, यदि वे तुम्हारे मित्र अच्छे होते तो हमारे माता-पिता कभी कुढ़ने वाले नहीं। मैंने सुन लिया है कि वे कोई ब्राह्मणों के छोकरे हैं कि जो न कुछ विद्या पढ़े और न कोई गुण रखते हैं।

सारा दिन भांग और चरण को उड़ाते, निकम्मे तुम्हारे पास बैठने के योग्य भी हैं? भाई बताओ तो इधर-उधर की व्यर्थ बातों और परायी निंदा अथवा नगर के झगड़े मुकद्दमों व कुसंग की बातों के बिना वे आपको और क्या सिखाते सुनाते होंगे?

लालमणि ने कहा, वे चाहे कुछ सुनाएं पर हम क्या उनकी कोई बात कभी पल्ले बांधते हैं? जब वे आ बैठते हैं, दो घड़ी हँसी ख़ेल में मन बहला लिया करते हैं।

भाग्यवती बोली, हाँ! यह तो ठीक है कि आप इतने बड़े ज्ञानी और शास्त्रज्ञ होके उन मूर्ख और पामरों की अनपढी-सी बातें पल्ले क्यों बांधने लगे थे, पर इतना तो हुआ कि उनके पास बैठने में लोग तुमको भी तुच्छ और हल्के गिन रहे हैं। क्या तुमने शास्त्र में यह नहीं पढ़ा कि बैर विवाह और प्रीति अपने से बड़ों और समान वालों से करना चाहिए? एक यह भी बात है कि जो कोई सदा किसी के पास बैठता है उसका गुण स्वभाव कुछ अवश्य ही प्राप्त हो जाया करता है। देखो यदि उनकी और बात कोई आपने अभी तक पल्ले नहीं बांधी तो इतना तो अवश्य मान लिया कि माता-पिता से अलग हो बैठे। जब मैं माता-पिता से मिलने आई तो गली में की कई लुगाइयों ने सबसे पहले मुझे यही बात सुनाई कि अब तुम्हारा भाई बहुत कुसंगी हो चला है। उनको तो मैंने यही उत्तर दिया कि मेरा भाई ऐसा पंडित और राज्यमान होके कुसंगी कभी नहीं होने का। पर मन में यही चिंता रही कि यह रौला कभी भाई के उन लोगों तक न पहुँच जाए कि जिनमें उनकी प्रतिष्ठा और मान बना हुआ है।

लालमणि बोला, बीबी! लोग बड़े पापी हैं कि जो दूसरे की थोड़ी-थोड़ी बात पर भी दृष्टि रखते हैं।

भाग्यवती ने कहा, भाई! लोगों की दृष्टि सबकी ओर नहीं होती, केवल उनही के व्यवहारों पर होती है कि जो कुछ प्रतिष्ठित और श्लाघ्य गिने हुए होते हैं और जिनकी बुद्धि और ज्ञान को उन्होंने अपने श्रेष्ठ जान के यह निश्चय किया हुआ होता है कि इनसे कभी कोई अनरीति नहीं होने पाएगी। सो आप ईश्वर की दया से काशी भर में प्रतिष्ठित और श्रेष्ठ गिने

जाते हो फिर आपके व्यवहारों पर लोगों की दृष्टि क्यों न रहे? आप से तो यदि राई के समान भी कोई अनरीति हो जाए लोग उसको पर्वत के समान बना के प्रकट करते हैं।

लालमणि ने कहा, बीबी! यदि लोग ऐसी चर्चा करते हैं तो अच्छा फिर जैसे तुम कहती हो वैसे ही मान लिया जाएगा परन्तु पहले तुम पिता जी को यह पूछ आओ कि यदि मैं उनके पास चलूँ तो वह अब मुझे यह कह के लज्जावान तो नहीं करेंगे कि हमारे बिना निर्वाह न हो सका, अन्त को हमारे ही घर आना पड़ा।

भाग्यवती बोली, भाई जी पूछने की क्या बात है, तुम यह तो विचारों कि पुत्रों से चाहे कैसा ही अपराध हो जाए कभी मां-बाप क्या उसको स्मृत रख सकते हैं? सो चलो वे तो पहले से ही तुम्हारे देखने को तरसते हैं, जब सामने चलोगे तुरन्त तुमको छाती से लगा लेंगे।

लालमणि, बहिन के साथ होकर पिता के चरणों पर जा पड़ा, और माता को प्रणाम कह के बोला, तुमने तो मुझे भुला ही दिया था पर बीबी भाग्यवती मुझे साथ लेकर आई है।

माता-पिता ने उसका माथा चूम के कहा, लाल जी! भुला देने की क्या बात! अपनी सन्तान पशु-पक्षियों को तो भूलती ही नहीं, फिर मनुष्य कैसे भूल जाते? हम तो इस डर से तुम को नहीं बुलाते थे कि तुम्हारा मन हमसे और भी दूर न हो जाए, क्योंकि जब किसी का मन किसी की ओर से खिंचा हुआ होता है तो उसको भली बात भी बुरी लगा करती है। सो बीबी का भला हो कि जो तुमको अपने साथ लिवाय लाई। अच्छा लो, यह तालियां सम्हालो और बहू को बुला के अपने घर में रहो; अलग रहने में लोग हँसी करते हैं।

बहू तो पहले ही से घर में आना चाहती थी, जब सुना कि घर मे सब का मेल-मिलाप हो गया है तुरन्त सासु और सुसरे के पास आ रही और सारे घर का काम-काज जैसा कि पहले था सम्हाल लिया।

अब भाग्यवती की यह बात भी सुनने के योग्य है कि उसके गुण विद्या चतुराई धैर्य सन्तोष से अधिक उसका मन शूरवीर कैसा था।

एक दिन की बात है कि उसकी मां और बाप तो किसी संबंधी की मृत्यु सुन के दो-चार दिन के लिए काशी से बाहर गए हुए थे, अकेली भाग्यवती और उसकी भौजाई घर की रखवाली में रही। इनके घर में किसी मनुष्य का न होना सुन के काशी में के चार-पाँच चोरों ने मिलके यह बात विचारी कि आज पंडित उमादत्त के घर में एक-दो लुगाइयों के बिना और कोई नहीं क्योंकि उनका बेटा लालमणि अपनी बाहर की बैठक में सोया करता है कि जो घर से बहुत दूर है। सो चलो आज रात को उस सूने घर में हाथ चलाएँ।

यह बात सोच के संध्या के समय दो चोर तो आके डयोढ़ी में छिप रहे और दो इस ताक में बाहर रहे कि जब लालमणि बैठक को चला गया देखें और घर के लोग फाटक बंद करके सो जाएँ तो उन दोनों पहले चोरों से भीतर का संगल खुलवा के चारों इकट्ठे हो जाएँगे।

जब ब्यालू के पीछे पंडित लालमणि बैठक को जाने लगा तो बोला, बीबी भाग्यवती रात अंधेरी है इस कारण मैं बैठक को भी सूनी नहीं छोड़ सकता तुम घर में चौकसी से रहना और ड्योढ़ी का संगल लगा लेना। जब लालमणि बाहर को गया तो भाग्यवती तुरन्त ड्योढ़ी का संगल लगा आई।

जब सोने लगी तो अपनी भौजाई से बोली, भाबी जी! कहो तो ऊपर के चौबारे में तुम्हारे लिए पलंग बिछा के मैं नीचे सो रहूँ। यदि तुम नीचे सोना अच्छा समझती हो तो मैं ऊपर सो रहूँ। और क्योंकि आज घर में तुम हम दोनों ही हैं और नीचे ऊपर दोनों स्थान में एक-एक का होना आवश्यक है। फिर कहा, रात बहुत अंधेरी है इस कारण एक-एक दियासलाई की डिबिया अपने पास अवश्य रखनी चाहिए और रात को एक-दो बार उठ के भीतर बाहर ताक लेना भी आज बहुत आवश्यक है।

भाबी बोली, तुम ऊपर जाओ और नीचे मैं रहूँगी, क्योंकि यदि कुछ काम पड़ेगा तो तुम किसी पड़ोसी का नाम लेकर भी पुकार सकोगी। मैं बहू होकर किसका नाम लूँगी और मुझे ऊँचे बोलना योग्य नहीं।

भाग्यवती बोली, अच्छा! मैं ऊपर जाती हूँ। तुम दिया हाथ में लेकर

एक बार ड्योढ़ी को फिर देख लेना। जब भाग्यवती ऊपर को गई तो उसकी भाबी अंधियारे का भय करे ड्योढ़ी में न जा सकी और यह सोच के कि ड्योढ़ी का संगल तो सांझ से ही लगा हुआ है खाट पर पड़ रही।

चोर तो ताक ही रहे थे, जब देखा दोनों सो गई हैं तो ड्योढ़ी का संगल खोल के उन दोनों को भी भीतर बुला लिया कि जो बाहर खड़े थे। ड्योढ़ी के फाटक बोलते ही भाग्यवती की तो आँख खुल गई और सावधान हो बैठी पर बहू को सोती पाके दो चोर भीतर के दालान में जा घुसे कि जहाँ भाण्डे-बरतन और गहने-कपड़े रखे जाया करते थे। और दो चोर ड्योढ़ी में इस आशा में खड़े रहे कि जब वे भीतर से कुछ गहना-कपड़ा पकड़ावेंगे हम अलग करते जाएँगे। भाग्यवती ने जब देखा कि नीचे के दालान में चोर घुस रहे हैं तो पहले इस भ्रम से कुछ मन में डरी कि यदि मैं इनके पास जाऊँ तो कोई शस्त्र न चला बैठें, पर फिर फुरती से उतरी और उस दालान के फाटक बंद करके बाहर का ताला लगा दिया कि जहाँ वे चोर घुस रहे थे। जब ड्योढ़ी के चोरों ने देखा कि भीतर से हट के कोई नहीं आया तो एक उनमें से ऊपर को चढ़ा। भाग्यवती जो ताला लगाने के पीछे उस समय लों अभी नीचे ही खड़ी थी तुरन्त उस चोर के पीछ-पीछे हो ली। ज्यों-ही चोर ने चौबारे में पाँव रखा भाग्यवती ने बाहर का ताला लगा के ऊपर ही बन्द कर दिया। और अब उस चौथे की ताक में लगी।

चौथा चोर इस चिंता में था कि जो कोई भीतर गया हट के क्यों नहीं आया? इतने में भाग्यवती ने भाबी को पुकारा कि नीचे के दालान में जो खलबल हो रही है भाबी देखना! कोई कुत्ता तो नहीं? और यह कहा कि तुम ऊपर आ जाओ तो मैं नीचे उतर के देख-भाल आऊँ भीतर क्या हो रहा है। जब भाबी ऊपर गई तो भाग्यवती ने उन तीनों चोरों का भीतर बंद कर देना सुना के समझाया कि एक इनका संगी ड्योढ़ी में खड़ा है, कोई ऐसी युक्ति निकालनी चाहिए कि जिससे वह भी पकड़ा जाए।

फिर दोनों दीया जलाने का बहाना बना के इस इच्छा से घर से बाहर निकलने लगीं कि जब यह चौथा चोर भी भीतर जा घुसेगा तो बाहर का

ताला लगा देंगी और चौकीदारों को बुला लेंगी। जब ये दोनों ड्योढ़ी में आईं तो भाग्यवती ने ताड़ लिया कि चोर के हाथ में लाठी-डंडा-शस्त्र कोई नहीं, सूने हाथ भीतर वालों की बाट देख रहा है तब तो लपक के उसकी टाँगें जा पकड़ीं और बोली, भाबी! लेना, मैंने इस म्लेच्छ को पकड़ लिया है।

यह सुन के बहू भी उसको लिपट गई, और दोनों खैंच कर आंगन में ले आईं! उस समय चोर ने चाहे बहुत ही हाथ-पाँव मारे और दोनों लुगाइयों को काट-काट खाया पर इतना सामर्थ्य कहाँ था कि छूट सकता। इसके पीछे भाग्यवती ने अपना दुपट्टा उतार के उस चोर के हाथ बाँधे और पाँव बाँधने के लिए अपनी भावज का दुपट्टा लिया। फिर चौबारे पर से एक लेजू[1] लाके बोली भाबी! लो मैं इस लेजू से इसके हाथ पाँव बाँध के लोगों को बुलाती हूँ। और तुम अपना दुपट्टा खोल के ऊपर ले जाओ। ज्यों-ही भाग्यवती ने बाहर के द्वार पर खड़ी होकर दो-चार बार चोर-चोर पुकारा झट गली में से दस-बीस मनुष्य और पाँच-चार कान्स्टिेबल इकट्ठे हो गए। भाग्यवती ने तुरन्त दियासलाई निकाल के चांदनी की और वह बँधा हुआ चोर लोगों के आगे किया। चाहे पुलिस के लोग उस चोर से कुछ बाढ़ी[2] लेकर इस बात को झूठ-मूठ बनाना चाहते थे पर भाग्यवती ने कानून के रू से उन ही को झूठे बनाया। इतने में बैठक पर से पंडित लालमणि भी चोरी का नाम सुनके भागे आए और लुगाइयों के कहने से उन तीन चोरों को भी ताले के भीतर से निकाल के लोगों के सामने किया।

भोर होते ही कोतवाल पहुँचा और सरकार में अपनी बहादुरी जतलाने के लिए पंडित लालमणि से कहने लगा कि पंडित जी! यदि तुम एक कागद पर यह लिख दो कि चोरों को कोतवाल साहब ने पकड़ा है तो अच्छा, नहीं तो तुम्हारी बहू और बहिन को कचहरी चढ़ना पड़ेगा।

लालमणि ने यह बात अपनी बहिन भाग्यवती को सुनाई तो उसने कहा लिख देने की क्या बात है, कोतवाल साहब आप ही सरकार में जो चाहे सो कह दें और यदि कचहरी जाने की हमको कुछ आवश्यकता होगी तो देखा जाएगा।

1. लेजू व रस्सा भी कहते हैं।
2. घूँस या रिश्वत।

कोतवाल ने जब देखा कि यहाँ मेरी कोई बनावट भी चल नहीं सकेगी तो भाग्यवती की बुद्धि चौकसी, दृढ़ता, फुरती, चतुराई और शूरवीरता की उपमा लिख के चोरों का सरकार में चालान किया।

साहिब मजिस्ट्रेट ने भाग्यवती की उपमा सुनके सैशन में रिपोर्ट की। सैशन से भाग्यवती के लिए एक सर्टिफिकेट और पाँच सौ रुपया इनाम आया कि जिसको लेकर भाग्यवती ने बड़ी दूर दृष्टि से काशी से बाहर एक कुआँ बनवा दिया कि जहाँ पंचकोषी करते हुए चारों देश के लोग विश्राम करते और भाग्यवती की शूरवीरता का समरण किया करते हैं।

उन चोरों के संबंधी तो अब उस गली के बैरी बन ही गए थे कभी किसी का घर लूटते और कभी किसी का ताला तोड़ लेते थे। एक दिन की बात है कि उस गली में के किसी वैश्य के यहाँ चोरी हुई कि जहाँ भोर होते ही कोतवाल आ बैठा। उस दिन पंडित उमादत्त और लालमणि तो घर में नहीं थे पुलिस के लोगों ने कुछ झाड़ने के लिए भाग्यवती के यहाँ कहला भेजा कि तुम्हारे घर की तलाशी ली जाएगी।

भाग्यवती की माँ और भौजाई तलाशी का नाम सुन के कुछ उदास सी हुई और बोलीं, हाय! यह तो बड़ी बुरी बात है कि हमारे घर की तलाशी हो। हाय! तलाशी में तो घर का परदा उड़ जाता है। बेटी भाग्यवती! हम तो इन सिपाही लोगों के साथ बोल नहीं सकतीं, गली में से किसी मनुष्य को बुला लो कि कुछ दे दिला के इन काले कपड़े वालों का मुँह काला कर दिया जावे।

भाग्यवती ने कहा, अम्मा! आप इतना उदास क्यों होती हो? अंग्रेजी अमलदारी में बड़े-बड़े घरों की तलाशी हो जाती है इसमें परदा उठाने की क्या बात है। देखो, इसी गली में बंदा कहार के घर में चोरी होने से लाला किरोड़ीमल सहिजराम के घर की तलाशी हुई कि जो सरकार में असेसर माने हुए थे, फिर उनके घर का परदा क्यों न उठ गया? इन सिपाहियों से पहले मैं एक बात पूछती हूँ फिर योग्य हुआ तो कुछ दे दिला के भी देख लेंगी।

भाग्यवती तो वहाँ की बेटी थी। आवश्यक काम के लिए किसी से बोलने और बाहर आने का कुछ डर नहीं समझती थी, तुरन्त अपने द्वार पर आ के बोली, हमारे घर की तलाशी लेना कौन चाहता है? क्या इस

वैश्य को हमारे घर पर कुछ भ्रम है अथवा तुम सिपाही लोग नाहक हम औरतों को तंग करना चाहते हो?

वैश्य बोला, बीबी जी! मुझ कंगाल की क्या सामर्थ्य जो मैं आपके यहाँ की तलाशी कराऊँ? मुझे तो आपके घर पर कुछ शक[1] नहीं, यह सिपाही लोग जबरदस्ती मुझे आपके यहाँ ले आए हैं।

भाग्यवती बोली, क्या जमादार जी? आपने हमारे घर की बदनामी, या बदमाशी किसी मिसल में लिखी देखी है, या आपको खुद ही हमारे घर पर कुछ शक हुआ है कि जिसके सबब हमारी तलाशी लोगे? अच्छा हमको सरकारी हुकुम से कुछ उजर और इनकार नहीं पर आप हमको इतनी बात एक कागज पर लिख दें कि हम अपने आप इस घर की तलाशी लेते हैं। और यह भी बता दें कि यदि हमारे घर से चोरी का कुछ माल बरामद न हुआ तो हम हतक की नालिश किस पर करें?

भाग्यवती के मुख से यह कानूनी बातें सुन के पुलिसवालों की चौकड़ी भूली और बात टालने के लिए उस बनिए को कहने लगे कि क्यों रे? बेईमान! अब मुकरता है, तू ही तो हमको इनके यहाँ लाया था अहमक। कभी ऐसे इज्जतदारों की तलाशी ली जाया करती है? कि जिन पर न कुछ सरकार को जन[2] और न रियाया को शक, चल तुमने नाहक हम को नादिम[3] किया। यों कहते हुए चल दिए।

अब भाग्यवती अपने माँ-बाप की प्रसन्नता से घर में रहती थी कि इतने में उसके स्वामी मनोहरलाल इसके लिवाने को आ निकला। मां-बाप ने रो-रो के भाग्यवती को छोड़ा और कहा बेटी शीघ्र-शीघ्र अपने सुख का संदेश भेजती रहा करो, हमारा तो मन तुम्हारी ही ताक में लगा रहता है।

जब भाग्यवती ससुराल में आई तो सासु ने दौड़ के छाती से लगा ली और कहा, बहू! तेरा सुसरा कई दिन से दुखी पड़ा है, बार-बार यही कहता था कि मेरी भाग्यवती को बुला दो, न जाने अब शरीर रहे वा न रहे, मैं एक बार दृष्टि भर के उसको देख लूं।

1. वैश्य की बोली—शक अथवा संदेह
2. फारसी पढ़ो की बोली—ज़न अर्थात् संदेह
3. शर्मिन्दा।

भाग्यवती बोली, ऐय्या जी! उनको ईश्वर सदा प्रसन्न रखे, वे तो हमारे आश्रय हैं। मेरा मन तो सदा उनके चरणों में ही लगा रहता था, पर क्या करूँ बहुत काल पीछे जाने के कारण कई महीने वहां रहना पड़ा। आप यह बताइये कि बाबा जी को क्या कष्ट है और उनकी औषधि कौन-सा वैद्य करता है?

सासु बोली, बेटी! उनको कफ बहुत रहती है, और इसी की अधिकता से थोड़ा-थोड़ा अब ताप भी शरीर पर बना रहता है। वैध की क्या बताऊँ पहले तो पंडित धरणीधर जी कुछ औषधि करते थे और उससे थोड़ा सुख भी दिखाई देता था पर जब से उन्हें किसी सेठ ने काशी से बाहर बुलाया लिया है तब से लक्ष्मणदास वैरागी की औषधि खाते हैं। वह परसों से एक चटनी बनाके दे गया है पर उसके खाने से कुछ फल नहीं प्रतीत होता, क्या जाने ईश्वर की क्या इच्छा है।

भाग्यवती बोली, हाँ सच है! वृद्धावस्था में कफ का बहुत बल हो जाता है पर यह बहुत बुरी बात हुई है कि वैद्य धरणीधर जी बाहर चले गये। मैंने सुना है कि वे चिकित्सा शास्त्र में बड़े निपुण और कई स्थानों में उनका इस विद्या के प्रताप से बड़ा भारी मान हुआ है। उनके हाथ में भी बड़ा यश सुना जाता है और स्वभाव बहुत कोमल है। यदि कुछ दिन उनकी औषधि की जाती तो शीध्र ही कुछ अवश्य सुख हो जाता। यह जो आपने वैरागी बताया मैं इसको बहुत दिनों से जानती हूँ, यह तो न कोई विद्या पढ़ा हुआ है और न किसी रोग को पहचान सकता है, मेरी जान में आपने यह अच्छा नहीं किया कि उस कुपढ़ के हाथ की औषधि बाबा जी को खिलाने लग गई हो।

सासु बोली, बहू! हमारी गली में तो सब लोग उसी की बड़ाई करते हैं और जब किसी को कुछ खेद होता है तो भाग के उसी के पास जाता है। मैं यह भी देखती हूँ कि बहुत लोगों को उसकी औषधि से सुख भी हो जाता है। हाँ इतना ठीक है कि उसका स्वभाव बहुत क्रूर और रोगी को दबकता झिड़कता बहुत रहता और अपनी चिकित्सा के घमंड में बड़े-बड़े धनवानों का निरादर कर देता है पर कोई-कोई धातु जो उसके

पास बहुत अच्छी बनी हुई है रहती है इस कारण लोग उसका सब कुछ सहार लेते हैं।

भाग्यवती ने कहा, माँजी! लोगों को इस बात का ज्ञान नहीं कि उसमें विद्या कितनी है। वह तो बड़ा ही मूर्ख है। यदि दैवयोग से उसकी दी हुई औषधि से किसी को कुछ फल भी हो जाए तो बुद्धिमान् उसके हाथ से कभी कोई औषधि नहीं खाएंगे। क्योंकि लिखा है कि जिस वैद्य को रोग की पहचान और कोई विद्या प्राप्त नहीं उससे रोगी को सदा बचते रहना चाहिये। जो आपने स्वभाव की क्रूरता बताई यह भी बड़ा भारी औगुण है। यदि वैद्य का स्वभाव कोमल और रसीला हो तो रोगी के मन को औषधि से अधिक शांति देता है और वह निश्चय कर लेता है कि इसके हाथ से मेरा रोग अवश्य दूर हो जायेगा। और जिस वैद्य का स्वभाव क्रूर होता है उससे रोगी का मन छिन्न-भिन्न हो कर उलटा अधिक रोगी हो जाता है। जो आपने कहा उसके पास धातुएँ बहुत अच्छी बनी रहती हैं, मेरी जान में तो जो लोग धातुओं का सेवन करते हैं वे अपना विनाश आप ही कर लेते हैं क्योंकि धातुओं के सेवन से जितना फल बहुत शीघ्र और अधिक होता है उतनी ही शीघ्र और अधिक उनसे हानि भी होती है। मैंने तो बुद्धिमानों से यह सुना हुआ है कि धातु चाहे कैसी ही श्रेष्ठ और शुद्ध बनी हुई होवे, परन्तु जब लों काष्ट औषधि से काम निकले धातु को कभी ग्रहण न करे। पंडितानी बोली, बहू! फिर बताओ कि पंडित जी की चिकित्सा के लिए किस वैद्य को बुलाना चाहिए?

भाग्यवती ने कहा, यदि मेरा कहना मानती हो तो अंग्रेजी डॉक्टर को बुला लेना चाहिए क्योंकि ये लोग एक तो विद्यावान् होते हैं और दूसरी उनके पास औषधि सब बनी बनाई धरी रहती हैं। मैंने कई बार देखा है कि यदि उनके यत्न से कुछ फल नहीं होता तो हानि भी किसी को नहीं होती। एक यह बात उनमें क्या ही अच्छी होती है कि औषधि खाने-पिलाने के समय उनके यहाँ नियत किया हुआ होता है। जिस समय पर रोगी को देखना और औषधि का देना नियत है वह समय कभी आगे-पीछे नहीं पाता और न रोगी को उनकी बाट देखनी पड़ती है।

पंडितानी ने कहा, यह तो सच है पर जिन दिनों में यह डॉक्टर लोग अभी हमारे देश में आए नहीं थे उन दिनों में क्या सब रोगी मर ही जाते थे? बहू! अब अंग्रेजी राज्य के आने के कारण और सब खान पहिरान बोल-चाल आदि व्यवहार जो हम लोगों को उन्हीं के अच्छे लगने लगे हैं इस हेतु से तुमने चिकित्सा करानी भी उन्ही से अच्छी कह दी; भला बता तो हमारे यहाँ जो चिकित्सा शास्त्र के सहस्रों ग्रंथ हैं वे सब व्यर्थ है?

भाग्यवती बोली, है है! मैंने यह बात कब कही है कि डाक्टरों के बिना सब रोगी मर ही जाते और हमारे यहाँ का चिकित्सा शास्त्र व्यर्थ है मैं तो उलटा लोगों को ये समझाती रहती हूँ कि हम जो हिंदी लोग हैं तो हमारे लिए वैदगी भी हिंदी ही अनुकूल पड़ती है। क्योंकि हिंदी वैदगी में जो जो औषधियाँ लिखी हैं वे हिंद में बसने वाले लोगों के स्वभाव और शक्ति के समान हैं। और जो यूनान और इंगलिस्तान के लोग हैं उनके लिए उनके स्वभाव और शक्ति के समान यूनानी और डॉक्टरी वैदगी लिखी है। जैसा कि मैंने कई बार देखा है कि जिस एक रत्ती यूनानी औषधि से काबली आदमी को एक दस्त आता है तो उससे हिंदी आदमी को पाँच-सात दस्त हो जाते हैं और जिस हिंदी औषधि का एक टंक खाने से यहाँ के मनुष्य को दस दस्त हो उसके दो टंक से भी काबली आदमी का कुछ नहीं बिगड़ता। कारण इसका यह है कि जिस देश का उत्पन्न हुआ मनुष्य हो उसको उसी देश का जल पवन औषधि जितना अनुकूल और सफल पड़ता है उतना दूसरे का नहीं। अम्मा! हमारे यहाँ के चिकित्सा शास्त्र में तो कुछ दोष नहीं पर आश्चर्य यह है कि हमारे वैद्य लोग उसके पढ़ने का परिश्रम नहीं करते। बहुत तो ऐसे हैं कि उस लक्ष्मणदास वैरागी की नाईं सुनी सुनाई जड़ी बूटी और धातु-कुधातु खिला के रोगी का सत्यानाश करा देते हैं और बहुत ऐसे हैं कि गुरु-गुसाईं को तो मिले नहीं, अपनी ही बुद्धि से किसी छोटी-मोटी पोथी को पढ़ के मन भाई सोंठ-जवायन खिला के मूर्ख लोगों में वैद्य कहलाने लग गये। इस हेतु से मैंने कहा था कि ये डॉक्टर विद्या को पढ़ते रहते और फिर कई स्थानों में परीक्षा देकर रोगियों की चिकित्सा करने लगते हैं सो चाहिए कि पंडित

जी की औषधि भी इनसे ही कराई जाए।

पंडितानी ने कहा, हाँ, बहू यह तो ठीक है कि ये लोग विद्या बहुत पढ़े हुए होते हैं और उनसे सुख भी बहुत लोगों को हो जाता है पर क्या करूँ हमारे पंडित जी तो उनके हाथ से औषधि खानी नहीं मानेंगे। बेटी वे जो ब्राह्मण से बिना किसी के हाथ का जल तक भी नहीं पीते, फिर डॉक्टर के हाथ की गीली सूखी औषधि कैसे खा सकेंगे?

भाग्यवती ने कहा, हाँ! उनका आचार तो ऐसा ही कठिन है परन्तु औषधि को खाने में उनको हठ नहीं करनी चाहिये क्योंकि यदि शरीर रह जाएगा तो आचार-विचार फिर भी हो सकता है। एक बात मैंने यह भी सुनी हुई है कि विपत्काल और रोग दशा में आचार का त्याग देना कुछ वर्जित नहीं होता। सो मैं निश्चय करती हूँ कि यदि पंडित जी को ये बातें समझाओगी तो वे डाक्टर की औषधि से सिर नहीं फेरेंगे।

पंडितानी ने पंडित जी के पास जा के भाग्यवती की कही हुई सब बातें सुनाईं। पंडित जी ने एक-दो बार तो सिर फेरा, पर फिर कहा अच्छा तुम जानो जिसको चाहो बुला लो, शरीर रहेगा तो कुछ प्रायश्चित कर-करा के फिर शुद्ध हो लेंगे।

डॉक्टर साहब के आने से पाँच-सात दिन में कफ और ज्वर की तो निवृत्ति हो गई पर पंडित जी की अवस्था जो नब्बे वर्ष के निकट पहुँची हुई थी इस कारण शरीर में कुछ बल न हो सका। निर्बलता बुरी होती है, खाया-पिया कुछ पचता नहीं था, अंत को भूख बंद होकर साँझ के समय पंडित जगदीश जी का काल हो गया। उसी समय बस भाई-बंधु और गली की लुगाइयाँ इकट्ठी हो कर रोने और छाती पीटने लगीं। और भाग्यवती के जेठ और जेठानियाँ और मनोहर और उसकी बहिन देवकी सब मिलके रोने और अत्यन्त दुखी होने लगे। यद्यपि भाग्यवती का प्रेम भी अपने सुसरे में कुछ थोड़ा नहीं था। पर और लोगों के नाईं ऊँचे शब्द से रोना और छाती पीटना अच्छा नहीं जानती थी। अपने सुसरे से बिछड़ने का शौक और दुःख तो चाहे सब से अधिक था पर उसको अन्य बहुओं के समान रोती और हल्ला मचाती न देख के कई लुगाइयां यह भी बोल उठीं

कि ऐ हैं री। इस भाग्यवती को अपना शरीर कैसा प्यारा है कि जो अपने सुसरे के मरने पर छाती पीटना तो एक ओर रहा परन्तु आँखों से आंसू तक भी नहीं बहाती। भाग्यवती चुपचाप सबकी बातें सुनती जाती पर उस समय किसी को कुछ उत्तर देना अच्छा न समझती थी। जब दिन उगा तो लोक और वेद की रीति से पंडित जगदीश जी का बड़ी धूमधाम से विमान निकाला और जैसा कि योग्य था यथाशक्ति धन पदार्थ भी मन खोल के लगाया। जो जो काम शास्त्र के अनुसार थे उनमें तो भाग्यवती चुप रहती पर जब कोई व्यर्थ धन लुटाने का अथवा लुगाइयों का ठहराया हुआ सामने आता तो अवश्य रोक देती थी। जब ग्यारहवें दिन सब कर्म क्रिया हो चुके तो सारे परिवार को बैठा के भाग्यवती ने कहा, मैं सबसे छोटी और सबकी दासी होने के कारण कह तो कुछ नहीं सकती पर यदि मेरी विनती मानो तो दो-तीन बातें आज से बंद कर देनी चाहिये।

एक यह कि जिस घर का कोई मर जाये दसाही के पीछे वहाँ रोना और छाती पीटना न हुआ करे। चाहे ईश्वर की भावी को सिर पर धर के मरने पर रोना तो कभी भी श्रेष्ठ नहीं पर दसाही के पीछे अवश्य बंद कर देना चाहिए।

दूसरी यह है कि मृतक के घर की स्त्रियाँ जो वर्ष दिन पर्यन्त मैले वस्त्र और मलीन आचार रखती हैं यह बात भी बंद होनी चाहिये।

तीसरी यह कि मृतक के घर में जो वर्ष दिन पर्यन्त सारे नगर की लुगाइयाँ होली-दिवाली आदि त्यौहारों के दिन शोक करने जाती हैं यह व्यवहार भी बंद करने के योग्य है।

भाग्यवती की यह बातें सुन के सब लोग प्रसन्न हुए और उसी दिन सबने सोच-समझ कर इन बातों का त्याग कर दिया।

जब यह बातें लोगों ने मान लीं तो बोली कि मैं एक बात अपने देश में बहुत बुरी और देखती हूँ कि जिसका हटाना बहुत ही अच्छी बात है। वह यह है कि जब कोई वृद्ध मर जाता है तो उसके संबंधी लोग आके उसके विमान के सामने नाचते-कूदते ठट्ठे करते हुए देखे जाते हैं; भला बताओ तो यह क्या अच्छी बात है? क्या आप लोग इस बुरी रीति को

बंद करना अच्छा नहीं समझते?

सब लोगों ने उत्तर दिया कि हम तो इस रीति को भी आज से ही बंद कर देना चाहते हैं क्योंकि यह रीति न तो शास्त्र के अनुसार ही अच्छी है और न लोक रीति से ही शुभ दिखाई देती है। उसी समय सबने मिल के इस बात का भी नियम किया कि आज से लेकर किसी मृतक के आगे कोई स्त्री पुरुष कुछ ठट्ठा न करे ओर यदि कोई करेगा तो भाइयों में उसका खाना-पीना बंद कर दिया जाएगा।

अब एक दिन भाग्यवती ने अपनी सासु को उदास बैठी देख के कहा कि अम्मा! पंडित जी महाराज का परलोक हो जाना हम लोगों को बहुत उदास कर रहा है परन्तु ईश्वर की भावी यों-ही थी। यह संसार मेले की नाई है और इसमें मिलना-बिछुड़ना सदा से चला आता है। मैं यह तो नहीं कह सकती कि पंडित जी की मूर्ति कभी हम को भूल जाएगी पर अब जैसे बने संतोष करना ही उचित है। हाँ यह सच है कि चलते-फिरते मनुष्य का देखते-देखते ही छिप जाना एक आश्चर्य-सा प्रतीत होता है पर यह ठीक विचारा जाए तो आश्चर्य मरने का नाम नहीं कि जो सदा से हुआ ही पड़ा। भारी आश्चर्य तो जीने पर मानना चाहिए कि जो अनहुआ और असंभव व्यवहार हुआ दिखाई दे रहा है जैसा कि इस श्लोक से जाना जाता है—

नवछिद्र समाकीर्णे शरीरे पवनस्थितिः।
प्रयाणस्य किंमाश्चर्यं चित्रं तत्र स्थितेर्महत्।।1।।

अर्थ इसका यह है कि जहाँ एक भी छेद हो वहाँ पवन का ठहरना आश्चर्य रूप होता है और निकल जाना आश्चर्य रूप नहीं गिना जाता सो आंख-मुख-नासिका आदि नौ छेद वाले शरीर में जो प्राण रूप पवन अटक रही है इसके निकल जाने अर्थात् मर जाने में क्या आश्चर्य है? बड़ा आश्चर्य तो उसके वहाँ ठहरने का है कि इतने छेदों में वह ठहर रही है अर्थात् प्राणी मरता नहीं।

सासु बोली, बेटी! यह तुमने सच कहा पर अब मेरा मन कहता है कि संसार के जितने सुख थे सब देख लिये, भगवान की दया से

खाना-पहरना धन-पदार्थ बेटे-पोते सब कुछ मेरे घर में वर्तमान है। सो अब ऊपर के दिन ईश्वर के भजन में पूरे करूँ। अब मुझे घर की भी कुछ चिंता नहीं रही क्योंकि तुम सब अपने आप में आनन्द प्रसन्न और जगत के किसी व्यवहार से अनजान नहीं हो। मैं तुमसे आज लों प्रसन्न रही किसी प्रकार किसी ने मुझे दुखी नहीं किया। जैसे पंडित जी तुम सब को आशीर्वाद देते गये हैं वैसे ही मैं जाऊँगी। अब तुम सब अपने घर में आनन्द करो मैं अपनी वृद्धावस्था हरि के हाथ सम्हालनी चाहती हूँ, जगत का देखना मुझको सब कुछ शेष नहीं रहा।

भाग्यवती ने कहा, ऐय्या! यह तो बहुत ही अच्छी बात आपने विचारी। मनुष्य जन्म का यही फल है कि अपनी मुक्ति के लिए यत्न किया जाये। यदि आप अब धर्मध्यान में मन लगाएंगी तो इसमें हम लोगों को भी बहुत भलाई है। आप आनन्द से ऊपर के चौबारे में एकान्त हो बैठो, ईश्वर का भजन स्मरण किय करो। भोजन के और किसी आवश्यक शौच-स्नान आदि व्यवहार के समय हम सब आपकी टहल में ऊपर आ जाया करेंगी अन्य किसी सांसारिक काम में आपको कोई नहीं बुलाया करेगा। तुम चाहे सारा दिन माला फेरो और चाहे कोई पोथी पुस्तक देखती रहा करो। और जिस साधु ब्राह्मण को आप कहें हम सत्संग के लिये ऊपर भेज दिया करेंगी।

सासु बोली, बहू! पंडित जी के वियोग से मेरा मन जो उदास-सा रहता है इस कारण पहले तो मैं कुछ दिन मथुरा-वृंदावन-अयोध्या आदि धामों में वास करना चाहती हूँ फिर आके यहाँ काशी में निवास करूँगी क्योंकि यह भी एक बड़ी भारी पुरी है कि जिसकी महिमा में यह बात प्रसिद्ध है कि काशी में मरने से मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

भाग्यवती ने कहा, अम्मा! यों घूमने-फिरने को तो उदय से अस्त लों जगत् बसता है, चाहे कोई कहीं विचरे, परन्तु यदि कोई मुक्ति की इच्छा रखता हो तो उसको घर से बाहर जाना कुछ आवश्यक नहीं। हाँ मैं यह नहीं कहती कि मथुरा-वृंदावन आदि धामों मे आप न जाएं पर मैं यह पूछती हूँ कि जो भक्ति-उपासना-दान-पुण्य आप वहाँ जाके करेंगी वह यहाँ

घर में बैठे भी हो सकता है वा नहीं? देश-विदेश में फिरने के अब आप के दिन नहीं रहे, यहाँ घर में बैठके ईश्वर का ध्यान करो कि जिमसें हम लोग भी आपके दर्शन और टहल-सेवा से जन्म सफल करते रहें।

सासु बोली, बहू भाग्यवती चाहे तू हमारी बेटी और अवस्था में छोटी है पर भगवान् ने जो बुद्धि और विद्या तुमको हम सबसे अधिक दे रखी है। इस कारण मैं तुमसे पूछती हूँ कि बता तो घर में बैठे किस वि.ध से मुक्ति प्राप्त हो सकती है क्योंकि मेरे चित्त में भी यही वासना है कि कोई सुगम उपाय मुक्ति का प्राप्त हो जाये।

भाग्यवती ने कहा, ऐय्या! मैं तो आपकी दासी हूँ; यह तुम्हारी दया है कि जो बुद्धि विद्या की मुझे बड़ाई देती हो पर अच्छा जो कुछ मैंने श्रुति स्मृति और उत्तम लोगों के मुख से सुना है वह आपके पास प्रकट कर देती हूँ, सुनिये।

मुक्ति वह पदार्थ है कि जो परमात्मा की प्रसन्नता के बिना किसी को प्राप्त नहीं हो सकती, सो जहाँ लों हो सके मनुष्य उसकी प्रसन्नता का यत्न करता रहे सो उसकी प्रसन्नता न तो मोल ही बिकती है कि कुछ धन-पदार्थ लुटाया जाय और न किसी देश-विदेश फिरने से ही प्राप्त हो सकती है कि घर बार को तज के बाहर निकल जाये। मैंने सर्व शास्त्रों का सार मुक्ति के विषय में यह तीन बातें सुनी हुई हैं।

एक ज्ञान, अर्थात् ईश्वर को सर्व शक्तिमान सर्वव्यापी सर्वज्ञ और अपना सृजनहार जानना और उसके होने में किसी प्रकार का संशय न करना।

दूसरी भक्ति अर्थात् अपने सारे मन और सारी बुद्धि और सामर्थ्य के साथ उसमें प्रेम करना जितना प्रेम उसमें हो उतना और किसी धन स्त्री पुत्र आदि में न हो।

तीसरी वैराग्य, अर्थात् संसार के सुख भोग और आनन्द में ऐसे लीन न होना कि ईश्वर का स्मरण कीर्तन छूट जाये।

बस इन तीनों बातों के ग्रहण करने से प्राणी का अन्तःकरण पवित्र हो जाता और अन्तःकरण की पवित्रता ईश्वर की प्रसन्नता में कारण होती

है। जब ईश्वर की प्रसन्नता हुई तो फिर मुक्ति के होने में कुछ संशय नहीं होता। अम्मा! बस यही श्रुति स्मृति का सिद्धान्त और मोक्ष के विषय में परम उत्तम उपाय है। सो योग्य है कि आप और सर्व संकल्पों को तज के इस उत्तम उपाय को ग्रहण करो।

सासु ने कहा, धन्य है तुम्हारी बुद्धि। मैंने निश्चय कर लिया कि तुम लोक-परलोक के सर्व व्यवहारों को जानती हो। ईश्वर तुम पर अपनी दया दृष्टि रखे। जो बातें तुमने मुझे सुनाई एक समय तुम्हारे सुसरे ने भी मुझे यह ही सुनाई थीं। वह भी यही कहा करते थे कि परमेश्वर की भक्ति के बिना मुक्ति के लिए और कोई उपाय श्रेष्ठ नहीं और इस प्राणी को सदा ज्ञान वैराग्य से युक्त रहना चाहिये।

—o—

बीजमंत्र

भारतीय भौतिकवाद अथवा पराविद्या की प्रथम पुस्तक

लेखक
तत्वलीन महर्षि
पं. श्रद्धाराम फुल्लौरी

संपादक और प्रकाशक
बालचन्द नाहटा

मंत्री बुद्धिवादी संघ,
46, स्ट्रान्ड रोड, कलकत्ता
सन् 1945 ई.

मूल्य 1)

प्रथम बार

ग्रंथकर्त्ता

श्रीमद् पं. श्रद्धाराम जी फुल्लौरी का

संक्षिप्त परिचय

उनके पट्टशिष्य श्री. स्वामी तुलसीदेव जी द्वारा सन् 1931 ई. में लिखित

पूज्यवर श्रीमद् पं. श्रद्धाराम जी महाराज अठवंश जोशी सारस्वत ब्राह्मण थे। देश पंजाब जिला जालंधर के नगर फुल्लौरी में सं. 1894 (1837 ई.) वि. आश्विन शुक्ला प्रतिपदा में जन्मे और सं0 1938 (1881ई.) वि. आषाढ़ वदि त्रयोदशी में मुक्त हुए। केवल 43 वर्ष की आयु पाई कि जो सर्वथा देश सुधार में लगाई।

देश को कुकर्म दुराचार से हटाकर सुकर्म सदाचार में लगाने व सनातन धर्म की रक्षा के लिए उपदेश देने, निशदिन, पठन-पाठन, कथा-कीर्तन, सत्संग, ज्ञान-चर्चा, कुरीत-संशोधन, देशोद्धार के उपाय आदि से जो समय मिलता था उसमें राजा प्रजा के सुधार तथा शिक्षा के अनुपम ग्रंथ लिखते थे। यह महोपकार जीवन पर्यनत करते रहे।

आप ब्रह्म-श्रोत्री, ब्रह्मनेष्ठी, वेदशास्त्रवित्, सर्वमत-मतांतरों के मर्म-ज्ञाता, सत्पथ-प्रदर्शक, आप्तवक्ता, मर्यादा पुरुषोत्तम, सदाचार के अवतार, मोहन उपदेष्टा थे। तथा जिन महान आत्माओं ने वेद-वेदांग रचे, अनेक विद्यायें प्रकट कीं, उसी अमोघ दैवी मेघा के उच्चतर निगमागमकार हुए।[1]

1. आपकी हिंदी सेवा भी अनुपम थी। वर्तमान हिंदी के गद्य साहित्य के प्रवर्तकों में आप भी एक थे—इसका उल्लेख 'हिंदी साहित्य का इतिहास' पृष्ठ 515-17 में पं. रामचन्द्र शुक्ल ने किया।

—संपादक
(डॉ. सरनदास भनोट)

देश में भ्रमण कर सर्व वर्ण, आश्रम, मत-पंथ आदिक के मानव मात्र को दुराचार से बचाकर शुभाचार में लगाने वाला, सनातन धर्म का प्रबल युक्ति प्रमाणों से समर्थन करने वाला, ओजस्वी-प्रभावशाली यथार्थ उपदेष्टा, उन्नीसवीं शताब्दी में आपसे प्रथम पंजाब में कोई धर्माचार्य नहीं हुआ।

आप संस्कृत, हिंदी, फारसी, पंजाबी के पंडितों में अग्रगण्य लेख व भाषण में अतुल्य, आशुकवि, अद्भुत ग्रंथों के अनुपमकर्ता प्रख्यात नेता रिफार्मर होने के कारण राजा प्रजा दोनों से पूजे गये।

भारतखंड में ऐसा कोई मत नहीं था, जिसको आपने विवेचना-पूर्वक देख न लिया हो। आपके जीवनकाल में जितने नवीन मत पंथों का प्रादुर्भाव हुआ, उनके स्थापक गुरु व आचार्यों से मत विषयक निर्भय संभाषण सभ्यता से करते रहे। परन्तु प्रायः सर्वमत मानव-पात्र की एकता के बाधक और भारत के अधोपतन कारक ही सिद्ध हुए। यद्यपि जाति अनादि है, प्रत्येक द्रव्य के संग रहती है, परन्तु जाति का अभिमान मिथ्या है। एवं मत-मतांतर कल्पित हैं, इनका दुराग्रह अनर्थजनक है, क्योंकि अभिमान दुराग्रह से मानवमात्र में सहानुभूति नहीं रहती। ऐसे अनेक कारणों से आप हर समय इसी चिंता में निमग्न रहते थे कि सारा संसार-विशेषतः भारत निवासी जन जाति-पाँति, छूत-छात, पक्षपात, मत-मतांतर के दुराग्रह अभिमान में लिप्त, ईश्वर, जीव, पुनर्जन्म, नर्क, स्वर्ग के वाद-विवाद में प्रवृत्त, स्वार्थ-तत्पर, हिंसक पशु पक्षियों से भी अधिक बढ़कर मानव खाने दानव बनकर अपने ही हृदय समान जातिजन को बध करने में दया दर्द से रहित विविध अनिष्टकारी व्यसनों में चूर, अनेक भ्रांतियों में निमग्न अज्ञान अविद्या के अंधकार में डूबे, इस नर नारायण जन्म को वृथा नष्ट कर रहे हैं, अतः इस घोर पाप-अनर्थ की जड़ उखाड़ कर सत्य ज्ञान का प्रकाश करना अत्यंतावश्यक है। इसी चिंता से बाधित होकर आपको अंत समय सं. 1936-37 वि. में "सत्यामृत-प्रवाह" नामक सत्य शास्त्र लिखना पड़ा। इस अद्वितीय आगम में आपने वह सत्य विद्या प्रकट की कि जो चिरकाल से आपकी आत्मा में भरी खोलती, उछलती, परमोत्तम अधिकारी जनों के लिए प्रकाश करने को व्याकुल कर

रही थी। इसमें आपने अपने उन सिद्धांतों को लिपिबद्ध किया है कि जिनसे यह ज्ञात हो जावे कि मनुष्य को जीवन-यात्रा सुख सहित व्यतीत करने के लिए क्या जानना और क्या करना चाहिए। प्राकृतिक नियमों की धारणा से जगत् अज्ञान अविद्या के भ्रम-जाल से निकले और अंध-विश्वास व नाना मत-पंथों के दुराग्रह से छुटकर मनुष्य मात्र को एक जाति एक आत्मा अपने जैसा माने और शुद्धचरण द्वारा जीवन मुक्ति का आनन्द भोगे। शुद्धाचरण 'आत्म-चिकित्सा' से सीखे।

आपने मानव सुधार के लिए अपने जन्म-स्थान फुल्लौर और उपदेश स्थान लाहौर में "हरिज्ञान मन्दिर" स्थापित किये थे, जो अब तक जीवित हैं।

आपके कोई संतान नहीं थी, अतः आपका कुलवंश आप ही पर समाप्त हुआ। आपके अकस्मात् देहान्त होने पर समग्र देश के अतिरिक्त गवर्नमेंट-पंजाब ने भी शोक प्रकट किया था।

इस माननीय परम-पूज्य महोपकारी आप्त महापुरुष के सत्य-ज्ञान विज्ञान और आचार-विचार तथा मानव सुधार का व्यापक प्रचार होना सर्व प्रकार से अभीष्ट है।

पंडित जी के अनन्तर

पूर्वोक्त सत्गुरु श्री पं. श्रद्धाराम जी महाराज के देहान्त के अनन्तर सं. 1938 में सत्गुरु के अंतिम वाक्य पालने के लिए वाचाबद्ध होकर उनकी आज्ञानुसार मुझ तुलसीदेव नामक शिष्य ने दोनों मंदिर संभाले। उनकी उन्नति, रक्षा तथा विधवा गुरु माताजी की सेवा में प्रवृत्त हुआ।

उसी समय मैंने गुरुदेव निर्मित सत्य-शास्त्र (सत्यामृत प्रवाह) आदि ग्रंथों को छपाकर, सारे भारतवर्ष में उनका भली प्रकार प्रचार किया था। इसके साथ ही गुरुदेव के नाम पर आयुर्वेदिक औषध-सदाव्रत स्थापित किया था, जिसमें बिना फीस रोगियों का इलाज मैं स्वयं करता था और बिना कीमत औषध दान देता था। एवं उसी काल फुल्लौर के मंदिर में पुत्री-पाठशाला प्रारम्भ की जिसमें फीस व पुस्तक आदि सामान की कीमत

नहीं लेते थे। सरकारी अफसरों ने रायबुक में अति प्रशंसा की थी। फुल्लौर मन्दिर के अन्दर कूप आदिक कई नये स्थान बनवाये। एवं लाहौर के हरिज्ञान मंदिर की भूमि में शिवालय व कूप प्रथम था, शेष जितने साधारण स्थान वर्तमान में विद्यमान हैं, वे सब मैंने ही धीरे-धीरे बनवाये हैं।

इसके अनन्तर

(संपादक डॉ. सरनदास भनोट द्वारा लिखित)

श्रीमद् स्वामी तुलसीदेव जी, इन मंदिरों और स्वोद्योग द्वारा संचित अन्य संपदा की रक्षा के लिए स्थानीय प्रतिष्ठित जनों की संरक्षता में अपने गुरुदेव के नाम पर 'श्रद्धाराम ट्रस्ट' नाम से वसीयत कर सन् 1935 ई. में 80 वर्ष की अवस्था में निर्वाण प्राप्त हुए।[1] मेरा उनसे कई वर्ष पहले से ही पत्रालाप था। सन् 1930 ई. के लगभग प्रथम बार लाहौर में साक्षात्कार भी हुआ। इस समय पूज्य पं. श्रद्धाराम जी के निजी बस्ते में से उन्हीं के स्वहस्त लिखित इस 'बीज मंत्र' की कलमी प्रति पूज्य स्वामी तुलसीदेव जी की कृपा से प्राप्त कर मैंने नकल की, जो आज मुद्रित होकर पाठकों के सम्मुख उपस्थित है। यह उक्त पंडित जी महाराज की सबसे अंतिम रचना है। इसमें उन्होंने अपना सत्यामृत-प्रवाहोक्त ही बाल-बुद्धि जनों के अर्थ अत्यन्त सरल भाषा में खोलकर रख दिया है। आशा है, संसार इससे उपकृत होगा।

---

1. बाद में ज्ञात हुआ कि मुझ अकिंचन का भी उक्त वसीयत में उल्लेख है।

।।ऊँ नमो गुरवे।।

अथ सत्यधारी पुरुषों का 'बीजमंत्र' लिख्यते।

प्रथमोऽध्यायः

शिष्य-गुरु संवाद

शिष्य—हे गुरो! परमानन्द मुक्ति प्राप्त होने के निमित्त मैंने प्रथम वेद, शास्त्र, पुराण तथा जैन-बौद्ध मत के ग्रंथों को और इस्लाम तथा ईसाइयों के धर्म पुस्तकों को पढ़ा और सुना परन्तु मन को शान्ति नहीं हुई। फिर अनेक प्रकार के तप, जप, तीर्थ, व्रत, हठ को धारण किया और कई भाँति के साधुओं का संग किया परन्तु मन का संशय दूर नहीं हुआ। अब आप को सत्यधारी सुन के आपकी शरण में आया हूँ कृपा करके मुझे बताइये कि परमानन्द रूप मोक्ष की प्राप्ति कैसे होती है?

गुरु—परा विद्या के उपदेश द्वारा ब्रह्म के अपरोक्ष ज्ञान से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

शिष्य—परा विद्या किसको कहते हैं?

गुरु—विद्या दो प्रकार की होती है। एक अपरा, दूसरी परा। सो अपरा तो वह है जो स्थूल बुद्धियों के निमित्त वेदादि पुस्तकों में लिखी और परोक्ष ब्रह्म का उपदेश करती है जिस पर कई प्रकार के सन्देह खड़े हो सकते हैं। परा विद्या वह है कि जो सत्यधारी महापुरुषों के हृदय में लिखी है और अपरोक्ष ब्रह्म का उपदेश करती है जिस पर कोई सन्देह नहीं खड़ा होता और यदि हो तो टिक नहीं सकता।

शिष्य—जिसको आप अपरा विद्या ठहराते हो उसके अनुसार मुझे तो यह दृढ़ निश्चय हो गया है कि 'ब्रह्म या ईश्वर' सत्य है और जीव को पाप-पुण्य के अनुसार नर्क-स्वर्ग में जाना पड़ता है, क्या यह बात असत्य है?

गुरु—ब्रह्म या ईश्वर को तो हम भी सत्य मानते हैं, और जीव को पाप-पुण्य के अनुसार नर्क-स्वर्ग भोगता भी जानते हैं; परन्तु अपरा विद्या के अनुसर किसी को संशय रहित दृढ़ निश्चय कभी नहीं हो सकता। वैसा

दृढ़ निश्चय तो तभी होगा जब परा विद्या का उपदेश सुनोगे। यदि तुमको निस्संशय-रूप दृढ़ निश्चय हो गया है कि 'ईश्वर सत्य है' तो लो, हम तुम्हारी परीक्षा करते हैं; बताओ, ईश्वर क्या है?

शिष्य—जिसने इस चराचर संसार को रचा, वह रूप, रंग, शरीर और जन्म मरण से रहित अद्वितीय, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, शुद्ध, सर्वशक्तिमान् ईश्वर है।

गुरु—तुमने कहा, जिस ने चराचर संसार को रचा—वह ईश्वर है; हम देखते हैं कि चराचर संसार को रचा किसी ने नहीं। जैसा कि चर संसार तो सारा अपने माता-पिता अथवा वस्तुओं के स्वभाव से उत्पन्न होता आता है और अचर संसार दो प्रकार से प्रकट हो रहा है जैसा कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र, तारागण तो सदा ज्यों के त्यों सनातन से स्थित हैं और घास, तृण, वृक्ष आदिक सब अपने बीजों से प्रकट होते रहते हैं। बताओ, इनमें से ईश्वर ने क्या रचा? यदि कहो, आदिकाल में सब के माता-पिता और बीज ईश्वर ने रचे हैं तो बताओ, क्यों रचे? काहे में से रचे? उस दिन से पहले क्यों न रचे? विचित्र क्यों रचे? फिर तुम कहते हो कि उसका रूप, रंग, शरीर और जन्म-मरण कुछ नहीं, तो अच्छा फिर बताओ, वह कहाँ है? कैसा है? क्यों है? तुमने उसे कैसे पहिचाना? इत्यादि। अब बताओ, देह में जीव क्या वस्तु है जिसको पाप-पुण्य के अनुसार तुम नर्क-स्वर्ग में जाता मानते हो?

शिष्य—जिसके आश्रय देह में ज्ञान-शक्ति दिखाई देती है वह रूप, रंग से रहित देह के सर्व अंगों में व्याप्त अज-अमर वस्तु जीव है। उसी का नाम आत्मा है।

गुरु—मूर्च्छा के समय जब ज्ञान-शक्ति देह में नहीं रहती तब वह कहाँ चला जाता है और मूर्च्छा के पीछे फिर देह में कैसे और कहाँ से आ जाता है? यदि उस का रूप-रंग और देह नहीं तो उसके साथ पाप-पुण्य का संबंध कैसे होता है? और वह क्या वस्तु है जो देह से निकल के आगे चला जाता है? फिर यदि वह अज है तो ईश्वर का रचा कैसे मानते हो? और यदि रचा हुआ है तो अज कैसे हुआ?

शिष्य—आपने कहा था कि 'हम भी ईश्वर को सत्य मानते हैं और पाप-पुण्य के अनुसार जीव को नर्क-स्वर्ग भोगता जानते हैं' सो अच्छा लो,

अब आप ही बताइये कि आपका ईश्वर और जीव कौन सा है?

गुरु—हमारा ईश्वर और जीव वही है जिसे परा विद्या ने सिद्ध करके दिखाया। और सब को अपरोक्ष (प्रत्यक्ष) होने से उस पर किसी को कुछ संशय नहीं रहता।

शिष्य—कृपा करके मुझे परा विद्या का उपदेश दीजिये।

गुरु—परा विद्या सब को नहीं सुनाई जाती। केवल उसी को सुनाई जाती है जो सत्याधारी बनना चाहे और सत्यधारी उसको कहते हैं जो केवल सत्य को धारण करे।

शिष्य—सत्य किसको कहते हैं?

गुरु—जो पंच ज्ञानेन्द्रिय और आत्मा के ज्ञान में आवे उसको सत्य कहते हैं, उसके बाहर सब असत्य है।

शिष्य—मैं तन-मन-धन से सत्य को धारण करना चाहता हूँ।

गुरु—तो अच्छा, प्रथम लोकलाज, वेदलाज, कुललाज को तज के निर्भय और निःशंक तथा निर्माण होके सच्चा संस्कार करो कि जिससे तुम सत्य के नियम पालन कर सको फिर तुम को परा विद्या सुनाई जायगी।

सत्यधारी के दस नियम

1. मैं दस गुणों[1] का ग्रहण और दश दोषों[2] का त्याग करूँगा।

2. जहाँ लो हो सके अपनी कमाई से निर्वाह करूँगा।

3. अपने मंगल कार्यों के समय सत्यधारी महापुरुषों का समाज-सम्मेलन और उनका आदर-आतिथ्य सर्वदा किया करूँगा।

4. यद्यपि संपूर्ण मनुष्य अपने तुल्य हैं परन्तु सत्यधारी बंधुओं को अपने प्रिय अंग समझ कर दुःख-सुख में उनका सहायक रहूँगा।

5. अपनी कमाई का चालीसवां भाग अपने ज्ञानदाता सद्गुरु या ऐसी ही किसी संस्था को अर्पित किया करूँगा।

---

1. दस गुण-अनुग्रह, शुभ संबंध, विवेचना, प्रीति, दातृत्व, कृतज्ञता, अनृणित्व, योग्यता, ध्रुवता और भक्ति।—आत्म-चिकित्सा।

2. दस दोष-चोरी, हिंसा, परतिया, निंदा, मिथ्या गाल, क्रोध ईर्षा, मान छल, तन बच मन से टाल—शतोपदेश

6. अपने सद्गुरु या सत्संस्था और सत्यधारी बांधवों की निंदा और हानि को कभी न सहारूँगा।

7. चाहे कैसी ही विपत्ति पड़ जावे परन्तु सत्य के नियमों का त्याग नहीं करूँगा और सत् सिद्धान्तों के फैलाने में तन-मन-धन से यत्न करूँगा।

8. संसार के दुःखदायक आचार, व्यवहार तथा रीतियों के सुधारने में यत्न करता रहूँगा।

9. रोग-दशा के बिना किसी उन्मादक द्रव्य का खान-पान कभी नहीं करूँगा।

10. संस्कार कराये बिना किसी को परा विद्या का उपदेश नहीं सुनाऊँगा।

इति 'बीजमंत्रे' प्रथमोऽध्यायः समाप्तः

द्वितीयोऽध्यायः

शिष्य—हे भगवन्, मैं सच्चे मन से आपके बताये हुए सत्य के नियम धारण और पालन करने की प्रतिज्ञा करता हूँ। अब कृपा करके मुझ पर विद्या का उपदेश कीजिए। प्रथम यह बताइये कि पीछे जो आपने पाँच ज्ञान-इन्द्रियों का नाम लिया था वे कौन-सी हैं?

गुरु—कान, त्वचा, दृग, रसना और घ्राण ये पांच ज्ञान-इन्द्रियां हैं कि जिनके प्रताप से शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध इन पाँच विषयों का ज्ञान होता है।

शिष्य—ज्ञान किसका नाम है?

गुरु—जिसके द्वारा सब कुछ जाना जावे उसे ज्ञान कहते हैं और उसी का नाम बुद्धि है और वह आत्मा का गुण है।

शिष्य—आत्मा क्या वस्तु है जिसका गुण ज्ञान है?

गुरु—देह के एक अंग का नाम आत्मा है जिस को हृदय[1] कहते हैं। इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख, ज्ञान ये छः उसके गुण हैं, उसका प्रकाश सारे देह में है।

1. आधुनिक वैज्ञानिकों के मत से वह अंग मस्तिष्क है।

शिष्य—देह क्या वस्तु और काहे का बना हुआ है?

गुरु—हाड़, मांस, रोम, चर्म, वीर्य, रुधिर और प्राण इन सात धातुओं के पिण्ड का नाम देह है और वह माता-पिता के वीर्य से बना हुआ है।

शिष्य—वीर्य की उत्पत्ति किससे है?

गुरु—अन्न-जल आदिक पदार्थों सें खान-पान से वीर्य की उत्पत्ति होती है।

शिष्य—अन्न-जल आदिक पदार्थ किसने बनाये हैं?

गुरु—बनाये किसी ने नहीं; किंतु अपने बीजों से सनातन अपने आप बनतें मिटते आये हैं।

शिष्य—वे बीज संसार में कहाँ से आये?

गुरु—बीज सम्पूर्ण पदार्थों के पंचभूत का विकार है अर्थात् आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी, ये पंचभूत जो अनादि सिद्ध हैं सृष्टि के आरंभ में नाना प्रकार के अंकुर रूप बन जाते हैं; फिर धीरे-धीरे वृक्ष और फूल-फल रूप बन के बीज दशा को प्राप्त हो जाते हैं और खाने के योग्य होने से उन बीजों का नाम ही अन्न है।

शिष्य—यह अन्न वीर्य रूप बन के देह को कैसे उत्पन्न कर देता है?

गुरु—आज का भक्षण किया हुआ अन्न जब रस, रुधिर, मांस, मद, अस्थि, मज्जा रूप बन के सप्तम अवस्था में वीर्य रूप बनता है तो स्त्री की योनि में स्थित होकर नव मास में देह बन के बाहर आ जाता है।

शिष्य—वीर्य से देह और देह से वीर्य मानते-मानते तो अनवस्था आ जायगी जो युक्ति से असिद्ध है, फिर बताइये कि जगत के आरंभ में प्रथम पंचभूत वीर्य रूप बने थे वा देह रूप?

गुरु—पंचभूत को प्रथम वीर्य रूप मानना तो आयौक्तिक है; परन्तु यदि आदिकाल में पहले देह का बनना मान लें तो कोई युक्ति उस को खंडन नहीं कर सकती। जैसाकि देखो ये पंचभूत जब वृक्ष, बीज आदिक जड़ सृष्टि रूप बन चुके तो फिर अपने आप एक-एक व्यक्ति संपूर्ण चेतन देहों को बन गये कि जिनका नाम मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट और पतंग हैं। चाहे ये मनुष्यादिक पाँच प्रकार के जीव इस समय बड़े स्थूल दिखाई देते

हैं परन्तु आदिकाल में ये सब अत्यन्त सूक्ष्म[1] प्रकट हुए थे। वे सूक्ष्म जीव मिट्टी, जल, पवन तथा अनेक प्रकार के फल-फूलादि को चाटते हुए जब बड़े हुए तों उनके देह तथा मन, बुद्धि और बल आदिक भी बड़े हो गये कि जिनके प्रताप से उन्होंने अपने सुखों और भोगों के निमित्त अनेक प्रकार के यत्न रच लिये। फिर उनसे आगे गर्भ द्वारा उत्पत्ति होने लग गई।

शिष्य—यदि मनुष्य की उत्पत्ति आदि काल में पंचभूत से हुई है तो आज किसी स्थान में इन पंचभूतों से कोई मनुष्य बन जाता दिखाई क्यों नहीं देता?

गुरु—पंचभूत का यह अनादि स्वभाव है कि जब एक बार उनसे मनुष्यादि जीव अपने आप प्रकट हो जायें तो फिर उन से सृष्टि की स्थिति पर्यन्त अपने आप कोई जीव उत्पन्न न हो सके किंतु नर और नारी के संयोग से उत्पत्ति हुआ करे। क्योंकि फिर मनुष्य पशु आदि के मल-मूत्र की गंध तथा परस्पर मिलाप जन्य तप्तता और अवस्थन्तर के पड़ जाने से पंचभूत के पूर्व स्वभाव में व्यतिक्रम आ जाता है जो आदिकाल की न्याई उत्पत्ति नहीं होने देता।

शिष्य—नर और नारी का भेद कब से हुआ है?

गुरु—जब प्रथम ही पंचभूत से देह बना तो दो प्रकार का बना था एक नर दूसरा नारी कि जिनके संयोग से अब उत्पत्ति विनाश होता चला आता है।

शिष्य—नपुंसक का देह कैसा और कब से है?

गुरु—माता-पिता के वीर्य से विकार से नपुंसकत्व प्रकट होता है और वीर्य रुधिर की उत्पत्ति से पीछे इसका बनना आरंभ हुआ है।

शिष्य—कितना काल हुआ कि जब पंचभूत में से पहिले पहल जड़ चेतन देहें प्रकट हुई थीं?

गुरु—इतना तो बुद्धि में आता है कि देहादि संघात पंचभूत में से उत्पन्न हुआ परन्तु यह बात बुद्धि में कभी नहीं आ सकती कि यह सघात कब नहीं था और किस संवत् और मास में उत्पन्न हुआ। क्योंकि जैसे पंचभूत का स्वरूप अनादि है वैसे ही देहादि संघात का प्रवाह भी अनादि

---

1. मूल-शूक्ष्म।

है जिनका उत्पत्ति विनाश प्रवाहवत् सदा से होता चला आता है।

शिष्य—यदि सभी जड़ चेतन पदार्थों को पंचभूत की न्याईं स्वतंत्र पदार्थ मान लें तो क्या हानि है?

गुरु—यदि किसी वृक्ष वा शरीर को तुम स्वतंत्र पदार्थ मानते हो तो हमारे जल, पवन, पृथ्वी, अग्नि, आकाश को इन में से न्यारा कर दो और फिर दिखाओ कि पीछे वृक्ष और शरीर क्या पदार्थ बचता है। क्योंकि सब व्यक्तियों में गीलापन जल का, फूलना पवन का, पकना अग्नि का, पोलाट आकाश का, और कठिनता पृथ्वी की दिखाई देती है। फिर जड़-चेतन व्यक्तियों में जो शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध ये पांच तत्वों के पांच गुण और इनको ग्रहण करने वाले कान, त्वचा, दृग, रसना और घ्राण ये पांच तत्व की पाँच इन्द्रियाँ दिखाई देती हैं तो तुम देह को पंचभूत से भिन्न स्वतंत्र पदार्थ कैसे सिद्ध करोगे? सत्य यह है कि जड़ चेतन रूप सर्व संघात परंपरा से पंचभूत रूप ही है। फिर देखो, जहां चौबीस गुणों में से कोई एक गुण भी दिखाई देवे वहाँ पाँच तत्वों में से कोई न कोई अवश्य होता है क्योंकि गुण द्रव्य या तत्व में रहा करते हैं और द्रव्य या तत्व नाम पंचभूत का है। वे चौबीस गुण ये हैं—रूप, रस, गंध, स्पर्श, क्रिया, संख्या, परिणाम, पृथकता, संयोग, विभाग, परता, अपरता, गुरुता, द्रवता, स्नेह, शब्द, ज्ञान, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म और संस्कार। जबकि देह में ये चौबीसों ही गुण दिखाई देते हैं तब फिर इसको पंचभूत का रूप क्यों न माना जावे?

शिष्य—इनमें से और सब गुण तो जड़ पंचभूत में ठीक रहते हैं परन्तु इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख ज्ञान ये छः गुण तो केवल चेतन द्रव्य में ही रहते हैं जिसको जीव या आत्मा कहते हैं। फिर आप चौबीसों ही गुणों को पंचभूत में रहते कैसे कहते हो?

गुरु—देह से भिन्न जीव या आत्मा तो कोई वस्तु ही नहीं जिसमें तुम इच्छादि षट् गुण की स्थिति मानते हो; किंतु ये छः गुण पंचभूत में ही रहते हैं। हाँ, इतना ठीक है कि प्रतीति इनकी देह अवस्था में उस समय जा के होती है कि जब मांस, रुधिर आदिक का यथायोग्य संबंध हो जाता

है। देखो, जैसे सूक्ष्म[1] रूप से मधुर और तितिक्त रस पंचभूत में ही भरा हुआ है परन्तु प्रतीति उन दोनों रसों की उस अवस्था में जा के होती है कि जब वह पंचभूत ईख और मिर्ची के देह को धारण करें। इसी प्रकार चम्पक आदि के बीज में चाहे महा उत्कट गंध सूक्ष्म[2] रूप से तो पहले ही से भरी हुई है परन्तु प्रतीति उस की पुष्प अवस्था में जा के ही होती है क्योंकि कोई गुण तो तत्वों में साक्षात् रहता है और कोई असाक्षात्, जिसकी प्रतीति किसी अवस्थान्तर में जाके होती है। पंचभूत में गुप्त (अव्यक्त) चेतना होने का हम यह अनुमान भी करते हैं कि गोधूम चूर्ण में जो जल संबंध से चलने फिरने वाली सुर्सरी नाम चेतना न होती तो उस जंतु में कहाँ से आ जाती।

शिष्य—पंचभूत से तो सारा संसार बना हुआ है परन्तु इस का क्या कारण है कि इच्छा द्वेषादि चेतन के गुण केवल मनुष्यादि देहों में ही होते हैं—काष्ठ पाषाण आदि में नहीं होते?

गुरु—होते तो काष्ठ पाषाण आदि में भी हैं; परन्तु प्रतीति उनकी मांस, रुधिर, प्राण युक्त देह बनने के समय ही होती है। हमने कई बार देखा है कि पाषाण के तोड़ने और काष्ठ के चीरने से उस के भीतर से एक कीट निकला जो निकलते ही चलने फिरने लग गया। यदि काष्ठ पाषाण में गुप्त चेतना न होती तो मांस, रुधिर, प्राण-युक्त देहावस्था प्राप्त कीट कहाँ से आ जाता। इससे यह सिद्ध हो गया कि पंचभूत से भिन्न चेतना पदार्थ कोई नहीं किंतु देह के एक देश (हृदय या मस्तिष्क) का नाम ही जीव है जिसके इच्छा द्वेष ज्ञानादि गुण हैं।

शिष्य—हम सदा देखते हैं कि मोहन भोग से जब कृमि बनते हैं तो सब एक ही भांति के बनते हैं उससे कभी शुक; शारिका, गाय, भैंस, आदि उत्पन्न नहीं होते; किंतु इसका क्या कारण है कि पंचभूत से जब जड़ रचना हुई तब कई भांति की हुई जैसा कि मिर्ची, ईख, निम्ब, बट, पीपल आदि और जब चेतन रचना हुई तब भी कई भाँति की हुई जैसा कि मनुष्य, पशु, पक्षी आदि।

1-2. मूल-शूक्ष्म

गुरु—प्रथम तो हम यह कहेंगे कि पंचभूत के तारतम्य से यह व्यवहार हुआ है। दूसरे यह कि मोहन-भोग आदि में एक ही भांति के जीव बनने का स्वभाव हैं क्योंकि वह पंचभूत का कार्य है और पंचभूत में अनेक व्यक्तियों के बन जाने का स्वभाव है क्योंकि वह सब का कारण रूप है।

शिष्य—मनुष्यादि देहों में जो सब अंग-उपांग किसी काम के लिये बने हुए दिखाई देते हैं इस हेतु जैसे जाना जाता है कि वे तत्वों के स्वाभाविक धर्म से अपने आप ही बने किंतु किसी बुद्धिमान ने उनको यथायोग्य रीति से बनाया है। उसी को हम ईश्वर या परमेश्वर मानते हैं।

गुरु—तब तो तुम कीकर के कांटे का मुख तीक्ष्ण होना, मोरपंख का विचित्र होना, बेरी के काँटे का टेढ़ा होना आदिक व्यवहार तथा किसी मनुष्य का छः अंगुल वाला और किसी का हीन, या विकलांग वाला होना तथा किसी गाय-भैंस के मुख पर पूँछ-खुर का निशान और नितम्ब पर कान का निशान होना भी किसी काम के लिये मानते होंगे और किसी ईवर को उनके कर्त्ता जानते होंगे। हम सत्य कहते हैं कि यह सब कुछ, कहीं तो बीज के निज स्वभाव से होता और कहीं बीज में किसी विकार के आ जाने से होता है। इसमें कोई नियामक या स्थापक नहीं, यदि फिर भी तुम इनका कोई बनाने वाला मानते हो तो बताओ, क्यों बनाये? कैसे बनायें? कहाँ बनायें? कब बनायें? हम फिर कहते हैं कि इन पंचभूत के सिवाय गुप्त प्रकट और कोई पदार्थ नहीं। जहाँ देखो वहां से ही कहीं जड़ और कहीं चेतन रूप से ओत-प्रोत पूरण हो रहे हैं। जो कोई इस प्रत्यक्ष पदार्थ को असत्य या विनाशी अथवा किसी अन्य के अधीन समझता है वह मूर्ख और सत्य विचार से हीन है।

शिष्य—जिसको लोग ब्रह्म, परमेश्वर, विष्णु, नारायण और भगवान कहते हैं वह क्या और कहाँ है?

गुरु—जो कुछ है वह जगत् ही है। इस जगत् प्रपंच से भिन्न कोई अन्य पदार्थ ब्रह्म, परमेश्वर, विष्णु, नारायण या भगवान नहीं। इन नामों के अर्थ करके देखो तो भी सब इसी के निकलते हैं। जैसा कि ब्रह्म शब्द

का अर्थ महान् है; परमेश्वर का अर्थ ईश्वरों का ईश्वर अर्थात् सबका प्रेरक, विष्णु शब्द का अर्थ सर्वव्यापी, नारायण शब्द का अर्थ नरों का स्थान या नर जिसका स्थान है और भगवान् शब्द का अर्थ सर्व ऐश्वर्य-युक्त हैं, सो ये सब अर्थ इस जगत् पर ही लगते हैं। युक्ति और बुद्धि द्वारा भी इस प्रपंच से भिन्न और कोई ब्रह्म सिद्ध नहीं होता तथा वेद ने भी इसी को ब्रह्म सिद्ध किया है जैसा कि "सर्व खल्विदम् ब्रह्म" यह सब कुछ ब्रह्म ही है।

शिष्य—वेद ने तो यह भी कहा है कि "एकमेवाद्वितीयम्' एक ही है अद्वितीय ब्रह्म। फ़िर आप इस ठाठ को पंचभूतमय बता रहे हो—यह कैसे?

गुरु—जैसे कील, चक्र, घुर आदिक की भिन्न-भिन्न गिनती करें तो अनेक पदार्थ सिद्ध होते हैं किंतु सब को मिला के एक शकट बोला जाता है वैसे ही व्यष्टि-रूप से यह प्रपंच अनेक हैं किंतु समष्टि रूप से इसको ब्रह्म कहा जावे तो एक ही है।

शिष्य—आपने तो परा विद्या द्वारा प्रत्यक्ष परमेश्वर दिखा दिया किंतु अपरा विद्या ने जो जगत् से भिन्न कोई परोक्ष परमेश्वर लोगों के कान में डाला है उसका क्या प्रयोजन है?

गुरु—पीछे हम कह चुके हैं कि यह जगत् जड़-चेतन भेद से दो प्रकार का है। चेतन वह है जो इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख, ज्ञान (बुद्धि) इन छः गुणों सहित दिखाई देवे जैसाकि मनुष्य पशु, पक्षी, कीट, पतंग हैं। और जड़ वह है जो इनसे रहित दिखाई देवे जैसा कि काष्ठ, पाषाण, घट, पट और मठ हैं। चाहे बुद्धि आदिक षट् गुण तो अन्य जीवों में भी समान हैं परन्तु मनुष्य इनमें श्रेष्ठ है जो आप सुखी-दुखी हो के अन्य जीवों को भी सुखी-दुखी कर सकता है। मनुष्य फिर तीन भाँति के हैं—प्रथम उत्तम, कि जो अपने ज्ञान द्वारा सब को समान जान के सुख देना और दुःख दूर करना चाहते हैं। दूसरे मध्यम, कि जो बिना किसी लालच के दूसरे के सुख देना और दुःख हरना नही चाहते। तीसरे निकृष्ट, कि

जो बिना किसी भय के किसी को सुख देना और दुःख से बचाना नहीं चाहते। तो उत्तमों के लिये तो परा विद्या के उपदेश हैं जो अपरोक्ष परमेश्वर का रूप दिखा के ज्ञानवान के सम्पूर्ण लालच और भय को दूर करते हैं। मध्यम और निकृष्टों के लिए अपरा विद्या के उपदेश हैं जो परोक्ष परमेश्वर और स्वर्ग-नरक का लालच और भय दे के जगत् की मर्यादा स्थिर रखना चाहते हैं। वास्तव में विचारें तो परोक्ष परमेश्वर कोई नहीं।

शिष्य—वेदादि अपरा विद्या किसने रची है?

गुरु—बुद्धिमान मनुष्यों ने रची है और जिस मध्यम और निकृष्ट जनों के लिये रची है उनका बहुत अर्थ सिद्ध करती है परन्तु उत्तम लोगों का उसके साथ न विरोध है न प्रेम। वे अपनी परा विद्या में संलग्न है।

शिष्य—जब यह चराचर प्रपंच ही ब्रह्म स्वरूप है तो अब परमेश्वर के अवतार और ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और देव, गंधर्व तथा भूत-प्रेत आदिक क्या पदार्थ ठहरे?

गुरु—रामचन्द्र, कृष्णचन्द्र, आदिक शरीर जो परमेश्वर का अवतार माने जाते हैं वे सब महापुरुष थे कि जिन्होंने अपने समय में ज्ञान विद्या बल के साथ अनेक प्रकार के आश्चर्य दिखलाये। और ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र आदिक नाम सब उसी ब्रह्म या परमेश्वर के ही हैं जिस का स्वरूप पीछे बतला आये हैं। विद्वान मनुष्यों का नाम देव और संगीत विद्या में निपुण मनुष्यों का नाम गंधर्व और सम्पूर्ण प्राणियों का नाम भूत और मृत देह का नाम प्रेत है। इनसे भिन्न और कुछ नहीं।

शिष्य—भक्ति और उपासना किस की करनी चाहिये और भक्ति का स्वरूप क्या है?

गुरु—इस जगत रूप ब्रह्म में स्थित समस्त जीवों के साथ प्रेम, सहायता, रक्षा को बरतना और तन-मन-धन से सब का भला करने का नाम भक्ति[1] है।

1. चींटी से हस्ती तलक, जितने लघु गुरु देह।
सबको सुख देवो सदा परम भक्ति है येह।।
—शतोपदेश।

शिष्य—पुण्य पाप किसका नाम है?

गुरु—ज्ञान और विचार के अनुसार चलना, स्वोपकार और परोपकार में लगे रहना पुण्य और इसके विरुद्ध झूठ, चोरी, व्यभिचार के मार्ग चलना पाप है। पुण्य से स्वर्ग और पाप से नर्क प्राप्त होता है।

शिष्य—स्वर्ग-नर्क क्या और कहाँ हैं?

गुरु—सुख का नाम स्वर्ग और दुःख का नाम नर्क है। ये यहीं हैं और इसी जन्म में प्राप्त होती हैं।

शिष्य—जन्म-मरण क्या है?

गुरु—माता के गर्भ से बाहर आने का नाम जन्म और किसी रोग-शोक के प्रताप से हृदय खंड के मुरझा जाने का नाम मरण है।

शिष्य—मूर्छा, सुषुप्ति और मृत्यु के समय आत्मा के इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख-दुःख, ज्ञान कहाँ चले जाते हैं?

गुरु—ये छहों गुण आत्मा की सावधान दशा में रहते हैं। जब आत्मा में किंचित भी अस्वस्थता आती है तो ये छहों लुप्त होने लगते हैं और पूर्ण अवस्था अर्थात् मृत्यु की दशा में सम्पूर्ण लोप हो जाते हैं। आत्मा की सावधान दशा वह है कि जब मांस, रुधिर, प्राण चिकनाई आदिक सब पदार्थ देह में यथा योग्यता के साथ स्थित रहे।

शिष्य—मनुष्य का आत्मा नाना योनियां धारण करता है या नहीं?

गुरु—अवश्य करता है परन्तु इस रीति से कि प्रथम दग्ध हो के धूम, मेघ फिर जल और वनस्पति बना फिर मनुष्य, पशु पक्षी के पेट में जा के वीर्य बना, फिर गर्भ में पड़ के उन्हीं का रूप हो गया। इसी प्रकार सदा भव चक्र में घूमता रहता है। बिना यथार्थ ज्ञान के मुक्ति नहीं पाता। यथार्थ ज्ञान इसका नाम है कि अपने समेत सर्व प्रपंच को एक समझे, फिर न जन्म रहता है न मरण। जैसे नथली अपने को नथली समझे तो बनती मिटती है और सुवर्ण समझते तो बनना-मिटना नष्ट हो जाता है वैसे ही जब अपने समेत सारे संसार को पंचभूत रूप ब्रह्म समझे तो मुक्ति है और देहादि संघात समझे तो बंधन।

शिष्य—जीव को अपने कर्म का फ़ल मिलता है नहीं?

गुरु—मिलता है। परन्तु देह के रहते ही; बाद में नहीं। यद्यपि खेत बोने वाले को उस के काटने के पूर्व ही मृत होते देख के हम यह भी कह सकते हैं कि कर्म का फल नहीं मिलता; परन्तु यह नहीं हो सकता कि कर्म व्यर्थ जावे। फल उसका कर्त्ता को मिले चाहे किसी अन्य को किंतु मिलता अवश्य है। और समष्टि दृष्टि से विचारें तो वह अन्य भी उस कर्त्ता का रूप ही है।

शिष्य—एक धनी एक कंगाल होने का क्या कारण है?

गुरु—विद्या, उद्यम, बुद्धि, बल, रूप और संयोग[1] धनी होने का कारण हैं और इनके अभाव से कंगाल होता है।

शिष्य—धर्म क्या और अधर्म किसको कहते हैं?

गुरु—मनुष्य को मनुष्य धर्म में लगे रहना धर्म और पशु धर्म में चलना अधर्म है।

शिष्य—मनुष्य का धर्म क्या और पशु का धर्म क्या होता है?

गुरु—भक्ष्याभक्ष को विचार के खाना, बोल-कुबोल को विचार के बोलना, न्यायान्याय को विचार के बरतना, नीच-ऊँच विचार के चलना ये सब मनुष्य धर्म है। इससे विरुद्ध बिना विचारे बरतना पशु-धर्म है।

शिष्य—भक्ष्य-अभक्ष्य क्या होता है?

जिस वस्तु के खाने-पीने से अपने तन मन को सदैव सुख और सावधानी मिले और किसी अन्य प्राणी को कष्ट न मिले वह पंडितजनों की दृष्टि में भक्ष्य और इससे विरुद्ध सब अभक्ष्य है।

शिष्य—पंडित किसका नाम है और मूर्ख किसको कहते हैं?

गुरु—जो परा और अपरा विद्या के तात्पर्य को जाने और सबको यथाधिकार उपदेश करे उस को साधुजन पंडित कहते हैं और जो इन दोनों विद्याओं का विवेक न कर सके और अधिकार सोचे बिना उपदेश करे वह मूर्ख है।

---

1. विद्या उद्यम बुद्धि बल, रूप तथा संयोग।
षट कारण धन लाभ के, जानत हैं सब लोग।।

—शतोपदेश

शिष्य—साधु किसका नाम और चोर किसको कहते हैं?

गुरु—परा विद्या के प्रताप से जिसका नाम निःसंशय हो गया हो और तीर्थ, व्रत, दान के प्रताप से तन पवित्र हो गया हो उसका नाम साधु है और जो किसी स्वांग और वेष के आश्रय का झूठ, छल, कपट के बल से जगत् से सेवा करानी चाहे वह चोर है।

शिष्य—तीर्थ, व्रत, दान किसको कहते हैं?

गुरु—सत्पुरुषों की संगति का नाम तीर्थ और काम, क्रोध, लोभ, मद, मिथ्या, छल आदिक से मन को रोकना व्रत है। भूखे, नंगे, रोगी को अन्न, वस्त्र, औषध का देना, मानी को मान-सम्मान देना और अर्थी का अर्थ पूरा करना, विद्यादान, ज्ञानदान ये सब दान कहलाते हैं।

शिष्य—कोई लोग इस परा विद्या के उपदेश को नास्तिक मत कहते हैं; क्योंकि इसमें ईश्वर और जीव की अस्ति का निषेध है क्या उनका यह कहना ठीक है?

गुरु—नास्तिक वह होता है जो अस्ति को नास्ति और नास्ति को अस्ति कहे और आस्तिक वह होता है जो अस्ति को अस्ति कहे। सो परा विद्या तो प्रत्यक्ष पड़ी अस्ति को अस्ति कहती है और अन्य लोग इस सत्य पदार्थ को असत्य ठहरा के किसी परोक्ष नास्ति पदार्थ—ईश्वर, जीव आदि—की आस्ति बतलाते हैं जो न किसी ने देखा और न युक्ति-प्रमाण से सिद्ध हो सकता है। सो अब विचारो कि नास्तिक कौन है? हाँ, यह सत्य है कि महात्मा सद्गुरु की सेवा बिना इस विद्या का समझना कठिन है।

शिष्य—सद्गुरु का लक्षण क्या और सच्चा शिष्य किसको कहते हैं?

गुरु—जो निर्भय और निराकांक्ष हो के सत्य पद का उपदेश करे और जिसके संग से सर्व संशय दूर हो—वह सद्गुरु है। और जो लोक, वेद और कुल लाज को तज के सत्य विद्या की प्राप्ति के निमित्त सद्गुरु के सच्चे वाक्य को हृदय में धारण करे उसको सच्चा शिष्य कहते हैं। जो शिष्य अपने सन्देह हर्त्ता सद्गुरु के उपकार को भूल जावे और विमुख हो जावे वह महा पापी कृतघ्न और धिक्कार के योग्य है।

शिष्य—धन्यवाद है आपके चरणारविन्द का कि मैं आप के अमृत वचनों को सुन कर विगत-सन्देह हो गया। अब मुझे जन्म, मरण, बंध मोक्ष का कोई संशय नहीं रहा। आज मैं अपने निजानन्द में मग्न और कृतकृत्य हूँ। आपके उपदेश से मेरे उस तन-मन-धन की रक्षा हो गई जिसको मैं झूठे भय और लालच में वृथा नष्ट किया करता था—

प्रणाम! प्रणाम!! प्रणाम!!!

गुरु—यह तुम को परा विद्या का 'बीज मंत्र' सुनाया है। यदि अधिक सुनने की अच्छा हो तो 'सत्यामृत प्रवाह'[1] नामक ग्रंथ को पढ़ो जिसमें दृढ युक्तियों के साथ सत्य पदार्थ को सिद्ध किया है। किंतु एक बात सदा स्मरण रखना कि अनाधिकारी संसारी जीवों को 'आत्म-चिंकित्सा'[2] का ज्ञान कराये बिना कभी इसका उपदेश न करना; क्योकि इससे वे उभयतो भ्रष्ट हो सकते हैं।

□□

---

1. यह अगाम ग्रंथ आज से 57 वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था जो अब नहीं मिलता। इसका नया संस्करण (टिप्पणी सहित) बुद्धिवादी संघ से शीघ्र प्रकाशित होगा।

2. यह निबंध 'सत्यामृत प्रवाह' के पूर्व भाग में लगा हुआ है।